कुरुक्षेत्र

ग्रामीण विकास
को समर्पित

वार्षिक मूल्य : 70 रुपये

वर्ष 53 अंक : 1   नवम्बर 2006   मूल्य : 7 रुपये

उज्ज्वल भविष्य की ओर

विकास को समर्पित मासिक

योजना

दिसंबर 2006

पूर्वोत्तर विशेषांक

- पृथ्वी का अछूता स्वर्ग है पूर्वोत्तर।
- इस क्षेत्र में किया जाने वाला हरेक निवेश शांति और विकास के लिये निवेश होगा।
- योजना के इस विशेषांक में शामिल लेखों में पूर्वोत्तर के सभी पहलुओं और महत्वपूर्ण मुद्दों का गहन विश्लेषण किया गया है।
- विशेषांक में अग्रणी लेखकों, प्रशासकों और विशेषज्ञों के लेख शामिल हैं। इनमें प्रमुख हैं : मिज़ोरम के राज्यपाल तथा मुख्यमंत्री; पूर्वोत्तर परिषद के सदस्य आई.के. बड़ठाकुर; असम के मुख्यमंत्री के सलाहकार जयंत माधब, राज्य वित्त आयोग के अध्यक्ष एच.एन. दास आदि।
- विशेषांक का मूल्य है 10/- रुपये मात्र। कृपया अपनी प्रति सुरक्षित कराएं।

पाठक कृपया अपना आदेश स्थानीय एजेंट को दें अथवा विज्ञापन एवं प्रसार व्यवस्थापक, प्रकाशन विभाग, सूचना और प्रसारण मंत्रालय, पूर्वी खंड-4, लेवल-7, रामकृष्णपुरम, नयी दिल्ली-110066 (दूरभाष:26100207 फैक्स: 26175516) को संपर्क करें।

बिक्री तथा अन्य जानकारियों के लिये संपर्क करें:

प्रकाशन विभाग, सूचना और प्रसारण मंत्रालय, पूर्वी खंड-IV रामकृष्ण पुरम, नयी दिल्ली-110001 (दूरभाष: 26105590, तार : सूचनाप्रकाशन * बिक्रीकेंद्र) * सूचना भवन, सीजीओ कॉम्लेक्स, लोधी रोड, नई दिल्ली-110003 (दूरभाष: 23890205) * कॉमर्स हाउस, करीमभाई रोड, बालार्ड पायर, मुंबई-400038 (दूरभाष: 22610081) * 8, एसप्लानेड ईस्ट, कोलकाता-700069 (दूरभाष: 22488030) * 'ए' विंग, राजाजी भवन, बसंत नगर, चेन्नई-600070 (दूरभाष: 24917673) * प्रेस रोड, गवर्नमेंट प्रेस के निकट, तिरुवनंतपुरम-695001 (दूरभाष: 2330650) * ब्लॉक सं-4, पहला तल, गृहकला कॉम्लेक्स, एमजे रोड, नामपल्ली, हैदराबाद-500001 (दूरभाष: 24605383) * फर्स्ट फ्लोर, 'एफ' विंग, केंद्रीय सदन, कोरामंगला, बंगलौर-560034 (दूरभाष: 25537244) * बिहार राज्य कोऑपरेटिव बैंक भवन, अशोक राजपथ, पटना-800004 (दूरभाष: 2301823) * हॉल सं-1, दूसरा तल, केंद्रीय भवन, सेक्टर-8, अलीगंज, लखनऊ- 226024 (दूरभाष: 2325455) * अंबिका कॉम्लेक्स, फर्स्ट फ्लोर, पाल्दी, अहमदाबाद-380007 (दूरभाष: 26588669) * नौजान रोड, उजान बाजार, गुवाहटी-781001 (दूरभाष: 2516792) * द्वारा/पीआईबी, मालवीय नगर, भोपाल-462003 (म.प्र.) (दूरभाष: 2556350) * द्वारा/पीआईबी, बी-7/बी, भवानी सिंह रोड, जयपुर-302001 (राजस्थान) (दूरभाष: 2384483)

पत्रिका स्थानीय समाचारपत्र विक्रेताओं से भी प्राप्त की जा सकती है

वर्ष : 1 ★ मासिक अंक ★ पृष्ठ : 56

कार्तिक–मार्गशीर्ष 1928, नवंबर 2006

संपादक

स्नेह राय

संपादकीय पत्र–व्यवहार

संपादक, कुरुक्षेत्र
कमरा नं. 655/661, 'ए' विंग,
गेट नं. 5, निर्माण भवन
ग्रामीण विकास मंत्रालय
नई दिल्ली–110011
दूरभाष : 23061014, 23061952
फैक्स : 011–23061014, तार : ग्राम विकास
वेबसाइट : Publicationsdivision.nic.in
ई–मेल : dpd@sh.nic.in dpd@hub.nic.in

संयुक्त निदेशक (उत्पादन)

एन.सी. मजुमदार

व्यापार प्रबंधक

जगदीश प्रसाद

दूरभाष : 26105590, फैक्स : 26175516

आवरण

स्नेह राय

सज्जा

रजनी दवे

मूल्य एक प्रति : सात रुपये
वार्षिक शुल्क : 70 रुपये
द्विवार्षिक : 135 रुपये
त्रिवार्षिक : 190 रुपये
विदेशों में (हवाई डाक द्वारा)
पड़ोसी देशों में : 500 रुपये (वार्षिक)
अन्य देशों में : 700 रुपये (वार्षिक)

कुरुक्षेत्र

इस अंक में

★ग्रामीण भारत में लड़कियों की शैक्षिक स्थिति एक विश्लेषण	अशोक कुमार	5
★भारत में साक्षरता परिदृश्य	–	9
★ग्रामीण बच्चों के लिए शिक्षा	के.के. खुल्लर	15
★शिक्षा के माध्यम से उपेक्षितों को अधिकार संपन्न बनाने के प्रयास	मीरा कुमार	20
★बच्चों का कल्याण और सरकारी कार्यक्रम	आर.एम. धर द्विवेदी	23
★शिक्षा में गुणवत्ता के लिए शिक्षकों का प्रशिक्षण	–	26
★बाल विकास की वर्तमान स्थिति	अभिषेक रंजन सिंह	29
★बाल श्रम की विभीषिका	उमेश चन्द्र अग्रवाल	32
★बाल श्रमिक : अस्तित्व की खोज में	ब्रजेश कुमार तिवारी	40
★बालश्रम उन्मूलन के लिए आवश्यकता है वैकल्पिक रोजगार की	राकेश शर्मा	42
★सरकार की चिंता: बाल मजदूरी	सौरभ पाण्डेय	45
★भारत में बालश्रम : एक अनसुलझी समस्या	राजेश जैन	47
★बाल मजदूरी : बाल मजबूरी : समस्या एवं समाधान	आरती	49
★असंगठित क्षेत्र के श्रमिकों का कल्याण	अजय कुमार सिन्हा	51
★बाल विकास की चुनौतियां एवं समाधान	रमेश चन्द्र तिवारी	53

कुरुक्षेत्र की एजेंसी लेने, ग्राहक बनने और अंक न मिलने की शिकायत के बारे में व्यापार प्रबंधक, (वितरण एवं विज्ञापन) प्रकाशन विभाग, पूर्वी खंड–4, लेवल–7, रामकृष्णपुरम, नई दिल्ली–110 066 से पत्र–व्यवहार करें। विज्ञापनों के लिए सहायक विज्ञापन प्रबंधक, प्रकाशन विभाग, पूर्वी खंड–4, लेवल–7, रामकृष्णपुरम, नई दिल्ली–110 066 से संपर्क करें। दूरभाष : 26105590, फैक्स : 26175516

कुरुक्षेत्र में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार लेखकों के अपने हैं। यह आवश्यक नहीं कि सरकारी दृष्टिकोण भी वही हो।

मत-सम्मत

जुलाई, 06 का कुरुक्षेत्र का अंक पढ़ा। निर्विवाद रूप से यह कहा जा सकता है कि 'ग्रामीण विकास मंत्रालय' द्वारा प्रकाशित यह पत्रिका, एक ऐसी पत्रिका है जो ज्ञानवर्धक होने के साथ-साथ देश के चरणबद्ध विकास में सहयोग प्रदान करने का हुंकार भरते हुए समाज का विकास कर रही है।

जनसंख्या पर केंद्रित अंक में प्रांजल धर का लेख 'बढ़ती जनसंख्या : वर्तमान और भविष्य' को पढ़ा, जो अधिक उत्साहित व ज्ञानवर्धक था। इस लेख में जनसंख्या से संबंधित समाज की बुनियादी समस्याओं को साफ तौर से दिखाया गया है तथा उनके उपचार के लिए संभावित साधन को सुझाव के रूप में रखा गया है। वहीं मीनाक्षी सिन्हा के लेख 'स्त्री के हाथ जनसंख्या का नियंत्रण' में उन्होंने हकीकत को दर्शाया गया है। यह सच है कि औरते जब शिक्षित होती हैं और परिवार एवं समाज में उनकी स्थिति मजबूत होती है तथा जब उनका वर्चस्व कायम होता है तो जनसंख्या की वृद्धि में कमी आती है। लेकिन नारी शिक्षा को किस प्रकार से हकीकत का जामा पहनाया जाये। समाज में नारी के प्रति कैसे सही भावना को जगाया जायें? समाज में आये दिन कन्या भ्रूण-हत्या को कैसे रोका जाय? यह समस्या तथा सवाल हमारे समाज के बीच अभिशाप बनकर बैठा है। इसका निदान हमसे नहीं हो पा रहा है, क्योंकि हम भी इसमें कहीं न कहीं दोषी हैं।

अतः हमें सच का सामना करते हुए कन्या-भ्रूण हत्या पर रोक का संकल्प तथा नारी शिक्षा को बढ़ावा देते हुए समाज को एक-साथ जनसंख्या वृद्धि पर लगाम लगाने का संकल्प लेने के लिए प्रेरित करना चाहिए।

संभवतः ऐसा नहीं हुआ तो इस अनियंत्रित जनसंख्या में कन्याओं की कमी के कारण कुछ युवाओं को जिंदगी कुंआरी ही गुजारनी पड़ सकती है। यदि ऐसा हुआ तो ये कुंआरे समाज के लिए अभिशाप होंगे तथा समाज की शांति को भंग करेंगे।

अभिषेक रंजन, उत्तर प्रदेश

अगस्त 2006 का अंक हस्तगत हुआ पंचायती राज की विभिन्न संस्थाओं के बारे में जानकारी मिली। "ग्रामीण विकास में पंचायतों की भूमिका" लेख पढ़कर बहुत अच्छा लगा। लेकिन इतिहास गवाह है कि आज तक जितने महान काम हुए हैं वे सब अनुशासन में हुए हैं। पंचायतों को अधिक स्वात्तयता देने से उसमें भ्रष्टाचार भाई-भतीजावाद पैदा होगा जिससे पंचायतों के माध्यम से ग्रामीण विकास संभव नहीं है। अतः यदि पंचायतों को एक अनुशासन में रखकर उनको स्वायत्तता दी जाय तो ग्रामीण विकास अधिक होगा। आज सरकार की जितनी योजनाएं हैं वे सब पंचायत के माध्यम से लागू की जाती हैं लेकिन एक भी योजना पूर्ण रूप से लागू नहीं हो पाती है। पंचायत प्रतिनिधि और सरकारी सेवकों की मिली भगत से योजनाओं का सारा धन हड़प लेते हैं। और भोली ग्रामीण जनता वैसे की वैसे रह जाती है।

संतोष पाल, गोण्डा

मैं 'कुरुक्षेत्र' का नियमित पाठक हूं। कुरुक्षेत्र का शिक्षा पर आधारित सितंबर अंक हमारे देश की कई समस्याओं को रेखांकित करता है और बताता है कि शिक्षित होकर ही कोई राष्ट्र या समाज वास्तव में विकसित कहे जाने के योग्य होता है। प्राथमिक व बुनियादी शिक्षा के जन-जन तक पहुंचाकर ही हम उस आबादी के भविष्य का कल्याण कर सकते है, जो गरीबी रेखा से नीचे अपना जीवन-यापन करती है और जो आज भी निरक्षर है।

इस समस्याओं, उनके सभी आयामों, उपायों और समाधानों पर प्रकाश डालता हुआ प्रांजल धर का लेख 'शिक्षा, स्थिति और आयाम' काफी रोचक लगा। लेखक ने समस्या के सभी पहलुओं पर अपने विचार व्यक्त किये हैं। योग शिक्षा की शुरुआत पर बल देकर लेखक ने भारतीय परंपरा को पर्याप्त महत्व दिया है।

सत्यम कुमार, बिहार

कुरुक्षेत्र का सितंबर 2006 का अंक पढ़कर अत्यंत प्रसन्नता हुई, शिक्षा अंक के सभी शिक्षाविदों, अर्थशास्त्रियों तथा पत्रकारों ने स्तरीय एवं विश्वसनीय जानकारियां बेबाकी के साथ पाठकों के लिए प्रस्तुत की, इसके लिए सभी बधाई के पात्र हैं।

महामहिम राष्ट्रपति कलाम के विजन-2020 के सापेक्ष शिक्षा के समानांतर विकास को अमली जामा पहनाने के लिए चौदह वर्षों के अन्तराल में अनुभूत/प्रक्षेपित चुनौतियों का ब्यौरा, निस्संदेह सरकारों,

शिक्षकों तथा प्रबुद्ध जनमानस को सर्वजनसुलभ शिक्षा एवं साक्षरता के लक्ष्य को हासिल करने में मदद करेगा।

मदन राम पंचवाल, उत्तरांचल

मैं 'कुरुक्षेत्र' का नियमित पाठक हूं। कुरुक्षेत्र का शिक्षा पर आधारित सितंबर अंक पढ़ा। कुछ लेख बहुत पसंद आए, जैसे 'राष्ट्र विकास के लिए जगानी होगी नारी शिक्षा की अलख', 'शिक्षा के बदलते मानक' और 'शिक्षा: स्थिति और आयाम'। शिक्षा का प्रचार-प्रसार हमारे राष्ट्र के विकास के लिये आवश्यक ही नहीं, अनिवार्य भी है।

इस संबंध में प्राजंल धर ने युगनायक विवेकानंद का हवाला देते हुए ठीक ही लिखा है कि असली शिक्षा वही है जिससे हम विचारों का सामंजस्य कर सकें और चरित्र गठन कर सकें। प्राजंल धर को 'इतिहासबोध' और जनसत्ता में भी पढ़ता हूं। लेखक ने शिक्षा पर जो विचार व्यक्त किये हैं, वे विचार आधुनिक राजनीति विज्ञानी हर्बर्ट स्पेंसर के विचारों से मेल खाते हैं। स्पेंसर ने लिखा है कि मानव की मूल आवश्यकता शिक्षा नहीं, चरित्र है और वही उसका सबसे बड़ा रक्षक भी है।

लेकिन शिक्षा चरित्र-निर्माण में सबल रूप से सहायक हो, इसके लिये आवश्यक है कि हम अपनी साक्षरता दर बढ़ाएं, प्राथमिक शिक्षा को जन-जन तक पहुंचाएं और लैंगिक भेदों का अंत करं। तभी हम प्राचीन धर्म गुरू और प्राचीन विकसित भारत की तरह एक बार फिर ऊर्जावान ढंग से उत्थान कर सकते हैं।

'कुरुक्षेत्र' का बेजोड़ और अद्वितीय अक्टूबर अंक पढ़ा। भारत-निर्माण के महानगर लक्ष्यों पर आधारित यह अंक जहां एक ओर विकास की नई कसौटियों की परिभाषा गढ़ता है, वहीं दूसरी ओर योजनाओं के क्रियान्वयन में बुनियादी समस्याओं और व्यावहारिक कठिनाइयों को भी रेखांकित करता है। लेख सारे पढ़े और सबसे प्रभावित भी हुआ। लेकिन आपके इस अंक की आत्मा है प्रांजल धर का लेख 'वर्तमान समस्यायें और गांधीजी की प्रासंगिकता'। गांधी पर इतने विकासशील नजरिए से देखना वर्तमान समय की जबरदस्त मांग है। मुझे जिस चीज ने सर्वाधिक आकर्षित किया, वह है लेखक का इतना स्वस्थ दृष्टिकोण, जिसकी बदौलत वह गांधी की प्रासंगिकता को इतने अधिक कोणों से देख पाने में सक्षम है। भू-अधिकारों की समस्या, पर्यावरणीय चेतना, विकास की विषमता मूलकता, प्रगति का एकांगीपन, आर्थिक समृद्धि की विसंगतियां और शक्ति का अंतरराष्ट्रीय मानचित्र पर नंगा खेल; क्या-क्या नहीं है गांधी पर आधारित इस लेख में। आश्चर्य इस पर भी हुआ कि लेखक ने तथ्यों को विश्लेषणों के महासागर में कुछ यों पिरो दिया है, कि वे किसी मोती की माला के चमकते हुए रत्न मालूम पड़ते हैं। आपको धन्यवाद देने से स्वयं को रोक नहीं पाया। अंत में लेखक ने जो सवाल खड़ा कर दिया है कि 'जो नाम बच्चे-बच्चे की जुबान पर है, क्या उसका मतलब हम बड़े भी समझ पाये हैं', वह वाकई में एक संवेदनहीन हो चुके आदमी के लिये भी झकझोर देने वाला प्रश्न है। विकास का तात्पर्य कारपोरेट सेक्टर के खाए-पिए और अधाए किस्म के कसरती नौजवानों से ही नहीं है, इस विकास में उस जनता को भी शामिल किया जाना जरूरी है जो हमारे गांवों में रहती है, जिसे दो वक्त की रोटी नसीब नहीं होती और जो आज भी विकास की पहुंच से फिलहाल बाहर है। गांधी के इस देश का विकास इन्हीं गांवों की प्रगति में ही निहित है। एकता परिषद जैसे संगठनों का योगदान भी अपेक्षित है।

मनीष कुमार चौधरी, उत्तर प्रदेश

कुरुक्षेत्र का सितम्बर 2006 अंक पढ़ा। शिक्षा पर आधारित यह, अंक वास्तव में संग्रहणीय है। इक्कीसवीं सदी में प्राथमिक शिक्षा पर चर्चा किया जाना जरूरी है लेकिन हमें यह ध्यान रखना होगा कि ये चर्चायें महज दस्तावेजी बनकर न रहं जाएं।

अंक के सभी लेख बहुत प्रभावशाली लगे किन्तु प्राथमिक शिक्षा को समेटता हुआ पहला लेख वास्तव में समस्या के सभी आयामों पर प्रशंसनीय ढंग से प्रकाश डालता है। प्रांजल धर का लेख शिक्षा:स्थिति और आयाम वास्तव में काबिले-तारीफ है क्योंकि इसमें शिक्षा को पर्यावरणोन्मुखी बनाने की बात की गयी है। आज के समय में अनुकूल पर्यावरणीय स्थिति के संबंध में शिक्षा देकर बच्चों को जागरूक बनाना बेहद जरूरी है। राष्ट्रवाद, विजन 2020 और राष्ट्र विकास को समेटते हुए अन्य लेख भी अच्छे लगे। आशा है ऐसे ही लेख ज्ञानवर्धन करते रहेंगें।

रमाकान्त श्रीवास्तव, गोरखपुर

सितंबर 06 अंक पढ़ा। तमाम आलेख पठनीय हैं। प्रांजल धर जी का आलेख हमेशा की भांति काफी अच्छा बन पड़ा है। उनका आंकड़ा और प्रस्तुति की शैली दिल में विशिष्ट स्थान बना देता है। सबसे झकझोर देने वाला आलेख तो सुजीत श्रीवास्तव का 'शिक्षा एवं राष्ट्रवाद' था। वाकई में हम कैसी शिक्षा पा रहे हैं व दे रहे हैं जो व्यक्तिगत आजादी तो देती है लेकिन राष्ट्रीयता का बोधक नहीं करा पाती है। कहने का आशय है कि जिस राष्ट्रप्रेम से अभिभूत हो लोग हंसते-हंसते देश के नाम पर कुर्बान हो जाते थे आज लोगों का झुकाव भी सैन्य विभाग के प्रति अपेक्षाकृत कम हो गयी है। आखिर क्यों? देश रक्षा के नाम पर इतनी विमुखता क्यूं? ज्यों-ज्यों देश में शिक्षित जनों की सं,या में इजाफा हो रहा है, त्यों-त्यों भ्रष्टाचार की विषपेल भी बढ़ती जा रही है। नैतिकता में निरंतर लुप्त होते जा रहे हैं, आखिर ऐसी गुणवत्ता रहित शिक्षा को क्या वास्तव में शिक्षा करा जाएगा? नीति नियामको को अभी भी अपने मानक में बदलाव लाना होगा अन्यथा ऐसी शिक्षा से न तो सामाजिक उत्थान आने वाला है और न ही देश विकसित बन पाएगा।

मिथिलेश कुमार, बलुआचक, भागलपुर (बिहार)

14 नवंबर : बाल दिवस

बच्चे आने वाली सभ्यता की प्रस्तावना हैं, भविष्य में बुलंद होने वाली महान इमारतों की नींव हैं। इनकी बहुआगामी प्रगति मानवता की उपलब्धियों की अनिवार्य पूर्वशर्त है।

★★★

बच्चे विश्व के सर्वाधिक अनमोल संसाधन हैं, और भविष्य के लिए सबसे अच्छी आशा भी बच्चे ही हैं।

★★★

संसार में पैदा हुआ प्रत्येक बच्चा वास्तव में सर्वशक्तिमान ईश्वर का एक नवीन विचार है, कोमल, स्वच्छ और प्रकाशमान संभावना है।

★★★

जिस प्रकार सुबह बता देती है कि आने वाला दिन कैसा होगा, उसी प्रकार बच्चों को देखकर यह अनुमान लग जाता है कि आगामी पीढ़ियां कैसी होंगी।

★★★

बच्चे गीली सीमेंट की तरह हैं। उनके साथ घटित होने वाली हर चीज़ उनके कोमल मन पर एक निश्चित छाप अंकित कर जाती है।

★★★

दो अनमोल उपहार हैं जो बच्चों को दिए जा सकते हैं। पहला है-जड़ें, जिनसे वे जुड़े रहें और दूसरा है-पंख, जिनके चलते वे मुक्त आकाश में स्वतंत्र पंछी की तरह उड़ना सीख सकें।

★★★

जब इन बच्चों की प्रशंसा करते हैं या उन्हें प्रेम करते हैं तब हम उन चीजों की प्रशंसा या इन चीजों को प्रेम नहीं कर रहे होते हैं जो बच्चों में निहित हैं। बल्कि हम उन चीजों की प्रशंसा या उन चीजों से प्रेम कर रहे होते हैं जो हमें स्वयं को अच्छी लगती हैं और जिनकी हम आशा रखते हैं।

★★★

बड़ों की बातों को बच्चे चाहे न मानें लेकिन उनके आचरण का अनुसरण करने में बच्चे कभी पीछे नहीं रहते।

★★★

ग्रामीण भारत में लड़कियों की शैक्षिक स्थिति
एक विश्लेषण

अशोक कुमार

शिक्षा परिवर्तन का सबसे बड़ा औजार होता है और इसके माध्यम से लड़कियों की आर्थिक और सामाजिक सशक्तिकरण संभव है। एक तरफ शिक्षा सभी बच्चों का बुनियादी अधिकार है लेकिन दूसरी तरफ लिंग भेद के कारण जीवन के अनेक क्षेत्रों में उनके लिए शिक्षा के अवसर घटते जा रहे है। आकड़े बताते हैं कि पूरी दुनिया में स्कूल नहीं जाने वाले 121 मिलियन बच्चों में लड़कियों का प्रतिशत 65 है। केवल अफ्रीका के सहारा क्षेत्र में सन् 2002 में 24 मिलियन लड़कियों ने स्कूल जाना छोड़ दिया। अफ्रीका सहारा क्षेत्र, दक्षिणी और पूर्वी एशिया तथा पैसिफिक क्षेत्र में स्कूल छोड़ने वालों बच्चों में लड़कियों का प्रतिशत तकरीबन 83 था। दुनिया के 875 मिलियन निरक्षरों व्यस्कों में दो तिहाई महिलाएं हैं। आजादी तक महिलाओं में शिक्षा का प्रसार निजी प्रयासों से ही होता रहा था। महिलाओं की प्राथमिक और उच्च शिक्षा शहरों तक ही सीमित रहा था और 50 सालों के बाद भी यह प्रवृति बरकरार है।

भारत में सभी को शिक्षा मुहैया कराना संवैधानिक प्रतिबद्धता है। 1951 में शिक्षा का स्तर काफी कम था, पुरुषों में 25 प्रतिशत और महिलाओं में 9 प्रतिशत। जिसकी वजह से संविधान में यह सपना देखा गया था कि अगले 10 सालों में पूर्ण शिक्षा लक्ष्य प्राप्त कर लिया जाएगा। लेकिन सच्चाई यह है कि ये लक्ष्य अभी भी पाना बाकी है। पिछले पचास सालों के अनुभव से यह बात साफ तौर पर नजर आती है कि नीतियों में शिक्षा को प्राथमिकता भर देने से यह सुनिश्चित नहीं हो जाता है कि इसके लिए पर्याप्त साधन उपलब्ध हो जाएगा और न ही इससे यह सुनिश्चित होता है हाशिए पर रह रहे तबकों को राष्ट्रीय कार्यक्रमों से लाभ हो रहा है। शिक्षा प्राप्ति के मामले में पुरुष और महिलाओं के बीच लिंग भेद बरकरार है चाहे इसे किसी कसौटी पर कसा जाए। पुरूष महिलाओं में अंतर के साथ अनुसूचित जाति और जनजाति में अन्य समूहों के अपेक्षा शिक्षा का स्तर काफी कम है। मजदूरी करने वालों में पेशे में लगे समूहों की तुलना में काफी कम है। इन सब के अलावा ग्रामीण-शहरी अंतर भी व्याप्त है। निरक्षरता की समस्या न तो पूरे देश में समान है और न ही विभिन्न समुदायों के बीच। जनसंख्या के विशाल आकार की वजह से सर्व शिक्षा प्राप्ति की चुनौतिया काफी बढ़ जाती है।

फोटो : सर्वेश

नीतियां एवं कार्यक्रम

भारतीय संविधान में चौदह साल तक के बच्चों के लिए नि:शुल्क और अनिवार्य शिक्षा मुहैया कराने की गांरटी दी गई है। संविधान के अनुच्छेद 45 में यह निर्देश दिया गया है कि राज्य के संविधान की स्थापना के दस सालों के भीतर इसके लिए सभी आवश्यक सुविधाएं मुहैया कराने की दिशा में प्रयास करना चाहिए। इस लक्ष्य को बाद में सन् 2000 तक बढ़ दिया गया। संविधान में प्राथमिक शिक्षा की व्यवस्था की जिम्मेदारी राज्यों को दी गई वहीं केंद्र सरकार को तकनीकी तथा उच्च शिक्षा की व्यवस्था की जिम्मेदारी सौंपी गयी जो 1976 मे 42वें संविधान के पास होने बाद बदल गया, उसके बाद शिक्षा की संयुक्त जिम्मेदारी राज्य और केंद्र की हो गई। सरकारी नीतियों और सहायक कार्यक्रमों की विभिन्न अवस्थों का विवरण तालिका 1 में दिया गया है।

महिलाओं या लड़कियों की शिक्षा के लिए सरकार या गैर-सरकारी संगठन के प्रयासों की समीक्षा से यह तथ्य सामने आता है कि इन सभी में विदेश दानों का योगदान रहा है। मुख्यधारा से अलग होने के कारण वे नए विचारों लाने और प्रयोगों अपनाने में सफल रहे हैं।

शिक्षण प्रणाली का विस्तार

ग्रामीण इलाकों में शैक्षिक संस्थान/विद्यालय वर्तमान समय में भारत के पास चीन के बाद दुनिया का दूसरा सबसे बड़ा शैक्षिक प्रणाली है, जिसमें 626737 प्राथमिक, 190166 उच्च प्राथमिक, 79648 उच्च विद्यालय, 28487 उच्च माध्यमिक विद्यालय है। यह गौर करने वाली बात है कि 1950-50 और 2002-03 के बीच ग्रामीण भारत में शिक्षण संस्थानों की संख्या में काफी वृद्धि हुई है।

तालिका-2 ग्रामीण भारत में प्राथमिक, उच्च प्राथमिक, माध्यमिक,उच्च माध्यमिक विद्यालयों की संख्या में हुई वृद्धि को दर्शाती है। इस दौरान प्राथमिक

तालिका–1

काल नीति का ढांचा	केंद्र सरकार के कार्यक्रम और कार्यप्रणाली
1951–68 भारत का संविधान	औपचारिक स्कूल शिक्षा का प्रसार, राज्य सरकार के सहयोग से प्राथमिक शिक्षा के लिए पहल सिंगल ट्रैक सिस्टम
1968–86 शिक्षा की राष्ट्रीय नीति, 1968	औपचारिक स्कूल शिक्षा के मदद के लिए गैर औपचारिक शिक्षा की शुरूआत, 1980 केंद्र द्वारा प्राथमिक विद्यालय पर किए जाने वाले खर्च में इजाफा
1986–62 शिक्षा की राष्ट्रीय नीति, 1986	1980 के शुरूआत में आंध्र प्रदेश प्राथमिक शिक्षा योजना, पर्यावरण शिक्षा, 1986, राजस्थान शिक्षा कर्मी योजना, 1987, सर्व शिक्षा अभियान, 1988, कर्नाटक यूपी और गुजरात में महिला समाख्य 1989, बिहार शिक्षा योजना, 1991, राजस्थान लोग जुम्बिश, 1992, यूपी आधारभूत शिक्षा योजना, 1992, केंद्र की सहायता से अनेक योजनाओं की शुरूआत की गयी, जिसमें मुख्यतः विदेशी सहायता ली गई और विशेष क्षेत्र में कार्यरत गैरसरकारी संगठनों को शामिल किया गया।
1992 से राष्ट्रीय शिक्षा नीति,	जिला प्राथमिक शिक्षा योजना (डीपीईपी), अब तक 1992 1993; इस के माध्यम से सभी तरह के प्राथमिक शिक्षा के योजनाओं को बाहरी सहायता मिलने की संभावना है। मध्य प्रदेश शिक्षा गारंटी योजना,1997, नीतिगत स्तर पर विकेंद्रीकरण पर जोर दिया जाएगा। 1993 में सुप्रीम कोर्ट ने अपने एक फैसले में कहा था कि शिक्षा सभी नागरिकों को मूलभूत अधिकार है, जिसके वजह से शिक्षा को व्यापक बनाने के लिए तत्परता से प्रयास किए जाने पर जोर दिया गया। 2001 में सर्व शिक्षा अभियान शुरू किया गया।

★ उन्नीकृष्णन बनाम आंध्र प्रदेश में, 1993

तालिका–2

वर्ष	प्राथमिक	उच्च प्राथमिक	माध्यमिक / उच्च माध्यमिक या इंटर
1950–51	175999	10413	2827
1980–81	444752	94249	34668
1990–91	482628	117279	50415
2002–03	573085	193864	87380

स्रोत चुनिंदा भौक्षिक आकड़े 2002–03, मानव संसाधन विकास मंत्रालय, भारत सरकार।

विद्यालयों की संख्या में तीन गुना से अधिक इजाफा हुआ, जबकि उच्च प्राथमिक विद्यालयों की संख्या में 19 गुना और माध्यमिक/उच्च माध्यमिक विद्यालयों की संख्या में 31 गुना इजाफा हुआ।

ग्रामीण लड़कियों की विद्यालय तक पहुंच

साक्षरता स्तर का आय से सकारात्मक संबध है और महिला साक्षरता का संबंध समय के संदर्भ में पुरुष साक्षरता से है। 20000 वार्षिक के भीतर घरेलू आय वाले परिवारों में 57 प्रतिशत पुरुष और 32.5 प्रतिशत महिलाएं साक्षर हैं, वही 86000 वार्षिक आय में परिवारों में यह आंकड़ा 86.4 और 62.2 है। भूमि स्वामित्व से भी अंतर पड़ता है। सभी भूमि–स्वामित्वों में पुरुषों में साक्षरता 68 प्रतिशत और महिलाओं में यह 41.3 प्रतिशत है,जबकि भूमिहीनों में यह 60.4 और 37.6 है। पेशेवर लोगों में मजदूरी करने वालों से साक्षरता का स्तर सबसे कम है। इन सभी में महिलाओं के पिछड़े होने के कारण लिंग भेद बढ़ता जाता है। इसलिए राजस्थान मे मजदूरी करने वाली महिलाओं में साक्षरता दर 6 प्रतिशत है वही उसी समूह के पुरुषों के बीच यह 44 प्रतिशत है।

तालिका–3 में ग्रामीण इलाकों के विद्यालयों के श्रेणी के अनुसार नामांकन को दर्शाया गया है। इससे जाहिर होता है कि सभी राज्यों में नामांकन कराने वालों में लड़कों की संख्या लड़कियों से ज्यादा है। यह अंतर शिक्षा के ऊपरी स्तर पर और बढ़ जाता है।

लड़कियों का नामांकन

शिक्षा के सभी स्तरों पर शिक्षा में लड़कियों सहभागिता सामान्य गति से बढ़ रही है, जिसे तालिका–4 में देखा जा सकता है। 1950–51 के बाद से लड़कियों की प्राथमिक, उच्च प्राथमिक, माध्यमिक उच्च/माध्यमिक और उच्च शिक्षा में सहभागिता बहुत ज्यादा बढ़ी है। प्राथमिक स्तर पर यह 28.1 प्रतिशत से बढ़कर 46.8 प्रतिशत, माध्यमिक में 16.1 से 43.9 प्रतिशत, उच्च/माध्यमिक में 13.3 से 41.3 प्रतिशत और उच्च शिक्षा में 10 से बढ़कर 40.1 प्रतिशत हो गया है। लेकिन अब भी सभी स्तरों पर उनकी सहभागिता पचास प्रतिशत से कम ही है।

तालिका–5 से यह जाहिर है कि बीच में ही स्कूल छोड़ने वालों में लड़कियों की संख्या ज्यादा है। लेकिन जब हम आंकड़ों पर नजर डालते है यह पता

तालिका–3

ग्रामीण इलाकों के विद्यालयों के श्रेणी के अनुसार नामांकन

वर्ष	प्राथमिक			माध्यमिक उच्च प्राथमिक			माध्यमिक / उच्च माध्यमिक		
	लड़कें	लड़कियां	कुल	लड़कें	लड़कियां	कुल	लड़कें	लड़कियां	कुल
1965–66	25.09	13.06	38.15	4.71	1.19	5.90	1.88	0.33	2.21
1973–74	30.18	16.86	47.04	6.27	2.13	8.40	2.96	0.69	3.65
1978–79	33.14	18.79	51.93	7.91	3.05	10.96	3.26	0.90	4.16
1986–87	39.82	25.98	65.80	12.01	5.64	17.72	5.71	2.08	7.79
1993–94	42.06	30.14	72.47	14.19	7.28	21.47	7.17	3.33	10.50
2002–03*	42.28	38.09	80.37	29.83	24.31	54.14	37.71	28.59	66.30
*अस्थायी									

तालिका–4

शिक्षा के सभी स्तरों पर लड़कियों का नामांकन प्रतिशत

वर्ष	प्राथमिक	माध्यमिक	माध्यमिक / उच्च माध्यमिक, 11वीं–12वीं	उच्च शिक्षा, डिग्री स्तर या उससे ऊपर
1950–51	28.1	16.1	13.3	10.0
1960761	32.6	23.9	20.5	16.0
1970–71	37.4	29.3	25.0	20.0
1980–81	38.6	32.9	29.6	26.7
1990–91	41.5	36.7	32.9	33.3
2000–01'	43.7	40.9	38.6	39.4
2002–03'	46.8	43.9	41.3	40.1
'अस्थायी				

स्रोत चुनिंदा शैक्षिक आकड़े 2002–03, मानव संसाधन विकास मंत्रालय,भारत सरकार।

चलता है कि यह संख्या पिछले कुछ सालों में शिक्षा के सभी स्तरों पर स्कूल छोड़ने वालों के दर में गिरावट आई है। 1960–61 से 2001–02 स्कूल छोड़ने के प्रमुख कारणों को तालिका–6 में दर्शाया गया है। जिससे यह तथ्य सामने आता है कि ज्यादातर लड़कियां स्कूल जाना इसलिए छोड़ देती है क्योंकि उन्हें घर के काम में हाथ बंटाना होता है और छोटे भाई–बहन को संभालना होता है।

लड़कियों की शिक्षा में बाधाएं

शिक्षा प्राप्ति में लड़की और लड़के दोनों को मुश्किलों का सामना करना पड़ता है। लेकिन लड़कियों खासकर मुश्किलों का सामना इसलिए करना पड़ता है, क्योंकि वे लड़कियां हैं। परिवार की गरीबी भी शिक्षा की प्राप्ति में बाधा खड़ी करती है। गरीबों में यह धारणा होती है कि अगर बच्चे को स्कूल भेज दिया तो आमदनी घट जाएगी या फिर घर में काम करने वाला कोई नहीं होगा। वे स्कूल का फीस या यूनिफार्म का खर्च वहन नहीं कर पाते हैं। और अगर बात सीमित साधन के वजह से लड़के या लड़की में किसी एक को

तालिका–5

शिक्षा के विभिन्न स्तरों पर स्कूल छोड़ने वालों का प्रतिशत, 1960–61 से 2001–02 के बीच

वर्ष	प्राथमिक			माध्यमिक उच्च प्राथमिक			माध्यमिक / उच्च माध्यमिक		
	लड़के	लड़कियां	कुल	लड़के	लड़कियां	कुल	लड़के	लड़कियां	कुल
1960–61	61.7	70.9	64.9	75.0	85.0	78.3	–	–	–
1970–71	64.5	70.9	67.0	74.6	83.4	77.9	–	–	–
1980–81	56.2	62.5	58.7	68.0	79.4	72.7	79.8	86.6	82.5
1990–91	40.1	46.0	42.6	59.1	65.1	60.9	67.5	76.9	71.3
1992–93	43.8	46.7	45.0	58.2	65.2	61.1	70.0	77.3	72.9
1999–0'	38.7	42.3	40.3	52.0	58.0	54.5	66.6	70.6	68.3
2001–2'	38.4	39.9	39.0	52.9	56.9	54.6	64.2	68.6	66.4
'अस्थायी									

स्रोत चुनिंदा शैक्षिक आंकड़े 2001–02, माध्यमिक एवं उच्च शिक्षा विभाग, मानव संसाधन विकास मंत्रालय,भारत सरकार, नई दिल्ली।

स्कूल भेजने की हो तो लड़कों को ही प्राथमिकता दी जाती है क्योंकि यह अच्छा दीर्घकालीन निवेश माना जाता है।

शिक्षा के संदर्भ में जो कानूनी ढांचा है वह काफी कमजोर है। इस वजह से बहुत से लोग लड़कियों के साथ पक्षपात करते हैं।

- ★ अनिवार्य या नि:शुल्क कानून का अस्तित्व नहीं है या अगर होता तो भी लागू नहीं किया जा सकता है:
- ★ बहुत से देशों में लड़कियों की शादी कम उम्र में हो जाती है और वे कम उम्र में ही गर्भवती हो जाती हैं। लेकिन इसके बावजूद सभी के पास ऐसे कानून और नीतियां है जो गर्भवती लड़कियों के स्कूल जाने पर पाबंदी लगाता है या फिर मां बनने के बाद उन्हें दुबारा स्कूल लौटने से रोकता है।
- ★ दुनियाभर में तकरीबन 50 मिलियन बच्चे ऐसे होते है, जिनका जन्म के समय पंजीकरण नहीं होता है और उनमें ज्यादातर लड़कियां होती हैं। इस कारण बहुत से देशों में जन्म प्रमाणपत्र नहीं होने के कारण उनका दाखिला स्कूलों में नहीं हो पाता है या उनकी योग्यता ही बाधित हो जाती है।

ग्रामीण इलाकों में स्कूल में या आसपास सुरक्षा का मुद्दा भी लड़कियों की शिक्षा को प्रभावित करता है:

- ★ अगर बच्चों को स्कूल के लिए काफी दूर जाना पड़ता है तो ऐसी सूरत में इस बात की संभावना कम होती है कि अभिभावक अपनी बेटियों को स्कूल भेजें क्योंकि उन्हें उनकी व्यक्तिगत सुरक्षा को लेकर चिंता होती है।

तालिका–6

स्कूल छोड़ देने के कारण:1998–99

	ग्रामीण		शहरी		कुल	
	पुरुष	महिला	पुरुष	महिला	पुरुष	महिला
स्कूल का दूर होना	1.0	5.9	0.2	1.0	0.8	4.8
यातायात की अनुलपब्धता	0.4	1.6	0.1	0.2	0.3	1.3
आगे की शिक्षा गैर जरूरी समझना	2.3	4.3	2.4	5.4	2.4	4.5
घरेलू काम में व्यस्तता	8.7	17.3	5.7	14.7	8.0	16.7
पारिवारिक व्यापार खेतों मे व्यस्तता	9.2	2.9	4.7	1.6	8.0	2.6
बाहरी काम आदि में व्यस्तता–पैसे या बेगारी	9.9	3.7	11.3	3.0	10.3	3.5
ज्यादा खर्च के कारण	13.3	11.4	15.2	17.0	13.8	12.6
लड़कियों के लिए सही स्कूल का अभाव	0.0	3.5	0.0	1.2	0.0	3.0
भाई–बहनों की देखरेख में व्यस्त	0.6	2.3	0.2	1.5	0.5	2.2
पढ़ाई की इच्छा न होना	40.0	24.8	42.5	30.2	46.6	26.0
असफलता	5.3	3.7	6.0	6.1	5.5	4.2
शादी के कारण	0.2	8.5	0.1	4.9	0.2	7.7
अन्य	5.3	6.2	5.8	8.2	5.5	6.6
नहीं जानते	3.8	4.0	5.7	5.1	4.2	4.2
कुल प्रतिशत	100.0	100.0	100.0	100.0	100.0	100.0
बच्चों की संख्या	5475	61221	1852	1747	7327	7868

स्रोतः भारत में पुरुष और महिलाएं, सीएसओ, भारत सरकार

★ स्कूलों मे महिला शिक्षिका के नहीं होने और सहेली न होने की वजह से स्कूल में लड़कियों को असुरक्षा का आभास होता है।

★ पारिवारिक संकट और परेशानी के कारण बच्चों को स्कूल भेजना बंद कर दिया जाता है, जबकि बचपन में नियमित रूप से स्कूल जाना सबसे अहम होता है।

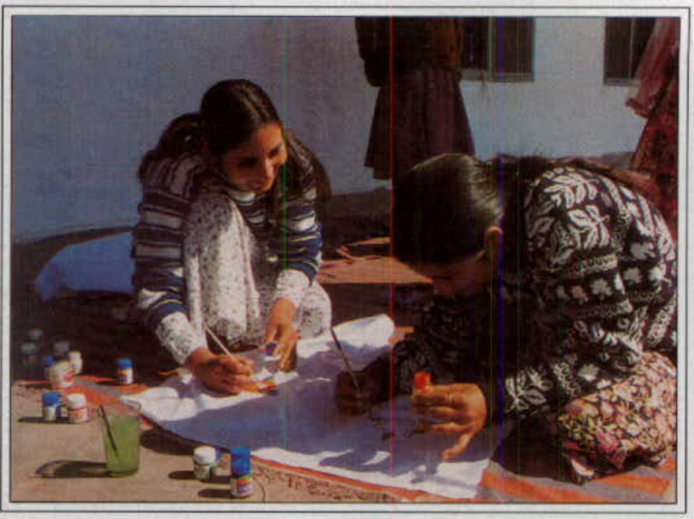

यूनिसेफ का यह दीर्घकालीन लक्ष्य है कि बच्चों को अच्छी शिक्षा मिले। लड़कियों की शिक्षा के संबंध में निम्नलिखित अंतरराष्ट्रीय लक्ष्य तय किए गए है:

★ 2015 तक यह सुनिश्चित करना कि सभी बच्चों को नि:शुल्क और अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा की व्यस्था की जाए, जिसमें विशेषतौर पर लड़कियों, गरीब बच्चों और अल्पसंख्यक बच्चों की शिक्षा पर घ्यान देने का लक्ष्य है।

★ 2005 तक लिंग विषमता को मिटाने का लक्ष्य रखा गया है और 2015 तक शिक्षा मे लिंग समानता लाने का लक्ष्य है, जहां लड़कियों के लिए प्राथमिक शिक्षा प्राप्ति के समान अवसर को सुनिश्चित करना है।

निष्कर्ष

इन सारी बातों से यह निष्कर्ष निकलता है कि सरकार और गैर-सरकारी समाज सेवी संगठनों के प्रयासों के बावजूद प्रगति संतोषजनक नहीं है। यह सही है कि ग्रामीण इलाकों में शिक्षण संस्थान का प्रसार काफी बढ़ा है लेकिन अभी भी लड़कियों के बीच मे ही स्कूल छोड़ देने का सिलसिला जारी है। पर फिर भी 1950-51 से 2002-03 के बीच शिक्षा के सभी स्तरों पर लड़कियों की सहभागिता में इजाफा हुआ है, लेकिन सभी स्तरों पर (प्राथमिक, उच्च प्राथमिक, माध्यमिक उच्च/माध्यमिक और उच्च) शिक्षा लड़के लड़कियों से नामांकन में मामले आगे हैं और उच्च शिक्षा में यह अंतर काफी बढ़ जाता है।

यह सच है कि लड़के और लड़कियों दोनों को शिक्षा के लिए बाधाओं से लड़ना है, लेकिन गांवों में रह रही लड़कियों को कुछ अधिक ही बाधाओं से लड़ना होगा। 2015 तक शिक्षा में समानता के लक्ष्य को पाने के लिए हमें प्राथमिक और माध्यमिक शिक्षा के स्तर पर लिंग विषमता को मिटाना होगा। ❐

(लेखक राष्ट्रीय जनसहयोग तथा बाल विकास संस्थान, हौज खास, नई दिल्ली में संयुक्त निदेशक हैं)

(अनुवादक: नीरज कुमार)

बुनियादी सुविधा परियोजनाओं के लिए 119 करोड़ रुपये जारी

केन्द्र सरकार ने महाराष्ट्र, मध्य प्रदेश, गुजरात, आंध्र प्रदेश और पश्चिम बंगाल में विभिन्न परियोजनाओं को शुरू करने के लिए 119 करोड़ रुपये जारी किये हैं। केन्द्र ने जवाहर लाल नेहरू शहरी नवीकरण मिशन (जेएनएनयूआरएम) के तहत नांदेड़ में विभिन्न परियोजनाएं शुरू करने के लिए पहली किशत के रूप में महाराष्ट्र सरकार को 61.94 रुपये जारी किये हैं। नांदेड़ में इस मिशन के उपमिशन **शहरी बुनियादी सुविधा एवं प्रशासन** के तहत मंजूर परियोजनाओं में जलापूर्ति, भूमिगत मल निकासी एंव अपशिष्ट प्रबंधन तथा जलापूर्ति और मल निकासी प्रणाली में सुधार शामिल हैं। मिशन के तहत नांदेड़ के लिए केन्द्र का हिस्सा कुल 247.76 करोड़ रुपये है।

केंद्र ने जेएनएनयूआरएम के तहत पुणे में विभिन्न परियोजनाएं शुरू करने के लिए पहली किशत के तौर पर महाराष्ट्र सरकार को 24.71 करोड़ रुपये जारी किए हैं। पुणे में मंजूर परियोजनाओं में झीलों का संरक्षण, नाला सुधार और नदी पारिस्थितिकी शामिल हैं। मिशन के तहत पुणे के लिए केन्द्र सरकार का हिस्सा कुल 98.87 करोड़ रुपये हैं। केन्द्र ने इंदौर शहर में बस रैपिड ट्रांजिट प्रणाली शुरू करने के लिए बतौर पहली किशत मध्य प्रदेश सरकार को 12.30 करोड़ रुपये जारी किये हैं। इस परियोजना के तहत 11.45 किलोमीटर लंबी बस रैपिड ट्रांजिट प्रणाली का निर्माण किया जाएगा। इस परियोजना के लिए केंद्र का हिस्सा 49.22 करोड़ रुपये है। केन्द्र सरकार ने अहमदाबाद में बाढ़ के पानी की निकासी प्रणाली के लिए पहली किशत के रूप में गुजरात सरकार को 5.17 करोड़ रुपये जारी किये हैं। इस परियोजना के लिए कुल केंद्रीय हिस्सा 20.70 करोड़ रुपये है।

केंद्र ने हैदराबाद में मुशी नदी के दक्षिण ओर उत्तर में ग्रिड सुधार कार्य तथा मल निकासी प्रणाली के लिए पहली किशत के रूप में आंध्र प्रदेश सरकार को 6.47 करोड़ जारी किये हैं। इस परियोजना के लिए केंद्र का हिस्सा 25.89 करोड़ रुपये है। केंद्र ने कोलकाता शहर को सीवर प्रणाली को उन्नत बनाने के लिए पहली किशत के तौर पर 8.49 करोड़ रुपये जारी किये हैं। इस परियोजना के लिए केन्द्र का हिस्सा 33.99 करोड़ रुपये है।

भारत में साक्षरता परिदृश्य

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद से भारत में साक्षरता के क्षेत्र में उल्लेखनीय प्रगति हुई है। वर्ष 2001 की जनगणना के परिणाम इस बात की पुष्टि करते हैं। 1951 में साक्षरता की दर 18.33 प्रतिशत थी, जों 2001 में बढ़कर 64.84 प्रतिशत हो गई। यह स्थिति इस बात के बावजूद है कि पिछले पांच दशकों के अधिकांश भाग में जनसंख्या में लगभग 2 प्रतिशत वार्षिक की अप्रत्याशित वृद्धि हुई है। जनगणना 2001 की कुछ महत्वपूर्ण बातें इस प्रकार हैं–

★ देश में साक्षरता की दर बढ़कर 64.84 प्रतिशत हो गई है, जिसका मतलब है कि प्रत्येक दशक में कुल मिलाकर 12.63 प्रतिशत की दर से वृद्धि हुई है। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद यह सबसे ऊंची दर है।

★ पुरुष साक्षरता दर बढ़कर 75.26 हो गई है, जो 11.13 वृद्धि को दर्शाती है। दूसरी ओर महिला साक्षरता दर 14.38 प्रतिशत के हिसाब से तेजी से बढ़कर 53.67 प्रतिशत हो गई है।

★ 1991 में पुरुषों और महिलाओं की साक्षरता दर में 24.84 प्रतिशत का अन्तर था, जो 2001 में घटकर 21.59 प्रतिशत हो गया। मिजोरम में अन्तर 3.97 प्रतिशत है, जो सबसे कम है। केरल में यह अन्तर 6.52 प्रतिशत और मेघालय में 5.82 प्रतिशत है। –1991–2001 के दौरान सभी राज्यों और केंद्र शासित प्रदेशों में बिना किसी अपवाद के साक्षरता में वृद्धि हुई है।

★ बिहार को छोड़कर सभी राज्यों और केंद्र शासित प्रदेशों में पुरुष साक्षरता दर 60 प्रतिशत से अधिक है, जबकि बिहार में यह 59.68 प्रतिशत है।

★ स्वतंत्रता के बाद 1991–2001 के दशक के दौरान पहली बार निरक्षरों की कुल संख्या में कमी हुई है। पिछले दशकों में साक्षरता दर बढ़ने के बावजूद निरक्षरों की संख्या में लगातार बढ़ोतरी हुई है। लेकिन अब पहली बार निरक्षरों की कुल संख्या में लगभग 2 करोड़ 48 लाख की कमी आई है।

★ वर्ष 2001 में साक्षर व्यक्तियों की संख्या बढ़कर 56 करोड़ 7 लाख हो गई है, जिससे देश में और 20 करोड़ 14 लाख साक्षर व्यक्ति बढ़ गए हैं।

★ राज्यों/केंद्र शासित प्रदेशों में से राजस्थान में सबसे अधिक साक्षरता दर यानि 21.86 प्रतिशत दर्ज की गई है। राजस्थान में 1991 में 7 वर्ष से अधिक आयु के व्यक्तियों में साक्षरता दर 38.55 प्रतिशत थी, जो 2001 में बढ़कर 60.41 प्रतिशत हो गई।

★ राज्य में महिला साक्षरता में भी बहुत अच्छी प्रगति हुइ है। 1991 में यह 20.44 प्रतिशत थी, जो 2001 में बढ़कर 43.85 प्रतिशत हो गई।

★ छत्तीसगढ़ में 1991 में 7 वर्ष से अधिक आयु की बालिकाओं में साक्षरता दर 27.52 प्रतिशत थी, जो 2001 में बढ़कर 51.85 प्रतिशत हो गई। इस प्रकार छत्तीसगढ़ में महिला साक्षरता दर में 24.33 प्रतिशत की वृद्धि हुई, जो देश के सभी राज्यों/केंद्र शासित प्रदेशों में सबसे अधिक है।

★ मध्य प्रदेश में भी महिला साक्षरता की दर में 20.94 प्रतिशत की सराहनीय वृद्धि हुई। 1991 में यह 29.35 प्रतिशत थी जो 2001 में बढ़कर 50.29 प्रतिशत हो गई।

महिला साक्षरता

जनगणना 2001 की अन्तिम रिपोर्ट से पता चलता है कि भारत ने 1991 की जनगणना के बाद के दशक के दौरान साक्षरता के क्षेत्र में उल्लेखनीय प्रगति की है। 2001 की जनगणना में साक्षरता की दर 64.84 प्रतिशत दर्शायी गई है, जो 1991 में 52.21 प्रतिशत थी। इसी दौरान महिला साक्षरता की दर में 14.4 प्रतिशत की वृद्धि हुई। 1991 में यह 39.3 प्रतिशत थी, जो बढ़कर 2001 में 53.7 प्रतिशत हो गई। 7 वर्ष से अधिक आयु की कुल लगभग 86 करोड़ 48 लाख की जनसंख्या में 56 करोड़ 7 लाख साक्षर हैं, जिनमें से 22 करोड़ 41 लाख 50 हजार महिलाएं हैं। पुरुषों में तीन चौथाई और महिलाओं में आधे से अधिक साक्षर हैं। 1951 के बाद से साक्षरता की दर में वृद्धि के आंकड़े इस प्रकार हैं–

तालिका–1 भारत में साक्षरता दर (1951–2001)

जनगणना वर्ष	व्यक्ति दर में अन्तर	पुरुष	महिला	पुरुष–महिला साक्षरता
1951	18.33	27.16	8.86	18.30
1961	28.30	40.40	15.35	25.05
1971	34.45	45.96	21.97	23.98
1981	43.57	56.38	29.76	26.62
1991	52.21	64.13	39.29	24.84
2001	64.84	75.26	53.67	21.59

यह ध्यान देने योग्य बात है कि 1991–2001 अवधि के दौरान महिला साक्षरता दर में 14.38 प्रतिशत की वृद्धि हुई जबकि पुरुष साक्षरता दर में 11.13 प्रतिशत की वृद्धि हुई। महिला साक्षरता दर के संबंध में कुछ बातें इस प्रकार हैं–

★ 1991 में पुरुष–महिला साक्षरता दर में अन्तर 24.8 प्रतिशत था, जो 2001 में कम होकर 21.6 प्रतिशत हो गया।

★ केरल में महिला साक्षरता दर सबसे अधिक यानि 87.72 प्रतिशत दर्ज की गई, जबकि बिहार में यह सबसे कम 33.12 प्रतिशत थी।

- ★ यह पहली बार है कि निरक्षरों की कुल संख्या में कमी आई है। 1991 में निरक्षरों की संख्या 32 करोड़ 80 लाख थी, जो 2001 में कम होकर 30 करोड़ 40 लाख हो गई।
- ★ 1991-2001 के दौरान 7 वर्ष से अधिक आयु वाले लोगों की संख्या 17 करोड़ 16 लाख बढ़ गई। जबकि इस दौरान 20 करोड़ 36 लाख और लोगों को साक्षर बनाया गया।
- ★ 7 वर्ष से अधिक आयु के 86 करोड 48 लाख लोगों में से अब 56 करोड़ 7 लाख लोग साक्षर हैं।
- ★ 1991-2001 के दौरान बिना किसी अपवाद के सभी राज्यों और केंद्र शासित प्रदेशों में साक्षरता दर में वृद्धि हुई है।
- ★ केरल में पूरे देश के मुकाबले साक्षरता दर सबसे अधिक 90.86 प्रतिशत है। पुरुष साक्षरता दर 94.24 प्रतिशत और महिला साक्षरता दर 87.72 प्रतिशत है।
- ★ बिहार में इस दौरान साक्षरता दर में सबसे कम 8.52 प्रतिशत की वृद्धि हुई यानि यह 38.48 प्रतिशत से बढ़कर 47 प्रतिशत हो गई।

राष्ट्रीय साक्षरता मिशन

राष्ट्रीय साक्षरता मिशन 5 मई 1988 को एक टैक्नोलॉजी मिशन के रूप में शुरू हुआ, जिसका उद्देश्य एक समयबद्ध तरीके से देश में 15-35 वर्ष के आयु वर्ग के निरक्षर लोगें को व्यवहार-योग्य साक्षरता प्रदान करना है। इस आयु वर्ग पर इसलिए ध्यान दिया गया क्योंकि ये लोग परिवार बना सकने के योग्य आयु के थे। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 में, जिसे 1992 में संशोधित किया गया, राष्ट्रीय साक्षरता मिशन को देश में निरक्षरता उन्मूलन के तीन साधनों में से एक साधन के रूप में मान्यता दी गई। दो अन्य साधन हैं सभी के लिए प्रारंभिक शिक्षा और अनौपचारिक शिक्षा।

1990 में एर्नाकुलम साक्षरता अभियान की सफलता से स्पष्ट हो गया कि निर्धारित लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए अभियान किस तरह चलाया जाए। इस मिशन के अंतर्गत प्रमुख नीति के रूप में अभियान के जिस स्वरूप को अपनाया गया, भारतीय परिस्थितियों में वह सबसे अधिक उपयुक्त सिद्ध हुआ है। इन अभियानों के जरिए न केवल लोगों को लिखना-पढ़ना और गणना करना सिखाया जाता है बल्कि उन्हें परिवार समाज और देश के प्रति उनके अधिकारों और दायित्वों की भी जानकारी दी जाती है, ताकि वे कुल मिलाकर देश के विकास में उपायुक्त भूमिका निभा सकें। इस प्रकार न केवल साक्षरता के प्रसार के लिए अभियान चलाए गए, बल्कि परिवार कल्याण, टीकाकरण, मातृ और शिशु स्वास्थ्य की देखभाल, पर्यावरण संरक्षण, साम्प्रदायिक सौहार्द, सामंजस्य, राष्ट्रीय एकता आदि के लिए भी अभियान चलाए गए।

मिशन का उद्देश्य 15-35 आयु वर्ग के 8 करोड़ निरक्षर लोगों को व्यवहार योग्य साक्षरता प्रदान करना, यानि 1990 तक 3 करोड़ लोगों को और 1995 तक अतिरिक्त 5 करोड़ लोगों को साक्षरता प्रदान करना था। लेकिन अब मिशन का उद्देश्य वर्ष 2007 तक 75 प्रतिशत साक्षरता दर को पार करना है।

मिशन के अंतर्गत उन क्षेत्रों के 9-14 आयु वर्ग के बच्चों को भी साक्षर बनाना है, जिन्हें अनौपचारिक शिक्षा कार्यक्रम के अंतर्गत स्कूल से बाहर साक्षरता प्रदान करने के लाभ नहीं मिल सके हैं। इन कार्यक्रमों का मुख्य जोर महिलाओं, अनुसूचित जातियों और जनजातियों तथा पिछड़े वर्गों में साक्षरता को बढ़ावा देना है।

राष्ट्रीय साक्षरता मिशन का उद्देश्य कुल मिलाकर यह सुनिश्चित करना है कि समग्र साक्षरता अभियान और इसके बाद के साक्षरता-उपरान्त कार्यक्रम सफलतापूर्वक सतत शिक्षा की दिशा में चलते रहें जिससे कि शिक्षा का कार्यक्रम जीवन भर चलता रहे और ऐसे समाज का निर्माण हो, जिसमें सभी पढ़े-लिखे हों।

समग्र साक्षरता अभियान

केरल के एर्नाकुलम जिले में जिस तरीके से अभियान को सफलता मिली, उससे समग्र साक्षरता कार्यक्रम एक प्रकार से राष्ट्रीय साक्षरता मिशन का मुख्य नीतिगत कार्यक्रम बन गया।

समग्र साक्षरता कार्यक्रम के कुछ सकारात्मक पहलू हैं, जैसे यह विशिष्ट क्षेत्र के लिए होता है, समयबद्ध होता है, इसमें सभी की भागीदारी होती है, स्वेच्छा से योगदान होता है, लागत कम आती है और परिणाम पर अधिक ध्यान दिया जाता है। हालांकि इस अभियान में साक्षरता और गणित के पूर्व निर्धारित स्तर प्राप्त करने पर जोर दिया जाता है, लेकिन इस अभियान के साथ कुछ और गतिविधियां भी जुड़ी हुई हैं- जैसे स्कूलों में सभी की उपस्थिति, टीकाकरण, पर्यावरण संरक्षण, छोटा परिवार, महिला सशक्तिकरण आदि।

समग्र साक्षरता कार्यक्रम के कुछ सकारात्मक पहलू हैं, जैसे यह विशिष्ट क्षेत्र के लिए होता है, समयबद्ध होता है, इसमें सभी की भगीदारी होती है, स्वेच्छा से योगदान होता है, लागत कम आती है और परिणाम पर अधिक ध्यान दिया जाता है। हालांकि इस अभियान में साक्षरता और गणित के पूर्व निर्धारित स्तर प्राप्त करने पर जोर दिया जाता है, लेकिन इस अभियान के साथ कुछ और गतिविधियां भी जुड़ी हुई हैं- जैसे स्कूलों में सभी की उपस्थिति, टीकाकरण, पर्यावरण संरक्षण, छोटा परिवार, महिला सशक्तिकरण आदि।

समग्र साक्षरता अभियान की अवधि 12 से 18 महीने की होती है। इसमें आधा समय तैयारी के लिए और आधा समय वास्तविक शिक्षण के लिए होता है। अत्यन्त दुर्गम क्षेत्रों में इस अवधि को घटाया-बढ़ाया जा सकता है। दो गतिविधियां, शिक्षण के लिए उचित माहौल बनाना और आन्तरिक मूल्यांकन करना, लगातार इस अभियान का हिस्सा रहती हैं।

तालिका–2 समग्र साक्षरता अभियान, साक्षरता उपरांत कार्यक्रम, सतत शिक्षा कार्यक्रम, कार्यक्रम में शामिल जिलों, कार्यक्रम से बाहर जिलों और शेष निरक्षरता उन्मूलन परियोजना जिलों की राज्य–वार सूची

क्र.सं.	राज्य तथा केंद्र शासित प्रदेश का नाम	जिलों की संख्या	समग्र साक्षरता अभियान	साक्षरता उपरांत कार्यक्रम	सतत शिक्षा में कार्यक्रम	कार्यक्रम में शामिल जिलों की संख्या	कार्यक्रम से बाहर जिलों की संख्या	शेष निरक्षरता उन्मूलन परियोजना जिलों की संख्या
1.	आंध्र प्रदेश	23	0	2	21	23	0	10
2.	अरूणाचल प्रदेश	15	6	9	0	15	0	0
3.	असम	23	13	10	0	23	0	0
4.	बिहार	38	14	21	3	38	0	4
5.	छत्तीसगढ़	16	1	9	6	16	0	0
6.	दिल्ली	9	0	0	9	9	0	0
7.	गोवा	2	2	0	0	2	0	0
8.	गुजरात	25	0	2	23	25	0	0
9.	हरियाणा	19	3	12	4	19	0	0
10.	हिमाचल प्रदेश	12	0	11	1	12	0	0
11.	जम्मू–कश्मीर*	14	14	0	0	14	0	0
12.	झारखंड	22	8	9	5	22	0	2
13.	कर्नाटक	27	0	1	26	27	0	14
14.	केरल	14	0	0	14	14	0	0
15.	मध्य प्रदेश	45	0	3	42	45	0	12
16	महाराष्ट्र**	35	3	7	25	35	0	0
17	मणिपुर	9	5	4	0	9	0	0
18.	मेघालय	7	4	3	0	7	0	0
19.	मिजोरम	8	0	0	8	8	0	4
20.	नागालैंड	8	8	0	0	8	0	0
21.	उड़ीसा	30	6	1	3	30	0	0
22.	पंजाब	17	6	10	1	17	0	1
23.	राजस्थान	32	0	0	32	32	0	29
24.	सिक्किम	4	4	0	0	4	0	0
25.	तमिलनाडु	29	0	1	28	29	0	14
26.	त्रिपुरा	4	0	0	4	4	0	3
27.	उत्तरांचल	13	0	1	12	13	0	0
29.	उत्तर प्रदेश	70	11	35	24	70	0	4
29.	पश्चिम बंगाल	19	0	2	17	19	0	8
30.	अंडमान और निकोबार द्वीप समूह	2	0	0	0	0	2	0
31.	चंडीगढ़	1	0	0	1	1	0	0
32.	दादर एवं नगर हवेली	1	0	0	1	0	0	
33.	दमन और दीव	2	0	1	0	1	1	0
34.	लक्षद्वीप	1	0	0	1	1	0	0
35	पांडिचेरी	4	0	0	4	4	0	0
	कुल	600	109	174	314	597	3	105

* आरएफएलपी के तहत कवर एक जिला इसमें शामिल है

** परभणी जिला अब दो जिलों में बांट दिया गया है (परभानी और हिंगोली) दोनों ही जिले सतत शिक्षा कार्यक्रम में शामिल है।

शिक्षा, माहौल बनाने की गतिविधि के अंतर्गत शिक्षा प्राप्त करने वालों और स्वेच्छा से शिक्षा प्रदान करने वालों का पता लगाने के लिए घर-घर जाकर सर्वेक्षण किया जाता है। नई शिक्षा तकनीकों के अनुसार राज्य के प्रौढ़ शिक्षा केंद्रों में उचित पुस्तकें तैयार की जाती हैं।

समग्र शिक्षा अभियान प्रबंधन ढांचे के अंतर्गत जिला स्तर से ग्राम स्तर तक लोकप्रिय समितियां बनाई जाती हैं। जिला साक्षरता समितियों की सहायता के लिए अन्य उप-समितियां और जिला तथा खंड स्तर के प्रशासन के अधिकारी होते हैं।

साक्षरता अभियान जिला साक्षरता समितियों द्वारा चलाए जाते हैं, जिनके अध्यक्ष आम तौर पर जिला कलेक्टर होते हैं। सामान्य जिलों में केंद्र और राज्य सरकार साक्षरता कार्यक्रम के लिए 2:1 के अनुपात में राशि देते है, बकि जनजातीय उपयोजना क्षेत्रों वाले जिलों में केंद्र और राज्य के बीच इस राशि का अनुपात 4:1 का होता हैं। इस समय समग्र साक्षरता अभियान के अंतर्गत प्रति व्यक्ति खर्च 90 से 180 रुपए के बीच बैठता है।

साक्षरता-उपरान्त कार्यक्रम

समग्र साक्षरता अभियान की समाप्ति के बाद जिला साक्षरता समिति एक वर्ष के लिए साक्षरता-उपरान्त कार्यक्रम चलाती है।

इस कार्यक्रम का मुख्य उद्देश्य नव-साक्षरों को साक्षरता के ज्ञान का उपयोग समस्याओं के समाधान के लिए करना सिखाना है, ताकि उनकी शिक्षा, उनके रहने और काम करने के हालात में उपयोगी बन सकें। समग्र साक्षरता अभियान की सीमित अवधि के दौरान उन्हें कार्यक्रम के व्यवहारिक पक्ष के बारे में पर्याप्त जानकारी देना संभव नहीं होता। इसलिए साक्षरता-उपरान्त कार्यक्रम में मुख्य रूप से इन पहलुओं पर ध्यान दिया जाता है।

साक्षरता-उपरान्त कार्यक्रम का पहला काम सीखने वाले लोगों को तैयार करना है। जो पढ़ाई छोड़ गए या समग्र साक्षरता अभियान में राष्ट्रीय साक्षरता मिशन के साक्षरता-स्तर तक नहीं पहुंच सके, उन पर दोबारा ध्यान देकर उन्हें इस योग्य बनाया जाता है।

यह सुनिश्चित करने के लिए कि साक्षरता कार्यक्रम की समाप्ति और साक्षरता-उपरान्त कार्यक्रम के बीच समय का अन्तर न हो, जिससे नव-साक्षर सिखाया-पढ़ाया भूलने लग जाते हैं, राष्ट्रीय साक्षरता मिशन ने इस बात पर काफी जोर दिया है कि साक्षरता उपरान्त कार्यक्रम की योजना और शुरूआत ठीक समय पर हो।

साक्षरता-उपरान्त कार्यक्रम में विशेष रूप से साक्षरता कार्यक्रम के पहले चरण में सीखी गई बातों को फिर से बताना और उन्हें पक्का करना है। दूसरे चरण में सीखने वालों को कई तरह की पूरक पठन सामग्री दी जाती है और लाइब्रेरी की सुविधा उपलब्ध कराई जाती है, ताकि वे स्वयं अपने प्रयासों से लिखना-पढ़ना जारी रख सकें।

राष्ट्रीय साक्षरता मिशन ने साक्षरता-उपरान्त कार्यक्रम के साथ-साथ हुनर सिखाने पर भी जोर दिया है, ताकि नव-साक्षर लोग आर्थिक आत्मनिर्भरता के लिए कुछ हुनर सीख सकें।

साक्षरता-उपरान्त कार्यक्रम एक तरह से जिले में सतत शिक्षा कार्यक्रम का तैयारी चरण है। इस कार्यक्रम की अवधि जो शुरू में दो वर्ष थी, अब एक वर्ष कर दी गई है। इस समय साक्षरता-उपरान्त कार्यक्रम में प्रत्येक सीखने वाले व्यक्ति पर खर्च की राशि 90 से 130 रुपए वार्षिक कर दी गई है।

सतत शिक्षा कार्यक्रम

नव साक्षरों के लिए सतत शिक्षा की योजना से समग्र साक्षरता और साक्षरता-उपरांत कार्यक्रमों के अभियानों के बाद निरंतर शिक्षा की सुविधा उपलब्ध होती है।

इस योजना के अंतर्गत मुख्य जोर सतत शिक्षा केंद्र की स्थापना पर दिया गया है। यह केंद्र पुस्तकालय, वाचनालय, शिक्षा केंद्र, प्रशिक्षण केंद्र, सूचना केंद्र, चर्चा मंडल, विकास केंद्र, संस्कृति केंद्र, खेल केंद्र और व्यक्तिगत रुचियों के कार्यक्रमों के लिए एक मुख्य केंद्र के रूप में काम करता है। प्रत्येक 2000 से 2500 की आबादी पर एक सतत शिक्षा केंद्र स्थापित किया जाता है। लगभग 10-15 ऐसे केंद्रों पर एक मुख्य सतत शिक्षा केंद्र होता है जो सतत शिक्षा केंद्रों की गतिविधियों की देखरेख करता है और उन पर नजर रखता है। सतत शिक्षा केंद्र की स्थापना के अलावा इस योजना के अंतर्गत सीखने वालों की आवश्यकता के लिए कई तरह की गतिविधियां भी चलाई जाती हैं और नए-नए तरीके अपनाए जाते हैं। स्थानीय परिस्थितियों और संसाधनों की उपलब्धता को ध्यान में रखते हुए समकक्ष कार्यक्रम, जीवन गुणवत्ता सुधार कार्यक्रम, आय-संवर्धन कार्यक्रम और व्यक्तिगत रुचि संवर्धन कार्यक्रम जैसी विशिष्ट गतिविधियां शिक्षार्थियों के विशिष्ट समूहों के लिए चलाई जा सकती है।

सतत शिक्षा के कार्यक्रम जिला साक्षरता समितियों के तत्वावधान में चलाए जाते हैं। जिला, खंड और ग्राम पंचायत स्तर की समितियों के साथ जिला साक्षरता समिति पूरे जिले में इस कार्यक्रम की देखरेख के लिए जिम्मेदार है।

प्रत्येक सतत शिक्षा केंद्र को वर्ष में 25 हजार रुपए की आवर्ती और अनावर्ती अनुदान राशि और मुख्य सतत शिक्षा केंद्र को 45 हजार रुपए की राशि दी जाएगी। इसके अलावा कुछ चुने हुए केंद्रों को, जिनको सरकारी या सामुदायिक भवन उपलब्ध नहीं कराया गया है, केंद्र चलाने के लिए भवन का किराया भी अतिरिक्त रूप से दिया जाता है। संशोधित योजना में एक सहायता प्रेरक देने की भी व्यवस्था है, जो मुख्य रूप से सतत शिक्षा कार्यक्रम के दौरान साक्षरता कक्षा चलाने के लिए जिम्मेदार होगा।

इस योजना के अंतर्गत राज्यों को योजना लागू करने के पहले तीन वर्षों के लिए शत-प्रतिशत सहायता देने की व्यवस्था है। चौथे और पांचवें

वर्ष में राज्य सरकारें खर्च का आधा भाग वहन करेंगी और उसके बाद कार्यक्रम की पूरी जिम्मेदारी उनकी होगी।

राज्य साक्षरता मिशन प्राधिकरणों को अपने राज्यों से संबंधित सतत शिक्षा परियोजनाएं स्वीकृत करने का अधिकार दिया गया है। जहां इस तरह के प्राधिकरण का गठन नहीं किया गया है, वहां राज्य सरकार, सतत शिक्षा परियोजनाओं के बारे में राष्ट्रीय साक्षरता मिशन प्राधिकरण को अपनी सिफारिश भेजेगी, जहां परियोजना स्वीकृति समिति इन पर विचार करके परियोजनाओं को स्वीकृति प्रदान करेगी। परियोजना के आधार पर राज्य साक्षरता मिशन प्राधिकरण या राज्य सरकारों को अनुदान राशि उपलब्ध कराई जाती है जिससे वे संबंधित जिला साक्षरता समिति को या कार्यक्रम चलाने वाली एजेंसी को देते हैं।

शेष निरक्षरता उन्मूलन परियोजना

हालांकि समग्र साक्षरता अभियानों ने जन आंदोलन का रूप ले लिया और देश भर में इनका विस्तार हुआ, लेकिन फिर भी कई स्थानों पर प्राकृतिक आपदाओं, राजनीतिक इच्छा की कमी, जिला कलेक्टरों के बार-बार के स्थानांतरण आदि के कारण ये अभियान ठप्प पड़ गए। इन ठप्प पड़ी परियोजनाओं को फिर से शुरू करना प्राथमिकता का मुद्दा है। साक्षरता के चरण की सफलता के बावजूद अभी भी कुछ क्षेत्र ऐसे हैं, जहां निरक्षरता को दूर करना बाकी है। जिन जिलों में अभी तक साक्षरता कार्यक्रम नहीं चलाए जा सके हैं और जहां महिला साक्षरता दर 30 प्रतिशत से नीचे है, वहां पर साक्षरता कार्यक्रम चलाने को प्राथमिकता दी जाती रहेगी। इसमें महिलाओं और समाज के कमजोर वर्गों पर विशेष ध्यान दिया जाएगा।

साक्षरता अभियानों के लिए जनजातीय उपयोजना के अंतर्गत आने वाले जिलों को छोड़कर केंद्र और राज्य सरकार के बीच खर्च का बटवारा 2:1 के अनुपात में है, जबकि जनजातीय उपयोजना जिलों के लिए यह अनुपात 4:1 है। साक्षरता अभियान चलाने वाली एजेंसियों को इस बात की अनुमति दी गई है कि वे साक्षरता उपरांत कार्यक्रमों और सतत शिक्षा के अगले चरण के कार्यक्रमों के अलावा बुनियादी साक्षरता गतिविधियों पर भी राशि खर्च कर सकती है।

राष्ट्रीय साक्षरता मिशन के विभिन्न राज्यों के 105 जिलों में शेष निरक्षरता उन्मूलन परियोजना के लिए मंजूरी दे दी है। राज्यवार इसकी सूची तालिका में दी गई है।

कम महिला साक्षरता वाले जिलों पर विशेष ध्यान

जनगणना 2001 के अनुसार देश के 47 जिलों में महिला साक्षरता दर 30 प्रतिशत से नीचे है। इनमें से अधिकतर जिले बिहार, झारखंड, उत्तर प्रदेश के कम महिला साक्षरता वाले 8 जिलों को त्वरित महिला साक्षरता कार्यक्रम के अंतर्गत लाया गया है। इस कार्यक्रम को लगभग 100 गैर-सरकारी संगठनों के माध्यम से लागू किया गया। उत्तर प्रदेश के 8 ऐसे जिलों में कराए गए मूल्यांकन से पता चला है कि 24.53 लाख महिलाओं के नाम साक्षरता कार्यक्रम के लिए दर्ज किए गए, जिनमें से 17.10 लाख महिलाओं को साक्षर बना दिया गया है।

बिहार में कम महिला साक्षरता वाले 15 जिलों में साक्षरता के लिए अलग तरीका अपनाया गया। इन जिलों की जिला साक्षरता समितियों ने इस काम में पंचायती राज के कर्मचारियों, महिला स्वयंसेवी शिक्षकों और महिला स्वयं सहायता समूहों का त्वरित महिला साक्षरता परियोजना कार्यक्रम में सहयोग लिया गया।

उड़ीसा में त्वरित महिला साक्षरता परियोजना कम महिला साक्षरता वाले 9 जिलों के लिए स्वीकार की गई। ये जिले हैं- गजपति, नोपाड़ा, कालाहांडी, रायगढ़, नवरंगपुर, कोरापुट, मल्कानगिरि, बोलंगीर और सोनपुर। त्वरित महिला साक्षरता परियोजना के लिए पहचान किए गए 122 गैर-संगठनों में से 117 संगठन इस कार्यक्रम में भाग लेने के लिए आगे आए। रिपोर्ट में बताया गया है कि साक्षरता कार्यक्रम के लिए 9.10 लाख महिलाओं के नाम पता लगे, जिनमें से 9.03 लाख के नाम दर्ज किए गए। प्राप्त सूचना के अनुसार उड़ीसा में त्वरित महिला साक्षरता परियोजना के अंतर्गत 5.80 लाख महिलाओं ने प्राइमर-III तक की पढ़ाई पूरी कर ली है।

राष्ट्रीय साक्षरता मिशन उन 47 जिलों पर विशेष ध्यान दे रहा है, जहां 2001 की जनगणना के अनुसार महिला साक्षरता का स्तर 30 प्रतिशत से भी कम है।

150 जिलों में विशेष साक्षरता अभियान

जनगणना 2001 के आधार पर यह जानकारी मिली कि देश के 150 जिलों में साक्षरता दर सबसे कम है। 134 जिलों में विशेष साक्षरता अभियान शुरू किए गए हैं।

राष्ट्रीय साक्षरता मिशन के बारे में कुछ बुनियादी तथ्य

- इसकी सभी योजनाओं के अंतर्गत 12 करोड़ 3 लाख 50 हजार लोगों को साक्षर बनाया गया।
- साक्षर बनाने वालों में 60 प्रतिशत महिलाएं हैं।
- 23 प्रतिशत अनुसूचित जातियों के और 12 प्रतिशत अनुसूचित जनजातियों के हैं।
- साक्षरता कार्यक्रम के अंतर्गत 597 जिलों को शामिल किया गया।
- तीन जिलों को अभी शामिल किया जाना है।
- समग्र साक्षरता कार्यक्रम के अंतर्गत जिलों की संख्या 109 है।
- साक्षरता उपरांत कार्यक्रम के अंतर्गत जिलों की संख्या 172 है।
- सतत शिक्षा कार्यक्रम के अंतर्गत 314 जिले हैं।
- देश में स्थापित जन शिक्षण संस्थनों की संख्या 172 है।
- देश में स्थापित राज्य संसाधन केंद्रों की संख्या 25 है। ❐

(साभारः प्रेस सूचना कार्यालय)

DISHA - The IAS Academy
(Grooming all for the Civil Services)

Under the guidance of its Academic Directors **Dr. M.N. Singh** (English Medium) **प्रणव कुमार** (निदेशक हिन्दी प्रकोष्ठ), **DISHA** has secured over **28 selections** in 2005 IAS Examination.

SUBJECTS OFFERED
ENGLISH & हिन्दी

POL. SCIENCE & IR	भूगोल
GEOGRAPHY	इतिहास
HISTORY	समाजशास्त्र
SOCIOLOGY	राजनीति शास्त्र
PUB-AD	दर्शनशास्त्र
ECONOMICS	लोकप्रशासन
	अर्थशास्त्र
	हिन्दी साहित्य

At **DISHA** the aspirants are groomed for accomplishment and engineered for success. It is a tribute to our dedicated and learned faculty from

JNU, DU, & the IITs

GENERAL STUDIES
ENGLISH/ हिन्दी माध्यम

Numerous aspirants have benefitted from our holistic **G. S.** package. The integrated package is broken into **'Modules'** and taught by the subject expert.

Indian Constitution & Polity and Current Affairs	:	**Dr. M. N. Singh.**
History & Culture -	:	**S.S.Yadav**
Geography & Environmental Issues:		**Pranav Kumar**
Indian Economy -	:	**J. Krishna**
Statistics & Mental Ability -	:	**S. P. Singh**
General Science & Technology	:	**Pranav Kumar**

The subject-expert G. S. Team of **DISHA** has successfully groomed the aspirants through class lectures and **Basic, Advance** or **Model test series.** Every aspirant can benefit from **DISHA** faculty and become the Indian bureaucrat of tomorrow.

MAIN BRANCH

FOUNDATION COURSE : 2007, 08 & 09

BATCHES COMMENCE ON : 18th Oct., 13th Nov. & 27th Nov.

POSTAL GUIDANCE ENGLISH MEDIUM: G.S, Pol. Science, Geography, History, Economics,

पोस्टल गाइडेंस (हिन्दी माध्यम): भूगोल, इतिहास, समाजशास्त्र, राजनीति शास्त्र, लोक प्रशासन, हिन्दी साहित्य, सामान्य अध्ययन,

MAIN FEATURES OF THE COURSE ARE :

(i) 500+ hrs of classroom lectures

(ii) Revised and updated study materials

(iii) Conceptual Clarity through the regular tests

2003-(11), 2004-(16); **& 2005 PERFECT GROOMING AT DISHA, SOME OF OUR LUMINARIES**

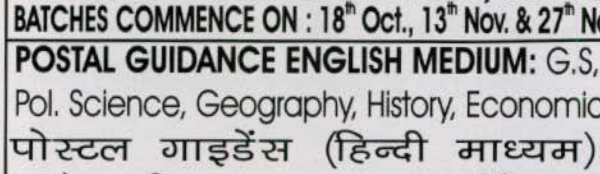

RANK 109 - SHUDHANSU D. MISHRA
RANK 156 - ABHISHEK KUMAR
RANK 186 - G. S. P. DAS
RANK 244 - ANUP KUMAR SAHOO

& MANY MORE

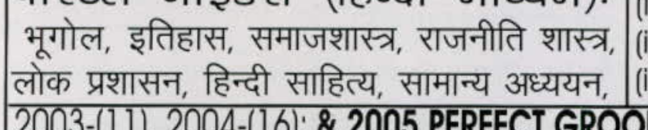

Our Specialized faculty also provides excellent classroom guidance for UGC (JRF/NET)

Note: Fee Concession to SC/ST Candidates (**Hostel Facilities Available**)

Contact personally or write for prospectus with a DD/MO for Rs. 50/- Favouring Disha - The IAS Academy

Head Office : 585, 1st Floor, Jay Pee Complex, Bank Street, Munirka, N.D. -110 067, Ph.: 011-65640506/07 Mob. 09818327090, E-mail : disha_the_ias_academy@yahoo.co.in

Jaipur Branch Office : 502, 5th Floor, Pink Tower, behind Sahara Chamber, Tonk Road Jaipur. Ph. 0141-3298887, Mob. 09351447086

KH-11/06/02

ग्रामीण बच्चों के लिए शिक्षा

के.के. खुल्लर

गांव को विकास की धारा से अगर जोड़ना है तो तीन शर्तों को पूरा करना निहायत जरूरी है। ये शर्तें है गांव में स्कूल, ग्राम पंचायत और सहकारी संगठन की स्थापना। इन तीनों में सबसे जरूरी है गांव में स्कूल होना है जो कि मानव संसाधन के विकास के लिए सबसे जरूरी शर्त है। इन तीनों इकाईयों सुदृढ़ीकरण के लिए प्रयास किया जाता रहा है लेकिन गांव शिक्षा की व्यवस्था करने के लिए स्कूल की सुविधा उपलब्ध करना 1986 की राष्ट्रीय शिक्षा नीति का सबसे बड़ा लक्ष्य रहा है। इस देश में लोकतंत्र के होने के फायदे को समझना हो तो शिक्षा पर नजर डालनी चाहिए, जिस पर रक्षा क्षेत्र के बाद सबसे ज्यादा निवेश किया जाता है। डेढ़ सौ साल की गुलामी के बाद आजादी के समय देश में शिक्षा की स्थिति काफी दयनीय थी, मगर आज हमारे देश में विद्यार्थियों, शिक्षकों और संरचना के लिहाज से दुनिया की दूसरा सबसे बड़ा शिक्षा तंत्र है। पुराने जमाने में हमारे गांवों एक कहावत काफी मशहूर थी कि 'अगर आप अगले एक साल के बारे में सोच रहे है तो नारियल का पेड़ लगाएं और अगले पांच सालों के बारे योजना बना रहे है तो चावल उपजाइए, लेकिन आप पूरी जिंदगी के बारे में सोच रहे हो तो अपने बच्चे को स्कूल भेजिए'।

आजादी के समय शिक्षा की स्थिति काफी खराब थी, बावजूद इसके कि अंग्रेजों ने इस दिशा में कुछ प्रयास किया था। प्राथमिक स्तर पर चार में से सिर्फ एक बच्चा और माध्यमिक स्तर पर दस में से केवल एक बच्चा स्कूल जाता था। हमारे देश की 85 फीसदी आबादी गांवों रहती थी, उनकी शिक्षा का स्तर इतना खराब था कि उसका जिक्र करने का कोई फायदा नहीं है। प्रत्येक राज्य में तकरीबन सौ ऐसे गांव थे जहां एक भी व्यक्ति शिक्षित नहीं था। इनमें लड़कियों की स्थिति काफी बदतर थी। पितृसत्तात्मक समाज में पैदा होने के कारण गांव के समाज में उनकी शिक्षा को गैरजरूरी समझा जाता था। हमारे देश के नेताओं को यह समझते देर नहीं लगी कि शिक्षा किसी भी देश की सबसे बड़ी पूंजी होती है और गांवों के विकास को समाहित किए बगैर किसी भी प्रकार का विकास कार्यक्रम कारगर नहीं होगा। इसलिए पंचवर्षीय योजनाओं में गांवों के विकास को प्राथमिकता दी गई तथा इसमें शिक्षा अहम भूमिका निभानी थी।

गांधीजी के पास गांवों को आत्मनिर्भर बनाने के लिए बेहद अच्छी योजना थी। 26 जुलाई 1942 को प्रकाशित 'हरिजन' नामक पत्रिका में उन्होंने कहा है कि प्रत्येक गांव की पहली चिंता यह होनी चाहिए कि वह अपने लिए अन्न और कपड़े के कपास का उत्पादन स्वयं ही करें। गांवों के पास पशुओं के लिए चारा और बच्चों के खेलने के किए मैदान होना चाहिए। गांवों के पास अपना स्कूल होना चाहिए जहां सबको आधारभूत प्राथमिक शिक्षा निःशुल्क और अनिवार्य रूप देने की व्यवस्था हो। गांव का संचालन गांव की पंचायत की करेगी, जिसपर विधायिका,कार्यपालिका और न्यायपालिका की सभी जिम्मेदारियां होंगी। कोई भी गांव इस तरह का गणतंत्र बन सकता है। बिहार के मलास और लिच्छवी में ग्रामीण गणतंत्र का अस्तित्व तब से रहा है जब रोम, स्पार्टा और एथेंस जैसे गणतंत्रों का नामोनिशान नहीं था। ग्रीस तक में महिलाओं और मजदूर वर्गो को लोकतांत्रिक प्रक्रिया से बाहर रखा गया था, लेकिन तब भी प्राचीन भारत के ग्रामीण गणतंत्र में सभी को भागीदारी का समान अधिकार था। गांधीजी कहते थे कि अगर सात हजारों गांवों में से एक गांव भी अपने लिए पंचायत चाहता है तो उसे यह व्यवस्था अपनाने से किसी को रोकना नहीं चाहिए। गांधीजी की नई तालीम नामक शिक्षा प्रणाली गांव के परिवेश और उसकी जरूरत के

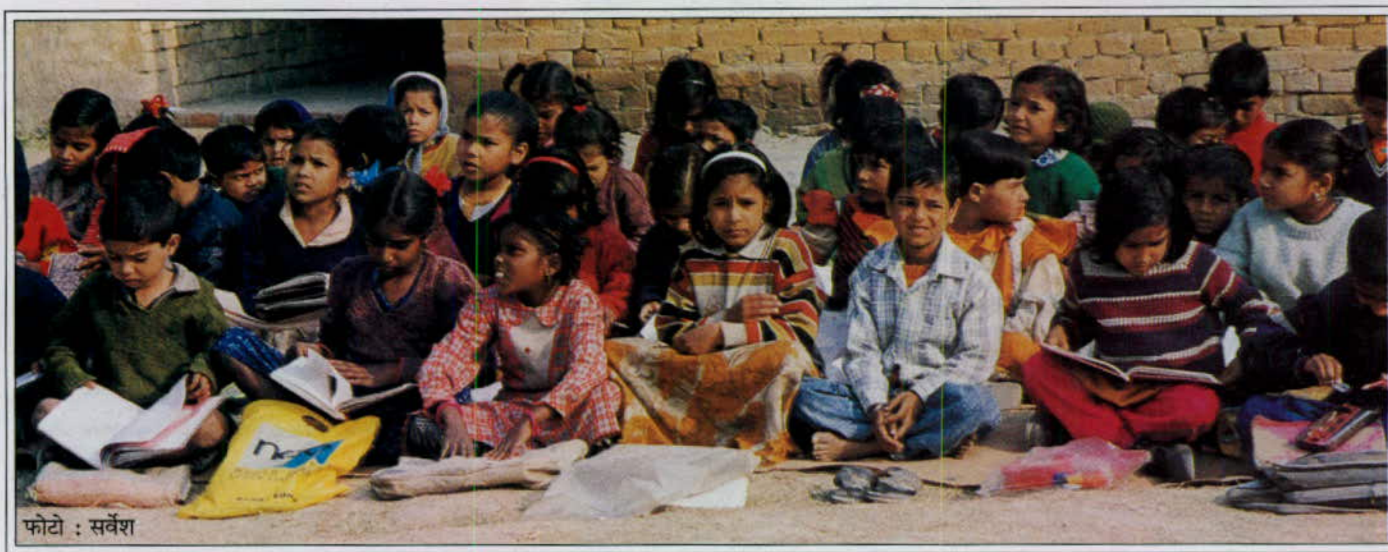

फोटो : सर्वेश

अनुरूप थी, जिसमें शरीर, आत्मा और मस्तिष्क तीनों का विकास संभव था, जबकि आम शिक्षा में सिर्फ मस्तिष्क के विकास को ही प्राथमिकता दी जाती है। लेकिन यह दुख की बात है कि गांधीजी की योजना को वर्धा योजना कह कर नकार दिया गया। किसी ने कहा है कि मौलाना आजाद, राधाकृष्णन और नेहरू जैसे नेताओं के नेतृत्व में मैकाले की शिक्षा प्रणाली को देश से एक बार में ही बाहर किया जा सकता था। लेकिन हमने कमिटियों और आयोगों को यह काम सौंप दिया, जिन्होंने अपने तरीके से काम किए और लेकिन इतने सारे पंचवर्षीय योजनाओं के बीत जाने के बावजूद हम शिक्षा प्रणाली का भारतीयकरण नहीं कर पाए। यहां तक कोठारी आयोग की सिफारिशों को नहीं लागू किया गया जो कि राष्ट्रीय नीति प्रस्ताव 1968 में शामिल था। इस दस्तावेज में समान शिक्षा व्यवस्था अपनाने, योजनाओं के प्रति विकासात्मक वातावरण बनाने और शिक्षा में वैज्ञानिक सोच शामिल करने की बात की गयी थी, ताकि अंधविश्वास को मिटाया जा सके, जिससे पूरा ग्रामीण भारत ग्रस्त रहा है। साथ ही, इस दस्तावेज में यह उम्मीद की गई थी कि इससे एक समानता और सामाजिक न्याय पर आधारित समाज का निर्माण हो सकेगा। इस नीति को लागू करने के प्रति उदासीनता दिखाई गई और ग्रामीण शिक्षा के संदर्भ में जो सुझाव थे वे महज कागज पर ही सिमटकर रह गए।

अगस्त 1985 में जाकर तत्कालीन प्रधानमंत्री राजीव गांधी ने शिक्षा की दशा पर चिंता जताते हुए शिक्षा प्रणाली को पूरी तरह बदलने की खुले शब्दों में वकालत की। 1986 की शिक्षा नीति को तैयार करने से पहले सरकार ने शिक्षा की चुनौतियां नाम से एक स्थिति रपट जारी की थी, ताकि इसपर देशव्यापी विचार-विमर्श हो सके। प्राथमिक शिक्षा के संदर्भ में इस रपट में कहा गया था कि यह सही है कि प्रत्येक बच्चे के शिक्षा के लिए उसके घर के एक किलोमीटर के दायरे में स्कूल होना चाहिए, मगर आकड़ों से यह तथ्य सामने आया है कि नौ लाख 45 हजार आवासीय क्षेत्रों में से एक लाख 91 हजार आवासीय में प्राथमिक स्कूल नहीं है, जो कि कुल आवासीय क्षेत्रों का पांचवा हिस्सा है। इसमें 16.41 फीसदी वैसे क्षेत्र भी शामिल हैं, जिनकी आबादी तीन सौ से कम है। जिन स्थानों पर प्राथमिक स्कूल हैं उनमें से 40 प्रतिशत के पास पक्के भवन नहीं हैं, 39.72 प्रतिशत स्कूलों में ब्लैकबोर्ड नहीं है तथा 59.50 प्रतिशत स्कूलों में पीने के पानी की व्यवस्था नहीं है। 35 प्रतिशत स्कूल ऐसे जहां सिर्फ एक शिक्षक तीन-चार अलग कक्षाओं के बच्चों को अकेले पढ़ाता है। इससे यह बात स्पष्ट है कि शिक्षकों के लिए यह असंभव है कि वह प्रत्येक बच्चे की शैक्षिक जिज्ञासा और जरूरत को समझ पाए और उसे पूरा कर पाए। दरअसल एक सर्वे से यह बात भी सामने आई है कि बहुत दिनों तक स्कूलों में एक भी शिक्षक पढ़ाने नहीं आते है और इनमें से कुछ शिक्षक किसी ऐसे व्यक्ति को पढ़ाने का जिम्मा सौंप देते है, जिनके पास आवश्यक योग्यता, प्रशिक्षण और अनुभव नहीं होता है। शिक्षा की योजना का निर्माण करते समय हमारी एक प्राथमिकता यह होनी चाहिए कि स्कूलों के ऐसी दयनीय स्थिति को सुधारा जा सके। यह सुनिश्चित करना होगा कि ग्रामीण इलाकों के स्कूलों में धीरे-धीरे शहरी स्कूलों जैसी सुविधाएं मसलन पक्के भवन, खेल का मैदान, उपकरण और पर्याप्त प्रशिक्षित शिक्षक आदि उपलब्ध हो। यह भी पाया गया कि गांव के स्कूलों में पढ़ाए जाने वाला पाठ्यक्रम बच्चे के परिवेश से नहीं मिलता है। यह भी देखा गया कि पढ़ाने का तरीका सही नहीं है। एक ही चीज को बार-बार पढ़ाया जाता है और चीजों को बगैर समझे-समझाए रटाने पर जोर दिया जाता है, इससे तो शिक्षा का मूल उद्देश्य ही पूरा नही होता है। इस वजह से बच्चे निरंतर स्कूल छोड़ते रहते है। सौ में सिर्फ 23 बच्चे ही आठवीं जमात तक पहुंच पाते है। लड़कियां लड़कों से ज्यादा संख्या में स्कूल छोड़ती हैं। सौ में से सिर्फ एक लड़की ही दसवीं तक पहुंच पाती है। नई शिक्षा नीति-1986 बनाते वक्त स्थिति काफी दयनीय थी। इसमें सुधार के लिए आवश्यक कदम उठाने की जरूरत थी।

इस स्थिति समझते हुए 1986 की कार्ययोजना में शिक्षा नीति के तहत ऑपरेशन ब्लैकबोर्ड की घोषणा की गयी। इसके तहत पूरे भारत में प्राथमिक स्कूलों की दशा सुधारने की योजना थी। 22 ऐसी चीजों की सूची बनाई जिनका सभी प्राथमिक स्कूलों में उपलब्ध होना आवश्यक था ताकि वे स्कूल जैसे लगें। इसमें पांच कमरों वाला पक्का भवन, जो मौसम के लिहाज से सही हो, लड़के और लड़कियों के लिए अलग-अलग शौचालय, ब्लैकबोर्ड, शिक्षण सामग्री, खेलने का समान और मैदान, पुस्तकालय, एक रेडियो, एक टेलिविजन, चॉक, डस्टर, टट-पट्टी और ग्लोब शामिल था। नए शिक्षकों में 50 प्रतिशत नियुक्ति महिलाओं शिक्षिकाओं की होनी थी, जिसमें उसी गांव की महिलाओं को प्राथमिकता देनी थी। यह प्राथमिक शिक्षा के लिए बहुत ही क्रांतिकारी योजना थी, देश पहले कभी ऐसी योजना नहीं बनी थी। इसके लिए धन मुहैया कराने की जिम्मेदारी केंद्र सरकार की थी।

विकास गुरू कहे जाने वाले महबूब-उल-हक ने अपनी किताब दक्षिण एशिया में मानव विकास,1998 में ग्रामीण शिक्षा का निम्न विकास होने के निम्न कारणों को बताया है:

★ कक्षाओं में अधिक बच्चों का होना,
★ शैक्षिक सामग्री का अभाव,
★ शिक्षकों का अपर्याप्त प्रशिक्षण,
★ शिक्षकों की गैरहाजिरी,
★ ग्रामीण इलाकों के लिए अलग से बजट का अभाव,
★ आम बजट में ग्रामीण इलाकों के अलग से प्रावधान नहीं होना,
★ शिक्षकों में विश्वास की कमी,
★ शैक्षिक संस्थानों में विकासात्मक वातावरण का पूर्ण अभाव
★ योजनागत स्तर पर शिक्षा को कम प्राथमिकता देना।

साथ ही, यह पाया गया है कि एक कमरे में दो-तीन कक्षाएं चलाई जाती है और कभी-कभी तो सभी कक्षाओं में बच्चे जमीन पर ही बैठते हैं। ग्राम पंचायत इसमें सक्रिय नहीं होती है, पंचायत के ज्यादातर सदस्य स्वयं ही अनपढ़ होते हैं, जिनके प्रशिक्षण के लिए कोई व्यवस्था नहीं होती है। एनआईईपीए, एनसीआरटी और एससीईआरटीएस इस तरह प्रशिक्षण देने में असमर्थ होते हैं।

उपर वर्णित कारणों के अलावा असली समस्या शिक्षा के संदर्भ में ज्ञान के अभाव को लेकर है कि आखिर शिक्षा कहते किसे हैं। गांधीजी

ने इस विषय के बारे में काफी अध्ययन किया था। उन्होंने कहा था कि हम शिक्षा का मूल्य वैसे ही निकालते हैं जैसे कि हम जमीन का मूल्य फिर शेयर बाजार में शेयर का मूल्य निकालते हैं। हम वैसी शिक्षा छात्रों को देना चाहते हैं, जिससे वे ज्यादा से ज्यादा कमा सकें। चूंकि लड़कियों के बारे में माना जाता है कि उन्हें कमाना नहीं है, इसलिए उन्हें शिक्षा की भी जरूरत नहीं है। प्राचीन भारत का इतिहास इस बात का साक्षी है कि उस समय शिक्षा केंद्र तक्षशिला, नालंदा, विक्रमशिला, उज्जैनी, वैशाली आदि जितने भी ज्ञान और शिक्षा केंद्र थे वे शहरों में दूर ग्रामीण इलाकों में थे। वे गांव होते थे जो नए विचार शहरों को देते थे, जबकि आज स्थिति उसके विपरीत है। अगर पुरानी परंपरा को कायम गांवों को विचार सृजन का केंद्र बनाना है तो इस दिशा में काफी काम करना होगा।

शिक्षा के खस्ताहाल के मद्देनजर में 2001 में सर्व शिक्षा अभियान शुरू किया गया। सर्व शिक्षा अभियान योजना अनेक ऐसी ही योजनाओं के अनुभव के आधार पर बनाया गया था जो इस क्षेत्र में पहले से काम कर रहे थे, मसलन जिला प्राथमिक शिक्षा कार्यक्रम, शिक्षा कर्मी योजना, लोकजुंबिश योजना आदि। सर्व शिक्षा अभियान में अनेक ऐसे कार्यक्रम हैं जिन्हें बच्चों के विशेष समूह को लक्षित करने के लिहाज से इसमें शामिल किया गया है। उनमें से एक प्राथमिक स्तर पर लड़कियों का राष्ट्रीय कार्यक्रम है। शिक्षा गांरटी और वैकल्पिक एवं नवीन शिक्षा दूसरा अहम कार्यक्रम है, जिसे विशेष तौर पर उन ग्रामीण इलाकों के लिए तैयार किया गया है जहां स्कूल की सुविधा नहीं है। दोपहार का भोजन (मिड डे मील) एक अन्य महत्वपूर्ण कार्यक्रम है। यह दुनिया में इस तरह का सबसे बड़ा कार्यक्रम है, जिसके तहत 11 लाख आवासीय क्षेत्रों के 7 लाख प्राथमिक स्कूलों में बच्चों को दिन में भोजन दिया जाता है और इनमें से तीन-चौथाई मतलब कि 75 प्रतिशत गांव के प्राथमिक स्कूल है। इस कार्यक्रम के कारण स्कूलों में दाखिला लेने वालों की संख्या तो बढ़ी ही है और साथ ही उनका स्कूल छोड़ना भी कम हुआ है। सर्व शिक्षा अभियान का यह लक्ष्य है कि 6 से 14 वर्ष के सभी बच्चें 2007 तक पांच साल की प्राथमिक शिक्षा पूरी कर ले। सर्व शिक्षा का प्रभाव यह हुआ है कि जहां 2001 में 39 मिलियन बच्चे स्कूल छोड़ देते थे, वहीं 2005 में यह संख्या घटकर 10 मिलियन हो गया। इस बात का जिक्र वित्त मंत्री ने अपने फरवरी 2006 के बजटीय भाषण में भी किया था।

नई सोचः समग्र या इनक्लूसिव शिक्षा

जुलाई 2006 में सम्मिलित शिक्षा नामक एक बिल्कुल नई योजना अपनायी गई थी, जिसका आशय है कि बच्चे की जरूरत के मुताबिक उसकी शिक्षा की व्यवस्था करना। यह महसूस किया गया कि ऐसे बच्चों की शिक्षा की व्यवस्था करनी जरूरी है, अगर ऐसा नहीं होता है तो सर्व शिक्षा अभियान विफल हो जाएगा। आमतौर आम शिक्षा में यह होता है कि बच्चे पढ़ने के लिए स्कूल जाते हैं लेकिन समग्र शिक्षा के तहत स्कूल को ही बच्चों तक ले जाया जाएगा। इस तरह की सोच और प्रयास की वजह 86वां संशोधन एक्ट, 2002 है, जिसके धारा 45 के तहत निःशुल्क और अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा प्रत्येक 14 साल तक की उम्र के बच्चे का मौलिक अधिकार बना दिया है। साथ ही 2004-05 से शिक्षा पर किए जाने निवेश को बढ़ाने के लिए 2 प्रतिशत का अतिरिक्त अधिभार लगाया गया है। जहां 2005-06 के बजट में शिक्षा मद के लिए 7156 करोड़ रुपये आबंटित किये थे, जो 2006-07 में बढ़कर 10141 करोड़ रुपये हो गये। यह आशा है कि समग्र शिक्षा हमारे 59 साल पुराने सार्वभौमिक प्राथमिक शिक्षा के सपने को पूरा करने में कारगर साबित होगी।

जरूरतमंद बच्चों की श्रेणी

★ सामाजिक, आर्थिक और शारीरिक अक्षम बच्चेः इस तरह के बच्चों को घर पर शिक्षा देने की सिफारिश की गई है। इसके तहत प्रत्येक बच्चे को सालाना 1200 रुपये आर्थिक सहायता दी जाती है। गांव की लड़कियों के लिए यह राशि बिना किसी पूछताछ के सीधे तौर पर दी जाएगी।

★ रेगिस्तान, पहाड़ों, हिम प्रदेशों और दूर-दराज के इलाकों रहने वाले बच्चे कभी भी अपने जीवन में स्कूल नहीं गए होते हैं। शायद उनके अभिभावक भी स्कूल नहीं गए होते है।

रणनीति

इस योजना की निम्नलिखित रणनीति है।

★ नए स्कूलों को उन्हीं आवासीय क्षेत्रों में खोले जहां पहले से स्कूल नहीं हैं।

★ विशेष जरूरत वाले बच्चों को मुख्यधारा के औपचारिक शिक्षा की व्यवस्था में लाया जाएगा और साथ ही सक्षम और असक्षम बच्चों को एकीकृत किया जाएगा।

★ शिक्षा अधिभार को प्राथमिक शिक्षा के लिए लगाया गया है, उसे माध्यमिक या उच्च शिक्षा पर कतई खर्च नहीं किया जाएगा।

★ 2003-04 में स्कूल छोड़ने का दर 31 प्रतिशत था, उसे आगामी वर्षों में और घटाया जाएगा।

★ स्कूल लौटने का अभियान चलाया जाएगा। इससे ग्रामीण शिक्षा के विकास में मदद होगी।

★ स्लम और फुटपाथ के बच्चों के लिए विशेष केंद्र बनाया जाएगा। गांवों में भी स्लम मिलते हैं। दरअसल कुछ आवासीय क्षेत्र पूरी तरह स्लम हैं।

★ बस-पड़ावों, रेलवे प्लेटफार्म, मजदूर की कॉलोनियों में रहने वाले कचरा बीनने और भीख मांगने वाले, खेतों, चाय तथा काफी के बगानों में काम करने वाले बच्चों को विशेष बच्चों की श्रेणी में गिना जाएगा।

समग्र शिक्षा का दर्शन

इस योजना के पीछे यह दर्शन है कि शिक्षा भारत में जन्म लेने वाले प्रत्येक बच्चे का बुनियादी अधिकार है, जिसमें विशेष जरूरत वाले बच्चे की शिक्षा पहली प्राथमिकता है। इसलिए इस योजना में जीरो रिजेक्शन की पॉलिसी अपनायी गई है, जहां सर्व शिक्षा का अभियान स्कूलों के बाहर चलाया जाएगा। दूसरे शब्दों में शिक्षा की व्यवस्था करने के लिए किसी भी स्थान पर स्कूल चलाया जा सकता है मसलन घर, पेड़ के नीचे, चरवाहों के लिए गतिशील स्कूल, घरेलू नौकरों, मछुआरों और यौन व्यापार में लगे अभिभावकों के बच्चों के लिए।

अपंगता अक्षमता कतई नहीं

समग्र शिक्षा के सिद्धांत तहत यह माना जाता है कि अपंगता होने का कतई मतलब अक्षमता होना नहीं है। इसलिए सरकार अपंग बच्चों के साथ जुड़ी हुई अंधविश्वास, गलत मान्यताओं और पूर्वाग्रह को मिटाने के लिए जागरूकता फैलाएगी। और वैसे भी अपंगता देखने वाले समाज के नजरिए में होती है, इसलिए उस तरह के दृष्टिकोण को बदलने की जरूरत है। इसलिए इस तरह की मान्यताओं को मिटाने की जिम्मेदारी सरकार की अपेक्षा समाज पर ज्यादा है। समाज के इस क्षेत्र में तरक्की के बगैर मानव विकास असंभव है। इसलिए ग्यारहवीं योजना में इस दूसरे क्षेत्रों पर ज्यादा ध्यान दिया जाएगा।

घर पर शिक्षा

अधिकांश अपंग बच्चे ग्रामीण इलाकों में ही होते हैं, इसलिए यह योजना खास तौर उनके लिए ही बनाई गई है और बच्चे की जरूरत का ख्याल करते हुए, उन्हें इस योजना में शामिल किया गया है। बच्चे को स्कूल में जाने के लिए तथा जीवन के लिए तैयार करना घर पर शिक्षा देने का उद्देश्य है। उन बच्चों को घर पर शिक्षा देने की व्यवस्था की जाती है जो गंभीर रूप से शारीरिक और मानसिक तौर पर असक्षम हैं, ऐसी व्यवस्था के तहत उन बच्चे को घरेलू परिवेश में ज्यादा बेहतर ढंग से पढ़ाया जा सकता है। इस तरह की शिक्षा में अभिभावक शिक्षक की भूमिका निभाते हैं। हरियाणा और केरल में शिक्षकों ने ऐसे बच्चों को घर पर ही जाकर पढ़ाया। इन इलाकों के अनेक जिलों में इस तरह की शिक्षा की व्यवस्था की गई है, जहां शिक्षक महीने में दो बार बच्चों को घर पर जाकर पढ़ाते हैं। इसका नतीजा यह हुआ कि अभिभावक अपने बच्चे की जरूरत और क्षमता को पहचानने लगे। इस योजना को हिमाचल प्रदेश मे काफी सफलता मिली। गैर-सरकारी संगठनों ने घर-घर जाकर उन बच्चों को पढ़ाया, जिनके लिए शिक्षा कभी नामुमकिन सपना होता था। यही उत्तरांचल और झारखंड में भी किया गया। तमिलनाडु में जरूरतमंद बच्चों के लिए ज्यादातर स्कूल ग्रामीण इलाकों में ही खोले

फोटो : सर्वेश

गए। कर्नाटक में घर पर शिक्षा की व्यवस्था आईईआरटी के द्वारा की जा रही है। यहां शिक्षकों को घर पर पढ़ाने के लिए 90 दिनों का प्रशिक्षण दिया गया। दक्षिण भारत के राज्यों में घर पर खासकर कारीगरी से संबंधित शिक्षा दी गई। पश्चिम बंगाल के 20 जिलों के 223 प्रखण्डों को इस योजना में शामिल किया गया, जिसके तहत अभिभावकों को समझाने, बच्चे की जरूरत के मुताबिक शिक्षा की व्यवस्था करना,उन्हें स्कूलों के लिए तैयार करना आदि काम अंजाम दिया गया। अबतक गंभीर रूप से अपंग 60000 बच्चों को इस योजना से लाभ मिला है और चार हजार से ज्यादा शिक्षकों को इस काम में लगाया गया है। कुल मिलाकर 26 राज्यों में 530 गैर-सरकारी संगठन बच्चों को घर पर जाकर पढ़ाने और उन्हें कारीगरी सिखाने में लगे है, जो इन बच्चों के लिए वरदान से कम नहीं क्योंकि उन्होंने अपने पूरे जीवन में कभी शिक्षा नहीं पाई थी।

दूर-दराज के गांवों में गतिशील या अस्थायी पुस्तकालय

महिला समाख्या

दूर-दराज के गांवों में गतिशील या अस्थायी पुस्तकालय बनाने का भी प्रावधान किया गया है, जो कि एक छोटे-स्कूल की तरह काम कर सकते हैं। वैसे 50 जिलों में आवासीय कैंप खोला गया है जहां पर साक्षरता दर 40 प्रतिशत से कम है। ग्रामीण महिलाओं के लिए विशेष कैंप लगाया गया। गांव की लड़कियों के लिए महिला समाख्या एक और महत्वपूर्ण कार्यक्रम है। यह हाशिए पर रह रहीं गांव की महिलाओं के लिए जागरुकता कार्यक्रम है। इसके तहत 9 राज्यों के 56 जिलों के 11000 गांव लाए गए हैं। इस कार्यक्रम के कारण लड़कियों को शिक्षा देने की ललक बढ़ी है। इस कार्यक्रम का कार्यान्वयन गांव का संघ के द्वारा एक सहयोगिनी के साथ मिलकर किया जाता हैं, जो घर-घर जाकर शिक्षा के माध्यम से लड़कियों में नया विश्वास पैदा करती है। अभी तक यह कार्यक्रम गांव की लड़कियों की शिक्षा और सशक्तीकरण के लिए बहुत कारगर माना गया है। एक सहयोगिनी कम से कम दस गांव की लड़कियों के लिए के एक मार्गदशक, नेता, सखी, आत्मविश्वास बढ़ाने वाली व्यक्ति के रूप में काम करती है। फिलहाल यह डच के सहयोग से चलाए

फोटो : अर्चना सूद

जाने वाला राज्यों का कार्यक्रम है। लेकिन इसे पंचायत और सहकारी संगठनों के द्वारा चलाए जाने वाला कार्यक्रम बना देना चाहिए, जिसके लिए धन मुहैया राष्ट्रीय कोष से किया जाना चाहिए।

यह याद रखना चाहिए कि आने वाले समय में बहुत से मुश्किल कामों को अंजाम देना है और फिलहाल लक्ष्य काफी दूर है। 27 प्रतिशत ग्रामीण आबादी घोर गरीबी में जी रही है साथ ही आवास, पीने का साफ पानी, सड़कों (40 प्रतिशत गांव सड़कों से नही जुड़े हैं) जैसी सुविधाओं की घोर कमी है। अब भी योजनाओं में शिक्षा हमारी पहली प्राथमिकता नहीं बन सकी है। 20 सूत्रीय कार्यक्रम में इसका स्थान 16वां है। ग्रामीण समाज के सशक्तीकरण के लिए सरकार की यह नीति होनी चाहिए कि वह विकास की प्रकिया में सभी को भागीदार बनाए, जिसके लिए जरूरी है कि सरकार अपनी प्राथमिकता को इस दिशा में बदले। शहरों से तकनीक गांव में ले जाने से काम नहीं होगा। 24 अप्रैल 1973 को 73वे संशोधन के लागू होने के बावजूद ग्राम पंचायत अभी भी गांव की शिक्षा के लिए चिंतित नहीं है, जबकि इसके लिए आवश्यक कानून सभी राज्यों सरकारों ने बनाया है। अगर इसे ठीक नहीं किया जाएगा तो शिक्षा के मामले में शहारों और गांवों के बीच का फर्क नहीं मिटेगा।

नवोदय विद्यालय

1986 में बच्चों के लिए एक कार्यक्रम शुरू किया गया था, जिसके तहत प्रवेश परीक्षा में उत्तीण होने वाले बच्चे को आवासीय स्कूलों में माध्यमिक दर्जे तक पढ़ने का अवसर मिलता। इन स्कूलों पर होने वाला पूरा खर्च सरकार वहन करती है प्रत्येक साल तकरीबन 30000 हजार छात्रों को इन स्कूलों प्रवेश परीक्षा के आधार पर में दाखिला मिलता है। इन स्कूलों में निशुल्क शिक्षा और आवास आदि के अलावा सभी सुविधाएं सरकार द्वारा मुफ्त में दी जाती है, जो गांव के बच्चों के लिए सरकार का उपहार है। यह उम्मीद की जाती है कि इन स्कूलों में पढ़ने वालों में 33 प्रतिशत लड़कियां हों। ऐसे स्कूल के बच्चे एक जगह से दूसरी जगह आराम से हस्तांतरण ले सकते हैं। नवोदय विद्यालय की प्रमुख विशिष्टता प्रवास प्रणाली है, जिसमें हिन्दी भाषी इलाकों में स्थिति विद्यालयों की नौवीं कक्षा के 30 प्रतिशत छात्रों को एक वर्ष की पढ़ाई गैर हिन्दी भाषी इलाकों में विद्यालयों में और इसी तरह गैर हिन्दी भाषी इलाकों में विद्यालयों के छात्रों को एक वर्ष की पढ़ाई हिंदी भाषी क्षेत्र में करनी होती है। इसका उद्देश्य राष्ट्रीय एकता को बढ़ावा देना है। नवोदय विद्यालय ग्रामीण इलाकों के प्रतिभाशाली बच्चों के शिक्षा के प्रति भारत सरकार की चिंता का सबसे अच्छा उदाहरण है। पिछले कुछ सालों में सिविल सेवा परीक्षा में अव्वल आने वाले उम्मीदवार उड़ीसा आदि जैसे राज्यों के ग्रामीण इलाकों से रहे हैं।

गांव इस देश की धड़कन हैं। गांवों से मिलने वाले अन्न के लिए शहर उनका कर्जदार है। भारत के महान दार्शनिक जैसे शंकराचार्य, रामानुज, राधाकृष्ण्न आदि गांवों से ही निकले थे। उसी तरह राजेंद्र प्रसाद, बीआर अम्बेडकर, लाल बहादुर शास्त्री जैसे लोग गांव के मिट्टी में पैदा हुए थे। बहुत से आजादी के सिपाही भगत सिंह, राम प्रसाद बिस्मिल, चंद्रशेखर आजाद, करतार सिंह सराबा जैसे शहीद गांव की मिट्टी के ही लाल थे। अब बारी शहरों की है कि गांवों को उनका कर्ज ब्याज के साथ वापस करें। शहरों को यह अहसास करना होगा कि असली धन बैंक में जमा पूंजी नहीं है बल्कि असली धन 7 लाख प्राथमिक स्कूलों में निवेश की गई पूंजी है, जिसमें तीन-चौथाई प्राथमिक स्कूल गांवों में है। किसी ने यह ठीक ही कहा है कि शिक्षा सरकार का विभाग नहीं है, बल्कि सरकार शिक्षा का विभाग है, जहां पर ग्रामीण बच्चों को प्राथमिकता अवश्य ही मिलनी चाहिए। ❐

(लेखक भारत सरकार के मानव संसाधन विकास मंत्रालय के शिक्षा विभाग के पूर्व निदेशक हैं)

(अनुवादक: नीरज कुमार)

शिक्षा के माध्यम से उपेक्षितों को अधिकार संपन्न बनाने के प्रयास

मीरा कुमार

आजादी के कई दशक बीत जाने के बाद भी हममें से बहुत से लोग आज तक गरीबी और उपेक्षा से उबर नहीं पाये हैं। इस तरह के लोगों में से अधिकतर समाज के ऐसे उपेक्षित वर्गों के हैं जिनकी ऐतिहासिक काल से उपेक्षा होती आयी है। ये लोग आज भी उपेक्षित हैं और समाज की मुख्य धारा से कटे हुए हाशिये पर जिंदगी बिता रहे हैं। हमारी जनसंख्या का काफी बड़ा हिस्सा इसी तरह के लोगों का है। जिनमें अनुसूचित जातियों के लोग जिनकी संख्या देश की कुल आबादी का 16.5 प्रतिशत है और अन्य पिछड़े वर्गों के लोग, जिनकी संख्या 52 प्रतिशत है शामिल हैं।

संवैधानिक गारंटियों और बड़ी संख्या में सामाजिक-आर्थिक उत्थान के बावजूद ये लोग उपेक्षित हैं। 1999-2000 की अवधि के लिए कराए गये सर्वेक्षण के अनुसार अनुसूचित जातियों के 36 प्रतिशत लोग गरीबी की रेखा से नीचे गुजर-बसर करते हैं जबकि सामान्य जनसंख्या में गरीबी रेखा से नीचे के लोगों की संख्या 27 प्रतिशत ही है।

यहां पर सवाल उठता है कि आखिर ये लोग क्यों उपेक्षित हैं। इसका एक प्रमुख कारण शायद यह है कि इन वर्गों के लोगों में निरक्षरता का प्रतिशत बहुत अधिक है। 1991 की जनगणना के अनुसार अनुसूचित जातियों में 37.4 प्रतिशत लोग साक्षर थे जबकि शेष जनसंख्या में यह साक्षरता का प्रतिशत 57.7 था। अनुसूचित जातियों के पुरुषों और स्त्रियों में भी साक्षरता का अंतर शेष जनसंख्या की तुलना में बहुत अधिक है।

साक्षरता मानव विकास सूचकांक का एक महत्वपूर्ण संकेतक है। अशिक्षा गरीबी और उपेक्षा के प्रमुख कारणों में से एक है। शिक्षा हर एक व्यक्ति का जन्मजात अधिकार है और गरीब से गरीब व्यक्ति को भी शिक्षा उपलब्ध होनी चाहिए। शिक्षा सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक सशक्तिकरण की पहली सीढ़ी है।

संयुक्त प्रगतिशील गठबंधन की सर्वोच्च प्राथमिकता

संयुक्त प्रगतिशील गठबंधन सरकार ने इन सब मसलों के महत्व को समझते हुए अपने राष्ट्रीय न्यूनतम साझा कार्यक्रम में उपेक्षित वर्गों के उत्थान को सर्वोच्च प्राथमिकता दी है। सरकार ने 'अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जनजातियों, अन्य पिछड़े वर्गों और धार्मिक अल्पसंख्यकों को अवसरों की पूर्ण समानता, विशेष रूप से शिक्षा और रोजगार के क्षेत्र में इस तरह की पूरी समानता उपलब्ध कराने' का संकल्प लिया है।

विश्वव्यापीकरण, उदारीकरण और निजीकरण के वर्तमान दौर में शिक्षा का महत्व बढ़ गया है। हम सूचना समाज की दहलीज पर खड़े हैं। यह एक ऐसा समाज होगा जिसमें ज्ञान, कौशल और उत्कृष्टता की बड़ी महत्वपूर्ण भूमिका होगी। इस बात को महसूस करते हुए कि शिक्षा में किया गया खर्च विकास, प्रगति और बेहतर भविष्य में ही किया गया निवेश है, सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्रालय ने समाज के दुर्बल वर्गों में साक्षरता दर में आमूल परिवर्तन लाने के लिए के कार्य को सर्वोच्च प्राथमिकता दी है। मंत्रालय ने कई महत्वपूर्ण पहल की हैं जिनमें समाज के अब तक उपेक्षित वर्गों को न केवल शिक्षा उपलब्ध कराने के लिए, बल्कि उन्हें समान अवसर उपलब्ध कराने संबंधी पहल भी शामिल हैं।

मैट्रिकोत्तर छात्रवृत्ति

मंत्रालय सुनियोजित तरीके से निवेश के जरिए अनुसूचित जातियों के शैक्षिक और आर्थिक विकास के लिए लगातार प्रयास करता रहा है। इनमें अनुसूचित जातियों के छात्रों को उच्च स्कूली शिक्षा सुलभ कराने में मद के लिए मैट्रिक के बाद छात्रवृत्ति प्रदान करने की योजना शामिल है। 2005-06 में करीब 25 लाख छात्रों ने इसका लाभ उठाया है। इस योजना के दायरे में आने वाले अनुसूचित जातियों के लोगों की संख्या, उनकी जनसंख्या वृद्धि दर की तुलना में बहुत अधिक ऊंची दर से बढ़ी है।

इस योजना के अंतर्गत राज्यों को दी जाने वाली केंद्रीय सहायता आम तौर पर 50:50 के अनुपात में दी जाती है और यह इसी कार्य के लिए उनकी वचनबद्धता से अतिरिक्त होती है। यह योजना सभी राज्यों/केंद्र शासित प्रदेशों में एकसमान रूप से लागू है। नौवीं योजना मे इसेक लिए राज्यों की वचनबद्धता 231 करोड़ रुपये वार्षिक व्यय करने की थी और इसके मौजूदा स्वरूप को देखते हुए दसवीं योजना में यह राशि 390 करोड़ रुपये हो जायेगी।

दसवीं योजना में अनुसूचित जातियों के छात्रों को एक करोड़ से अधिक मैट्रिकोत्तर छात्रवृत्तियां प्रदान की जाएगी। इसके लिए 3565 करोड़ रुपये का प्रावधान किया गया है। इस योजना को संचालित करने वाला सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्रालय चालू योजना के दौरान राज्यों को 1553.53 करोड़ रुपये की सहायता उपलब्ध करायेगा। यह राशि इस योजना के लिए राज्य सरकारों की 2012 करोड़ रुपये की कुल वचनबद्धता के अलावा है। कुल आबंटित राशि नौवीं योजना के दौरान हुए खर्च की तुलना में 350 प्रतिशत से अधिक है।

मैट्रिक पूर्व छात्रवृत्ति

मैट्रिक से पहले की कक्षाओं के लिए एक अन्य छात्रवृत्ति योजना भी बड़ी लोकप्रिय हो रही है। मैट्रिक पूर्व छात्रवृत्ति योजना नाम की इस योजना से अस्वच्छ समझे जाने वाले व्यवसायों, जैसे सफाईकर्मियों, मरे जानवरों की खाल निकालने वाले और चमड़ा कमाने वाले परिवारों के बच्चों को मैट्रिक स्तर तक की शिक्षा प्राप्त करने में मदद मिल रही है। इस समय इस तरह के व्यवसायों में लगे परिवारों के 5.89 लाख बच्चे इस योजना का फायदा उठा रहे हैं जो पिछले पांच वर्षों में सबसे अधिक है।

छात्रावास योजना

अनुसूचित जातियों के लड़कों और लड़कियों के लिए होस्टल बनाने की योजना का विस्तार किया गया है। पिछले चार वर्षों में लड़कों के लिए 285 और लड़कियों के लिए 183 होस्टलों के निर्माण की स्वीकृति दी गयी है। इन होस्टलों से अनुसूचित जातियों के परिवारों के बच्चों को पढ़ाई के लिए अनुकूल माहौल में अध्ययन करने में मदद मिलेगी। इन होस्टलों में अनुसूचित जातियों के अलावा अन्य जातियों के छात्रों को भी 10 प्रतिशत तक दाखिला दिया जाता है ताकि सभी बच्चों को मिलजुल कर रहने को प्रोत्साहन मिले।

इसी तरह महिला साक्षरता दर बढ़ाने के लिए मंत्रालय अनुसूचित जातियों और अन्य पिछड़ी जातियों की लड़कियों के होस्टलों के निर्माण को बढ़ावा दे रहा है और इस कार्य के लिए 100 प्रतिशत अनुदान दिया जा रहा है।

शैक्षिक कमियों का निवारण

अनुसूचित जातियों/जनजातियों के छात्र अपनी शैक्षिक कमियों की वजह से उन विभिन्न अवसरों का लाभ उठाने में असमर्थ रहे हैं जो आरक्षण के कारण उन्हें उपलब्ध हुए हैं। दुर्बल वर्गों के कई छात्रों को तो उच्च शिक्षा संस्थानों में प्रवेश के लिए प्रतियोगिता बड़ी कठिन प्रतीत होती है। नतीजा यह होता है कि तकनीकी और व्यावसायिक पाठ्यक्रमों में उनके लिए आरक्षित सभी सीटें नहीं भर पातीं और कोटा आधा-अधूरा ही भर पाता है। पढ़ाई के दौरान ठीक से तैयारी न हो पाने से भी उन्हें उन व्यवसायों में रोजगार नहीं मिल पाता जहां प्रतियोगिता परीक्षा के माध्यम से प्रवेश दिया जाता है। गैर-सरकारी संगठनों, विश्वद्यालयों और प्रतिष्ठित संस्थाओं को कोचिंग और इसी तरह के सहायता कार्यक्रमों से ऐसे छात्रों को रोजगार या व्यावसायिक और वैज्ञानिक पाठ्यक्रमों में प्रवेश के लिए प्रतियोगिता परीक्षाओं की तैयारी का मौका मिलता है।

बीपीओ सेक्टर में व्यावसायिक कौशल

इसके अलावा रोजगार की तलाश कर रहे अनुसूचित जातियों के लोगों को बीपीओ (बिजनेस प्रोसेस आउटसोर्सिंग) सेक्टर में कार्य करने का व्यावसायिक कौशल प्रदान करने के लिए मंत्रालय ने उन्हें कॉल सेंटर संबंधी प्रशिक्षण प्रदान करने की दिशा में एक महत्वपूर्ण पहल की है। दो प्रमुख आईटी कंपनियों एनआईआईटी लिमिटेड और एपटेक लिमिटेड को अंग्रेजी भाषा में आवाज और उच्चारण का प्रशिक्षण प्रदान करने, कंप्यूटर की जानकारी देने और व्यक्तित्व के विकास के बारे में बताने के लिए मुफ्त ट्रेनिंग देने का दायित्व सौंपा गया है। इससे 1140 छात्रों को फायदा होगा।

उच्च शिक्षा को बढ़ावा

आज हम ज्ञान की शक्ति से संचालित ऐसे नयी दुनिया में रहते हैं जो अत्याधुनिक टेक्नोलाजी पर आधारित है। इस कारण न केवल शिक्षा, बल्कि गुणवत्ता और विशेषज्ञता वाली शिक्षा आधुनिक और अत्याधिक प्रतिस्पर्धा विश्व की चुनौतियों से निपटने की आवश्यक शर्त हो गयी है।

उच्च शिक्षा के लिए बेहतर अवसर उपलब्ध होने से वरिष्ठ और विशिष्ट पदों तक पहुंचने के अवसर बढ़ जाते हैं। आधुनिक समाज ज्ञान पर आधारित समाज बनता जा रहा है।

भारत दुनिया के अग्रणी देशों की पंक्ति में शामिल होने का भरपूर प्रयास कर रहा है। लेकिन सब को साथ लेकर चलने वाले सामाजिक-आर्थिक विकास के बिना ऐसा संभव नहीं हो पायेगा। इसी कारण शिक्षा को न केवल समाज के सभी वर्गों के सशक्तिकरण का, बल्कि उपेक्षित वर्गों के उत्थान का महत्वपूर्ण माध्यम माना जा रहा है और इन उपेक्षित वर्गों को शेष समाज की बराबरी पर लाने के सुनियोजित प्रयास किये जा रहे हैं। इसके अंतर्गत उपेक्षित वर्गों के छात्रों के लिए उच्च शिक्षा के अवसर उपलब्ध कराने के उपाय भी शामिल हैं।

राजीव गांधी राष्ट्रीय फैलोशिप योजना

उच्च शिक्षा के क्षेत्र में अनुसूचित जातियों के छात्रों विकास की दिशा में एक महत्वपूर्ण मील का पत्थर जनवरी 2006 में शुरू की गयी राजीव गांधी राष्ट्रीय फैलोशिप योजना है। इसके अंतर्गत अनुसूचित जातियों के छात्रों को एमफिल और पीएचडी जैसे उच्च शैक्षिक पाठ्यक्रमों में अध्ययन के लिए विश्वविद्यालय अनुदान आयोग के नमूने पर वित्तीय सहायता के रूप में छात्रवृत्ति प्रदान की जाती है। यह योजना विश्वविद्यालय अनुदान आयोग के माध्यम से लागू की जाएगी और इससे हर साल 1333 छात्रों को लाभ होगा।

अनुसूचित जातियों के लिए राष्ट्रीय विदेशी छात्रवृत्ति

अनुसूचित जातियों के प्रतिभाशाली छात्रों को विदेशों में अध्ययन का अवसर उपलब्ध कराने के सुचिंतित प्रयास के तौर पर मंत्रालय राष्ट्रीय विदेशी छात्रवृत्ति योजना चला रहा है।

इस योजना के अंतर्गत अनुसूचित जातियों के छात्रों को इंजीनियरी, विज्ञान और टेक्नोलाजी में मास्टर डिग्री, पीएचडी और पोस्ट डाक्टोरल स्तर के विशिष्ट क्षेत्रों में उच्च अध्ययन और अनुसंधान करने के लिए वित्तीय सहायता दी जाती है। हर साल 20 छात्रवृत्तियां प्रदान की जाती है। योजना का उद्देश्य इन समुदायों के लोगों को इंजीनियरी, विज्ञान और टेक्नोलाजी के क्षेत्र में उच्च शिक्षा और अनुसंधान में सहायता करना है। वर्ष 2004-05 और 2005-06 में राष्ट्रीय विदेशी छात्रवृत्ति के लिए अनुसूचित जातियों के 27 छात्रों का चयन किया गया जिनमें में 13 को विदेश में प्रतिष्ठित विश्वविद्यालयों में प्रवेश मिल चुका है।

इस छात्रवृत्ति के अंतर्गत संस्थान द्वारा लिये जाने वाले पूरे शुल्क के भुगतान के साथ-साथ सालाना 8,200 अमेरिकी डालर का वार्षिक अनुरक्षण भत्ता, 500 डालर वार्षिक आकस्मिक भत्ता, आने-जाने का हवाई खर्च, चिकित्सा बीमा प्रीमियम, वीजा शुल्क आदि शामिल है। योजना के अंतर्गत मास्टर डिग्री और पीएचडी पाठ्यक्रमों के लिए वित्तीय सहायता 3 साल के लिए और पोस्ट डाक्टोरल अनुसंधान पाठ्यक्रम के लिए डेढ़ साल के लिए सहायता दी जाती है।

प्रतिभा परिस्थितियों की देन

छात्रवृत्ति योजना की एक महत्वपूर्ण बात यह है कि उपेक्षित वर्गों के छात्र अधिक से अधिक संख्या में इसका लाभ उठाने के लिए आगे आ रहे हैं। उनके शानदार शैक्षिक रिकार्ड से यह बात साबित हो जाती है कि प्रतिभा कोई प्रकृति प्रदत्त गुण नहीं है बल्कि परिस्थितियों से इसका विकास होता है। आवश्यकता इस बात की है कि ऐसा माहौल बनया जाए जिसमें अनुसूचित जातियों और जनजातियों के छात्र प्रतिभाशाली बनें। मेरे इस दृष्टिकोण से देश में बहुत से लोग सहमत होंगे और उद्योगों से जुड़े जाने माने लोग भी इससे इत्तेफाक करेंगे।

रोजगार के अवसर

आर्थिक लाभ और रोजगार के उपयुक्त अवसरों के बिना केवल उच्च शैक्षिक उपलब्धियों से कोई लाभ नहीं होगा। इसी बात को महसूस करते हुए मंत्रालय संयुक्त प्रगतिशील गठबंधन सरकार के राष्ट्रीय न्यूनतम साझा कार्यक्रम में किये गये वादे के अनुसार अनुसूचित जातियों और जनजातियों के युवाओं को रोजगार दिलाने में निजी क्षेत्र की महत्वपूर्ण भूमिका को बढ़ावा देने के लिए लगातार प्रयास कर रही है। इस संबंध में मंत्रालय उद्योगों और व्यावसायिक घरानों से नियमित संपर्क बनाए हुए हैं ताकि निजी क्षेत्र में अनुसूचित जातियों/जनजातियों के लिए आरक्षण सहित उनके रोजगार की दिशा में सकारात्मक पहल हो सके। मंत्रालय के लगातार प्रयासों से गुणात्मक प्रगति हुई है और इस दिशा में ठोस कार्रवाई के लिए कुछ कार्यक्रमों, जैसे अनुसूचित जातियों और जनजातियों के विद्यार्थियों के लिए छात्रवृत्ति और कौशल विकास कार्यक्रमों के बारे में आम सहमति बन रही है।

ये उपाय अनुसूचित जातियों और अन्य उपेक्षित वर्गों को राष्ट्र निर्माण और राष्ट्र के विकास में समता और समानता के आधार पर अवसर उपलब्ध कराने की छोटी लेकिन महत्वपूर्ण पहल है। इनका उद्देश्य सुविधाओं से वंचित और उपेक्षित वर्गों के साथ हुई ज्यादतियों को दूर करना है। इन लोगों ने सदियों से उपेक्षा झेली है और ये भेदभाव का शिकार होते आए हैं। यहां तक कि इन्हें शिक्षा का बुनियादी अधिकार तक हासिल नहीं रहा है, उच्च शिक्षा तो इनके लिए बहुत दूर की चीज है। दूसरे, शिक्षा के माध्यम से अनुसूचित जातियों को अधिकार संपन्न बनाने से खास तौर पर उच्च शिक्षा में उनका प्रतिनिधित्व बढ़ाने से, देश के सामाजिक और आर्थिक विकास का लाभ सब लोगों को उपलब्ध कराने की मदद मिलेगी। ❐

(लेखक सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्री (भारत सरकार) हैं)

बच्चों का कल्याण और सरकारी कार्यक्रम

आर.एम. धर द्विवेदी

कोई भी राष्ट्र प्रगति की सीढ़ियां कितनी तेजी से चढ़ सकता है, यह इस पर निर्भर है कि उस राष्ट्र की आने वाली पीढ़ियों में कितनी ताकत है, कितना उत्साह है और उन्हें कितना प्रोत्साहित किया जाता है। शायद इसीलिए कहा जाता है कि नई पीढ़ी, पुरानी पीढ़ी से एक कदम आगे होती है क्योंकि वह उन नीवों पर अपनी इमारत बुलंद करती है जो उनकी पिछली पीढ़ियों ने बना रखी थीं। शिशुओं को अनुकूल वातावरण प्रदान करना, उनमें अर्जित विचारों का समावेश करना और उन्हें ऐसी शिक्षा देना जिससे वे अपने आस-पास की समस्याओं के प्रति सजग हो सकें - किसी भी समाज के लिए निहायत बुनियादी और जरूरी चीज़ें हैं। बालकों का सामाजिक, आर्थिक, वैज्ञानिक, तकनीकी या जीवन के अन्य पहलुओं के विकास में महत्वपूर्ण योगदान होता है। ये बातें महात्मा गांधी ने भी रेखांकित की थीं, जब उन्होंने कहा था कि बच्चे राष्ट्र के पिता होते हैं। भारतीय गणतंत्र के प्रथम प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू को बच्चों से बहुत प्रेम था। हमारे संविधान ने बालकों के चहुंमुखी विकास के लिए अनेक उपबंध किए हैं। संयुक्त राष्ट्र संघ और विकसित देशों समेत पूरी दुनिया बालकों के कल्याण को लेकर काफी सजग है। बाल दिवस मनाने के मूल में यही विचार है कि हम इन तथ्यों पर नियमित अंतराल पर पर्याप्त ध्यान दे सकें। इसके अलावा इस बात का मूल्यांकन भी कर सकें कि पिछले प्रयासों या अतीत में चलाई गई योजनाओं से कितने सकारात्मक परिणाम सामने आए।

बच्चों को दिए जाने वाले अधिकारों के संबंध में यह ध्यान दिया जाना जरूरी है कि उनके जीवन, शिक्षा, स्वास्थ्य तथा विकास के अधिकारों के अलावा शोषण के विरुद्ध अधिकार इत्यादि ऐसे मूलभूत राष्ट्र संघ द्वारा इन्हें क्रमबद्ध, सुव्यवस्थित व सुसंगठित रूप भी प्रदान किया गया है। संयुक्त राष्ट्र संघ ने इन अधिकारों को लिपिबद्ध करते हुए एक बाल अधिकार कन्वेंशन बनाया था। इस कन्वेंशन में 54 अनुच्छेद थे। इसे 2 सितंबर 1990 को अंतरराष्ट्रीय कानून के रूप में मान्यता प्राप्त हुई। भारत संयुक्त राष्ट्र संघ का पुराना और सक्रिय सदस्य रहा है। भारत ने इस समझौते को नवंबर 1992 में अनुमोदित करते हुए बालक-बालिकाओं के संरक्षण को लेकर अपनी जोरदार कटिबद्धता जताई। कन्वेंशन में बच्चों की परिभाषा दी गई है। 18 वर्ष से कम आयु के बालक-बालिकाओं को 'बच्चा' माना गया है बशर्ते उस संबंधित देश की सरकार या कानून उन्हें इस उम्र के पहले तक की सीमा लगाकर 'बच्चा' न घोषित करती हो। मसलन-कुछ देशों में 15 वर्ष से कम आयु के बालक-बालिकाओं को ही 'बच्चा' माना जाता है। वहां 15 वर्ष से ऊपर की आयु वाले बच्चों को इस परिभाषा के मुताबिक 'बच्चा' नहीं माना जाएगा।

इसके अलावा सिद्धांतत: सभी अधिकार बच्चों पर निरपवाद रूप से लागू होंगे और उन्हें सभी प्रकार के भेदभावों से संरक्षण प्रदान किया जाएगा। कन्वेंशन के मुताबिक बच्चे की सर्वाधिक अनुकूल रुचियों पर ध्यान दिया जाना चाहिए। परिवारहीन बच्चों को संरक्षण दिया जाना भी जरूरी है ताकि वे आश्रयहीन न रहें। भारत सरकार बच्चों के भविष्य को लेकर सजग है और उसकी यह सजगता बड़े-छोटे और नए-पुराने तमाम कार्यक्रमों में देखी जा सकती है। विकास के पैमाने पर आगे बढ़ रहे भारत ने अपने पारंपरिक सामाजिक-आर्थिक संरचना में तेजी से बदलाव का अनुभव किया है। औद्योगिकरण और शहरीकरण की बढ़ती रफ्तार से बड़े पैमाने पर प्रवसन और पलायन

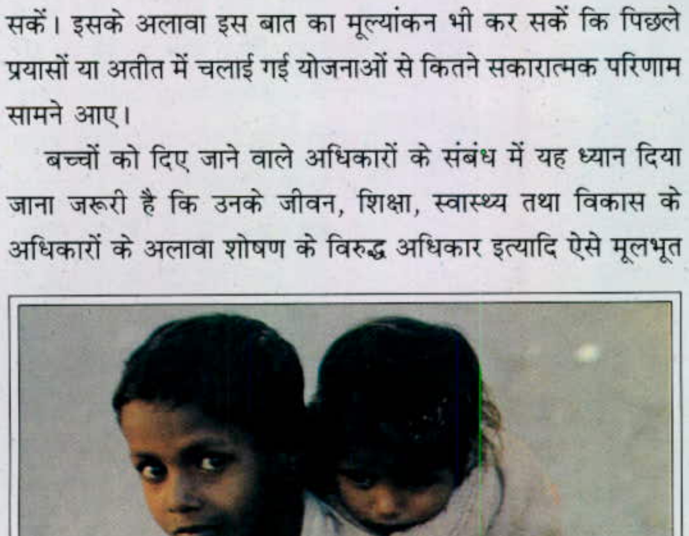

फोटो : सर्वेश

सामने आया है। सदियों पुरानी संयुक्त परिवार की संरचना बदली है। किसी स्थानीय समुदाय के भीतर उन सहायताओं पर भी असर पड़ा है जो बच्चों के लिए उपलब्ध थीं। सरकार इन सभी परिवर्तनों और समस्याओं के प्रति सावधान है और इसीलिए उसने समाज रक्षा का कार्यक्रम चला रखा है।

समाज रक्षा का कार्यक्रम वास्तव में एक ठोस, सुविचारित और दूरदर्शी कार्यक्रम है। समाज रक्षा के क्षेत्र में कार्यक्रम और विधियों का लक्ष्य आत्मनिर्भर बनने के लिए विकास हेतु विविध सेवाओं के माध्यम से इस समूह को सुसज्जित करना है। सभी कार्यक्रम उपेक्षित, दुरूपयोग और शोषण के निवारण के लिए हैं तथा बच्चों को विकास की मुख्यधारा से जोड़ने का प्रयास करते हैं। केंद्र सरकार के अलावा राज्यों की सरकारें, स्वायत्त निकाय और गैर-सरकारी संगठन तथा यहां तक कि निगमित विश्व नीतियों को तैयार करने और उन्हें क्रियान्वित करने में लगे हुए हैं। समाज रक्षा का कार्यक्रम संकट की स्थिति में उलझे बच्चों पर केंद्रित है। मतलब यह, कि उन पर केंद्रित है जो बेसहारा हैं, दुरूपयोग के खतरों के प्रति संवेदनशील हैं, परित्यक्त या अनाथ हैं, कानून में फंसे हैं या फिर संघर्ष अथवा आपदाओं के शिकार हैं। बच्चों का यही समूह है जिसे देखभाल और सुरक्षा की विशेष आवश्यकता भी है।

बच्चों की परवरिश का प्रारंभिक जिम्मा परिवार का होता है। जहां परिवार की सुरक्षा उपलब्ध नहीं है वहां कुछ दूसरे माध्यमों और तरीकों से पुनर्वास और सामाजिक एकीकरण की कोशिशें की जाती हैं। उदाहरण के लिए - दत्तक ग्रहण, फोस्टर देखभाल, प्रयोजन या फिर बच्चों को उत्तरवर्ती देखभाल संगठनों में भेजना इत्यादि। सरकार ने बेसहारा बच्चों के लिए समेकित कार्यक्रम चला रखा है। इसका लक्ष्य सड़कों से बच्चों की वापसी को सुनिश्चित बनाना है। इस कार्यक्रम के अंतर्गत राज्य सरकारें, संघ राज्य क्षेत्र प्रशासन, स्थानीय निकाय, शैक्षिक संस्थाएं तथा स्वयंसेवी संगठन वित्तीय सहायता प्राप्त करने के पात्र होते हैं। परियोजना लागत का 90 फीसदी भारत सरकार द्वारा प्रदान किया जाता है। शेष राशि का खर्च संस्था या संगठन को स्वयं उठाना पड़ता है। इस योजना के अंतर्गत कोई पूर्व परिभाषित लागत शीर्ष निर्धारित नहीं है।

प्राथमिक शिक्षा को सभी तक पहुंचाने की दिशा में सर्वशिक्षा अभियान एक ऐतिहासिक एवं प्रशंसनीय पहल है। यह बालिकाओं पर, विशेषत: अनुसूचित जाति/जनजाति और अल्पसंख्यक वर्ग की बालिकाओं पर ध्यान देना है। लड़कियों के लिए नि:शुल्क पाठ्यपुस्तकें उपलब्ध कराने के अलावा यह कार्यक्रम विद्यालय छोड़कर जा चुकी बालिकाओं को वापिस लाने के लिए अभियान भी चलाता है। घरेलू दबावों, संसाधनों का अभाव और गरीबी की मार झेल रही इन बालिकाओं के लिए शिक्षा बेहद जरूरी चीज है। चूल्हा-चौका करने और झाड़ू-पोंछा लगाने के दबावों के चलते लड़कियां स्वयं अपने ही घरों तक में नहीं पढ़-लिख पातीं। ग्रामीण इलाकों में तो स्थितियां और भी ज्यादा गौर करने लायक है जहां लड़कियों को बोझ समझा जाता है और यह सवाल आज के विकसित दौर में भी पूछ ही लिया जाता है कि इनकी पढ़ाई-लिखाई किसी काम की नहीं है। ये आखिर पढ़ लिखकर करेंगी क्या? खुशी की बात है कि समाज की सोच धीमे-धीमे ही सही, बदल रही है। अब लोग लड़कियों की शिक्षा के प्रति कुछ जागरूक होने लगे हैं। ध्यान देने की बात है कि एक पुरुष की शिक्षा एक स्त्री की शिक्षा से ज्यादा उपयोगी नहीं है। पुरुष अकेला ही शिक्षित होता है जबकि नारी का शिक्षित होना पूरे परिवार के शिक्षित होने के बराबर है। कहते हैं कि माँ ही अपने बच्चे के लिए पहली पाठशाला

बेसहारा बच्चों के लिए समेकित कार्यक्रम के अंतर्गत कई संघटक आते हैं(जैसे- नगर स्तरीय सर्वेक्षण(परामर्श, मार्गदर्शन तथा रेफरल सेवाएं प्रदान करने वाले संपर्क कार्यक्रम(गैर-पारंपरिक शिक्षा कार्यक्रम और बच्चों के लिए छात्रावासों का निर्माण आदि। इस योजना के प्रारंभ से 21 राज्यों/संघ राज्य क्षेत्रों में 290 संगठनों के जरिए 2,57,364 बेसहारा बच्चों को सहायता दी गई है।

केंद्रीय दत्तक-ग्रहण संसाधन एजेंसी (कारा) की स्थापना 1990 में की गई थी और उसके बाद इसे 1999 में दत्तक ग्रहण से संबंधित मामलों में एक स्वायत्त निकाय के रूप में कार्य करने के लिए सोसाइटी रजिस्ट्रेशन अधिनियम, 1860 के अंतर्गत पंजीकृत किया गया। यह एजेंसी उन भारतीय एजेंसियों को मान्यता प्रदान करती है, जो राज्य सरकार की सिफारिश के आधार पर दत्तक-ग्रहण के आवेदनों पर कार्रवाई करती हैं। वर्तमान में देश में 73 मान्यता प्राप्त एजेंसियां और 162 सूचीबद्ध एजेंसियां हैं।

देश में दत्तकग्रहण को प्रोत्साहित करने के लिए शिशु गृहों को सहायता की योजना भी सरकार ने चला रखी है। वर्ष 2004-05 में 45 गैर-सरकारी संगठनों को अनाथ और परित्यक्त बच्चों के लाभ के लिए 38 शिशु गृह यूनिटें और तीन राज्य सरकारों (उत्तर प्रदेश, कर्नाटक और मिजोरम) को 10 शिशु गृह यूनिटों को संचालित करने के लिए 1.58 करोड़ रुपये आबंटित किए गए।

उल्लेखनीय उपलब्धियों के लिए राष्ट्रीय बाल पुरस्कार का प्रारंभ 1996 में किया गया। इसका लक्ष्य 4 वर्ष से 15 वर्ष की आयु तक के उन बच्चों की पहचान करना है जिन्होंने शिक्षा, कला, संस्कृति, खेल आदि क्षेत्रों में विशिष्ट उपलब्धियां हासिल की हैं। इसके तहत हर राज्य/केंद्रशासित प्रदेश को प्रतिवर्ष एक स्वर्ण पदक और 35 रजत पदक दिए जाते हैं।

होती है। इस प्रकार लड़कियों की शिक्षा एक ऐसा लाभकारी निवेश है जिसका फायदा घर-परिवार और समाज से लेकर पूरी की पूरी पीढ़ी तक को मिलता है। सर्व शिक्षा अभियान ने इन्हीं बातों को समझते हुए शिक्षा के समान अवसरों को बढ़ावा देने के लिए शिक्षक जागरूकता कार्यक्रम चला रखा है, बालिकाओं के लिए विशेष प्रशिक्षण (कोचिंग) की व्यवस्था की है और बालिका शिक्षा से संबंधित प्रयोगात्मक परीक्षाओं पर विशेष ध्यान दिया है। जनसंख्या के विशालकाय होने, अंधविश्वासों और जड़ता के विद्यमान होने और कई अन्य व्यावहारिक समस्याओं के बावजूद बालिकाओं की प्राथमिक शिक्षा तक पहुंच बढ़ रही है।

सर्वशिक्षा अभियान के अतिरिक्त मध्याह्न भोजन योजना और शिक्षा गारंटी योजना जैसी अन्य योजनाएं भी हैं जो शिक्षा को सुलभ बनाने के लिए सक्रिय हैं। ग्रामीण क्षेत्रों पर विशेष ध्यान दिया जाता है क्योंकि शिक्षा की स्थिति ग्रामीण इलाकों में चिंताजनक है। मध्याह्न भोजन योजना के तहत राज्यों को ग्रामीण क्षेत्रों में स्कूलों के रसोईघरों में छप्पर या शेड बनाने के लिए संपूर्ण ग्रामीण रोजगार योजना (एसजीआरवाई) से धनराशि लेने की इजाजत दी गई है। इसके अलावा सर्वशिक्षा अभियान के अंतर्गत बनने वाले नए स्कूल भवनों में भी रसोईघर की शेड बनाने की अनुमति पहले से ही दे दी गई है। राज्यों को यह अनुमति भी दी गई है कि वे सर्वशिक्षा अभियान के तहत मिलनेवाली राशि से हर विद्यालय को बर्तन खरीदने के लिए दो हजार रुपये वार्षिक अनुदान दे सकें। पूर्वोत्तर राज्यों और सिक्किम पर शिक्षा व बालकों के विकास के लिए अलग से ध्यान दिया जाता है। मसलन - किशोर कुसमंजन, निवारण और नियंत्रण की स्कीम के लिये वर्ष 2004-05 के दौरान निर्मुक्त राशि जहां 0.82 करोड़ रुपये रही। इसके अलावा अल्पसंख्यकों के बच्चों की शिक्षा, स्वास्थ्य, विकास और उनके लिए अनुकूल स्थितियां उत्पन्न करने पर विशेष जोर दिया जाता है। शायद सरकार के इन्हीं जोरदार प्रयासों का ही फल है कि शिक्षा के लिए बच्चों के दाखिलों में बढ़ोत्तरी हुई है। इसके अलावा सरकार शिक्षा की गुणवत्ता को लेकर भी चैतन्य है क्योंकि शिक्षित नागरिक ही लोकतंत्र में शासन कार्यों में उचित ढंग से और प्रभावी रूप से हिस्सा ले पाने में सक्षम होते हैं। इसीलिए गुरुदेव रवींद्रनाथ टैगोर ने कहा था कि मानव के लिए जितनी भी प्राप्तियां हैं(शिक्षा उन सबमें सबसे बढ़कर है।

शिक्षा और स्वास्थ्य के अलावा अन्य बातों पर भी ध्यान दिए जाने की जरूरत है। बांध बनाने के कारण या औद्योगीकरण के कारण विस्थापित हुए लोगों के बच्चों पर विशेष ध्यान दिए जाने की आवश्यकता है। आदिवासियों और वनवासियों का समूह भी देखभाल की जरूरत को बड़ी गहराई से रेखांकित करता है। शहरों और महानगरों की मलिन बस्तियों में रहने वाले उन बच्चों पर भी ध्यान दिए जाने की महती आवश्यकता है जो बालश्रम की चपेट में आ जाते हैं। खेलने-कूदने की उम्र और शिक्षा-प्राप्त करने की अवस्था में ये घर-परिवार चलाने का गुरुत्तर दायित्व उठाने को बाध्य हैं। इनमें बड़ी बेफिक्री है। शायद इन्हीं बाल मजदूरों को देखकर ही किसी ने कहा है - "सो जाते हैं फुटपाथ पर, अखबार बिछा के मजदूर कभी नींद की गोली नहीं खाते"। लेकिन उनकी इस मासूम बेफिक्री को खत्म करने की जरूरत है। यह दायित्व सिर्फ सरकार का ही नहीं है बल्कि एक-एक नागरिक, एक-एक अभिभावक के प्रयासों और तमाम सामुदायिक प्रयत्नों के माध्यम से ही बच्चों को उज्ज्वल भविष्य का स्वामी बनाया जा सकता है। ❐

(लेखक स्वतंत्र पत्रकार हैं)

स्वास्थ्य की स्थिति के संवेदनशील सूचकांक शिशु मृत्यु दर में महत्वपूर्ण गिरावट आई है। 1946-51 में यह 134 प्रति हजार भी जो वर्ष 2002 में घटकर 63 प्रति हजार तक आ गई है। शिशु मृत्युदर को जीवित शिशुओं को सापेक्ष दर में देखा जा सकता है जो 1951 में बालक-बालिकाओं के लिए क्रमश: 32.45 और 31.66 थी, 1991-2001 में बढ़कर क्रमश: 61.3 और 63 हो गई। यह एक सकारात्मक संकेत है।

शिक्षा के लिए निर्धारित योजना परिव्यय पहली पंचवर्षीय योजना के 151.20 करोड़ रुपये से बढ़कर दसवीं पंचवर्षीय योजना (2002-07) में 43,825 करोड़ रुपये हो गया है। सकल घरेलू उत्पाद (जीडीपी) की तुलना में शिक्षा पर किया जाने वाला व्यय वर्ष 1951-52 के 0.64 फीसदी से बढ़कर वर्ष 2003-04 द्धके बजट अनुमानों के मुताबिकऋ में 3.74 फीसदी हो गया है।

दसवीं पंचवर्षीय योजना के लिए निर्धारित 43,825 करोड़ रुपये का योजना परिव्यय नौवीं पंचवर्षीय योजना के 24,908,38 करोड़ रुपये से 1.76 गुना ज्यादा है। इसमें से प्राथमिक शिक्षा और साक्षरता विभाग को 30,000 करोड़ रुपये तथा माध्यमिक एवं उच्च शिक्षा विभाग को 13,825 करोड़ रुपये दिये गये हैं।

सर्वशिक्षा अभियान ने वर्ष 2004-05 की अवधि में 44,719 नए विद्यालय खोले, 29,018 स्कूल भवनों का निर्माण किया, 2,10,431 नए शिक्षकों की नियुक्ति की और 50,044 शौचालयों के निर्माण को अपनी स्वीकृति दी।

प्राथमिक शिक्षा के सार्वभौमीकरण के लिए जिला प्राथमिक शिक्षा कार्यक्रम 1994 में प्रारंभ किया गया था। इस कार्यक्रम ने अभी तक 1,60,000 (एक लाख साठ हजार) से ज्यादा स्कूल खोले हैं। इनमें 84,000 वैकल्पिक शिक्षण केंद्र भी शामिल हैं जिनमें 35 लाख बच्चे शिक्षा ग्रहण कर रहे हैं।

शिक्षा में गुणवत्ता के लिए शिक्षकों का प्रशिक्षण

शिक्षा के सुपरिचित चार स्तम्भों में शिक्षक शिक्षा का सर्वोपरि स्थान है। अन्य तीन स्तंभ शिक्षा शास्त्र, वस्तुपरकता (तटस्थता) और प्रतिबद्धता के नाम से जाने जाते हैं। एक प्रशिक्षित शिक्षक शिक्षा की एक पूंजी है, जबकि अशिक्षित शिक्षक पूर्ण पाठन प्रक्रिया के लिए एक खतरा। इस विषय से संबंधित हालिया अध्ययनों से साबित कर दिया है कि योग्य और प्रशिक्षित शिक्षक न केवल शिक्षा नीति और कार्यक्रमों की तैयारी के लिए आवश्यक है, बल्कि उस पर अमल करने के लिए भी। शिक्षक का प्रशिक्षण विद्यार्थियों में उत्साह भरने तथा शिक्षण पद्धति को सुधारने के लिए भी आवश्यक है। सुप्रसिद्ध शिक्षा नियोजक डीआर गाडगिल के शब्दों में शिक्षा में गुणात्मक सुधार, चाहे इसे हम बेहतर पाठ्य पुस्तकों के संबंध में, उन्नत शिक्षण पद्धतियों अथवा परीक्षा सुधारों के रूप में देखें, कुछ हद तक अतिरिक्त संसाधनों बेहतर इस्तेमाल पर निर्भर अवश्य करता है, परंतु ज्यादातर शिक्षकों की योग्यता और ईमानदारी पर ही निर्भर होता है। संसाधनों से अधिक शिक्षकों और शिक्षा संस्थानों के प्रमुख की वस्तुपरकता और व्यावसायिक सदाचार/ईमानदारी की दरकार होती है। जितना अच्छा शिक्षक होगा, सीखने की प्रक्रिया भी उतनी ही अच्छी होगी।

केंद्रीय भूमिका

संभवतः यही कारण है कि मानव संसाधन विकास मंत्रालय (एचआरडी) से संबंद्ध संसदीय परामर्शदात्री समिति ने 19 जुलाई 2006 की अपनी हाल की बैठक में इस विषय पर गहराई से विचार किया। बैठक की अध्यक्षता करते हुए मानव संसाधन विकास मंत्री श्री अर्जुन सिंह ने शिक्षक-शिक्षा की आवश्यकता पर जोर दिया। उन्होंने कहा कि विद्यालयीन शिक्षा में शिक्षक शिक्षण की केंद्रीय भूमिका है क्योंकि एक प्रशिक्षित शिक्षक ही तेजी से बदलते शिक्षा परिदृश्य में अध्यापन पद्धतियों और प्रविधि के जरिए गुणवत्ता सुनिश्चित कर सकता है।

समिति को बताया गया कि देश में वर्तमान में, 466 डीआईई टीज़ (जिला शिक्षा एवं प्रशिक्षण संस्थान) और डी आर सीज़ (जिला संसाधन केंद्र), 104 शिक्षण महाविद्यालय (सीटीइज़) और 31 उन्नत शिक्षा अध्ययन संस्थान काम कर रहे हैं। एसएसए (सर्व शिक्षा अभियान) के तहत भी अशिक्षित शिक्षकों को दूरवर्ती पद्धति और एनसीटीई (राष्ट्रीय शिक्षक शिक्षा परिषद) और एनसीईआरटी (राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद), वार्षिक सेवा कालीन प्रशिक्षण कार्यक्रमों के जरिए प्रशिक्षण दिया जाता है। इग्नू (इंदिरा गांधी मुक्त विश्वविद्यालय) ने पूर्वोत्तर क्षेत्र के लिए खासतौर पर पाठ्यक्रम तैयार किये हैं। इस क्षेत्र में अशिक्षित शिक्षकों की संख्या सबसे ज्यादा है। समिति को सूचित किया गया है कि ग्यारहवीं पंचवर्षीय योजना में शिक्षक शिक्षण योजना का एसएसए के साथ विलय सुनिश्चित रूप से हो जाएगा ताकि बुनियादी शिक्षा को लोकव्यापीकरण के मुख्य मुद्दे को समग्र और सर्वव्यापी दृष्टिकोण प्रदान किया जा सके।

लक्ष्य

यह याद रखना होगा कि प्रारंभिक शिक्षा के लोकव्यापीकरण के प्रति हम सांस् तिक और संवैधानिक दोनों तरह से प्रतिबद्ध हैं। पिछले पांच दशकों से भी अधिक समय से इस लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए विभिन्न पद्धतियां अपनायी गयी हैं। विभिन्न कारणों से लक्ष्य अभी भी अधूरा ही है। सबसे प्रमुख कारण यह है कि देश की जनसंख्या की वृद्धिदर शिक्षा की विकास दर से कहीं अधिक तेज गति से बढ़ रही है। रक्षा के बाद शिक्षा में सर्वाधिक निवेश के बाद भी हमें लगता है कि हम उस यात्री के समान है जिसका बटुआ बीच यात्रा में ही चोरी हो गया है और शिक्षा रूपी बस के इंजन में गंभीर खराबी हो गयी है तथा सड़क के आसपास कोई प्रशिक्षित मिस्त्री भी उपलब्ध नहीं है।

एनपीई-86 का अद्यतन (1992)

1992 में अद्यतन की गयी राष्ट्रीय शिक्षा नीति (एपीई), 1986 में स्पष्ट किया गया है कि शिक्षक शिक्षण एक निरंतर जारी रहने वाली प्रक्रिया है और इसकी सेवा पूर्व तथा सेवाकालीन अवयवों को अलग-अलग नहीं किया जा सकता है। नीति निर्देश के अनुसार शिक्षक शिक्षण प्रणाली को पूरी तरह से बदलना जरूरी है। इस बात पर विचार किया गया कि शिक्षक शिक्षण का नया पाठ्यक्रम शिक्षकों को नयी नीति के रूझान यानी प्रारंभिक शिक्षा के लोकव्यापीकरण को राष्ट्रीय शिक्षा प्रणाली के माध्यम से प्राप्त करने में मदद करेगा।

यह निर्णय लिया गया कि प्राथमिक शिक्षकों और अनौपचारिक तथा प्रौढ़ शिक्षा केंद्रों में काम करने वाले कर्मचारियों के लिए सेवापूर्व और सेवा कालीन प्रशिक्षण देने के लिए देश के प्रत्येक जिले में डीआईई टीज (जिला शिक्षा एवं प्रशिक्षण संस्थान) खाले जायेंगे। यह सोचा गया कि जैसे-जैसे डीआईईटी स्थापित होते जायेंगे, अधोस्तरीय प्रशिक्षण संस्थाएं बंद होती जायेंगी। उसी तरह की व्यवस्था माध्यमिक विद्यालय स्तर पर भी तय की गयी।

राष्ट्रीय शिक्षक शिक्षा परिषद एनसीटीई को शिक्षक शिक्षण संस्थाओं को अधिमान्य करने की जिम्मेदारी सौंपी गई। इसके साथ ही अधोस्तरीय

प्रशिक्षण संस्थाओं के प्रसार को रोकने की जिम्मेदारी भी उन्हें दी गई। परंतु यह अनुभव किया गया कि एनसीटीई चूंकि एक वैधानिक संस्था नहीं है, यह कानूनी कार्य नहीं कर सकती और न ही प्रशिक्षण स्तर को बनाए रखने में कुछ कर सकेगी। इसलिए 1993 में संसद के कानून के जरिए वैधानिक शक्तियां इसे प्रदान की गयीं और शिक्षण योजना का पुनर्गठन किया गया। दसवीं पंचवर्षीय योजना (2002-07) के लिए नये दिशानिर्देश जारी किये गए। मानव संसाधन विकास मंत्रालय द्वारा प्रकाशित कुछ चयनित शैक्षिक आंकड़ों के अनुसार प्राथमिक से उच्चतर माध्यमिक स्तर तक 57 लाख 10 हजार शिक्षक हैं और 2203 प्रशिक्षण संस्थायें भी हैं, जो 11वीं योजना के दौरान क्रैश कार्यक्रम के लिए पूर्णतया उचित हैं।

दिशानिर्देश

नये दिशानिर्देशों की प्रमुख विशेषताओं में डीआईईटी/सीटीई/आईएएसई/एससीईआरटी की स्वी त परंतु नौंवी योजना अंत तक अपूर्ण परियोजनाओं को पूरा करना है। इसके तहत सभी शिक्षक शिक्षण संस्थाओं की क्षमताओं का पूर्ण उपयोग और प्रशिक्षुओं की उपलब्धियों के आधार पर मापी गयी शिक्षक-शिक्षा कार्यक्रमों की गुणवत्ता में सुधार लाना शामिल है। डीआईईटीज़ को सौंपी गई जिम्मेदारियों में प्रमुख है प्राथमिक शिक्षा के लोकव्यापीकरण के लिए जिला स्तरीय योजनाएं तैयार करना और इस लक्ष्य को हासिल करने के लिए सामुदायिक समर्थन को बढ़ावा देना। लगभग शत-प्रतिशत केंद्रीय सहायता वाली केंद्र प्रायोजित इस योजना के लिए केंद्रीय सहायता के मानक भी निश्चित किये गये हैं।

जहां तक सीटीईज़ (शिक्षक शिक्षण महाविद्यालयों) की भूमिका और कार्यों का संबंध है, दिशानिर्देशों में माध्यमिक विद्यालयों के शिक्षकों के लिए विषयोन्मुखी और विषयवस्तु केंद्रित प्रशिक्षण कार्यक्रम चलाने की बात कही गयी है ताकि प्रत्येक शिक्षक को कम से कम एक विषय में अल्पकालिक और दीर्घकालिक दोनों तरह का प्रशिक्षण अवश्य दिया जाये। माध्यमिक शाला शिक्षकों को मूल्य शिक्षा, कार्य अनुभव, पर्यावरण शिक्षा, जनसंख्या शिक्षा, सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी, व्यवसायीकरण और कंप्यूटर शिक्षा सहित विज्ञान जैसे क्षेत्रों में खास तौर पर प्रशिक्षित किया जायेगा।

उन्नत शिक्षा अध्ययन संस्थानों के लिए दिशानिर्देशों में शिक्षकों के प्रशिक्षण की बात कही गयी है ताकि प्राथमिक शिक्षकों को शिक्षा देने वाले शिक्षकों को तैयार किया जा सके। माध्यमिक शालाओं के प्रधानाचार्यों के लिए एक पृथक प्रशिक्षण कार्यक्रम तैयार करने की आवश्यकता है। दिशानिर्देशों में जरूरतमंद संगठनों की विशेष श्रेणी के लिए मार्गदर्शक कार्यक्रमों की भी बात कही गयी है। शिक्षक पुस्तिकाओं के साथ-साथ अध्यापन की सहायक सामग्रियों और स्वयं सीखने वाले निर्देशों के पैकेजों की भी सिफारिश की गयी है।

राज्य शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषदों के लिए केंद्रीय सहायता राज्यों और केंद्र के बीच 50:50 के आधार पर निश्चित की गयी है। अधिकतम सहायता एक करोड़ रूपये तक दी जा सकेगी। शिक्षा शास्त्र के नवीकरण संबंधी परियोजनाओं को प्राथमिकता दी जाती है। कम्प्यूटर शिक्षा के प्रकोष्ठों की स्थापना को भी वरीयता दी जाती है।

नौवीं योजना के अंत तक केंद्र द्वारा राज्यों और केंद्र शासित प्रदेशों को शिक्षक शिक्षण के लिए 12 अरब 20 करोड़ 20 लाख रुपए जारी किये गये थे। दसवीं योजना में शिक्षक शिक्षण पर कुल 9 अरब 50 करोड़ रुपये के परिव्यय का प्रावधान है, जिसमें से अब तक 7 अरब 26 करोड़ 82 लाख रुपये जारी किये जा चुके हैं।

डीआईईटीज-मुख्य संवाहक

अप्रशिक्षित शिक्षकों की बकाया संख्या को कम करने अर्थात उन्हें प्रशिक्षित बनाने में डीआईईटीज़ भारी जिम्मेदारी निभाते हैं। एक अप्रैल, 2002 को देश में 599 जिले और 556 डीआईईटीज़ थे। इनमें से 466 काम कर रहे हैं जबकि 90 विभिन्न कारणों से बंद पड़े हैं। ये अकार्यशील डीआईईटीज़ झारखंड, अरूणाचल प्रदेश, हरियाणा, पंजाब और उड़ीसा राज्यों में स्थित हैं। 44 जिलों में अभी ये संस्थान नहीं खोले जा सके हैं। ये जिले अरूणाचल प्रदेश 4, बिहार 17, गोवा 1, हरियाणा 2, झारखंड 12, महाराष्ट्र 1, अंडमान और निकोबार दीपसमूह 1, दमन और दीयू, दादर नगर हवेली 1 और चंडीगढ़ 1 में स्थित है। इन राज्यों में डीआईईटीज़ न खोले जाने का कारण ये है कि राज्य सरकारों ने उनकी भावी योजनायें ही नहीं भेजी हैं। दिलचस्प बात है कि मुंबई में भी डीआईईटी की स्थापना नहीं हुई है क्योंकि वहां उसके लिए भूमि ही उपलब्ध नहीं है।

एएएसए के अंतर्गत शिक्षक शिक्षण

सर्वशिक्षा अभियान के अंतर्गत दिया जा रहा प्रशिक्षण भी कोई कम महत्वपूर्ण नहीं है। इसके तहत ब्लाक और क्लस्टर स्तर पर शैक्षिक संसाधन केंद्र खोले जा रहे हैं। प्रत्येक जिले को विभिन्न ब्लाकों में बांटकर हरेक में ब्लाक संसाधन केंद्र बीआरसी स्थापित किये गये हैं और 8-10 शालाओं को एक कलस्टर संसाधन केंद्र के तहत समूहबद्ध किया गया है। देश में इस समय 7200 बीआरसी और 6700 सीआरसी हैं जिनमें शिक्षकों को क्षमता विकास का प्रशिक्षण दिया जाता है। 20 दिन के वार्षिक सेवाकालीन प्रशिक्षण के अलावा नयी भर्ती वाले शिक्षकों को 30 दिन का प्रशिक्षण दिया जाता है। इसके अलावा 60 दिन का प्रशिक्षण उन शिक्षकों को भी दिया जाता है जिन्होंने किसी भी तरह का व्यवसायगत प्रशिक्षण नहीं प्राप्त किया है। प्रशिक्षण कार्यक्रम में शिक्षाशास्त्र नवीकरण प्रक्रिया, शाला भ्रमण, मौके पर दिशानिर्देश,

शैक्षणिक तैयारियों के लिए मासिक शिक्षक बैठकें, शिक्षकों की पठन सामग्री का विकास और शाला विकास के लिए समुदायों का अनुकूलन जैसे विषय सम्मिलित हैं।

अनियमित शिक्षकों का अद्‌भुत संसार

मानव संसाधन विकास मंत्रालय (शिक्षा विभाग) के अनुसार प्राथमिक/कनिष्ठ बुनियादी विद्यालयों में 19 लाख 12 हजार 931 शिक्षक और मिडिल/वरिष्ठ बुनियादी विद्यालयों में 15 लाख 81 हजार 739 शिक्षक है जिनमें से प्राथमिक स्तर के 14 प्रतिशत और मिडिल स्तर के 13 प्रतिशत शिक्षकों को एनसीटीई द्वारा निर्धारित किसी भी तरह का सेवा पूर्ण प्रशिक्षण नहीं मिला है। इस तरह के अप्रशिक्षित शिक्षकों की, प्राथमिक स्तर पर कुल संख्या 4 लाख 73 हजार 436 है। नगालैंड, अरूणाचल प्रदेश, त्रिपुरा जैसे पूर्वी राज्यों में ये प्रतिशत कुछ अधिक ही है। असम में 64 प्रतिशत अप्रशिक्षित शिक्षक हैं। इसलिए इन राज्यों में मुक्त और दूरवर्ती शिक्षा के जरिए प्रशिक्षण दिया जाता है। शिक्षकों और उनके प्रशिक्षण में असंतुलन के कारण प्राथमिक शिक्षा के लोकव्यापीकरण कार्यक्रम पर विपरीत प्रभाव पड़ा है। गैर-सरकारी संगठनों और निजी शिक्षा एजेंसियों द्वारा लगाये गये अनुमान की संख्या कहीं अधिक है। इसके अलावा अनेक राज्यों में प्राथमिक/बुनियादी स्तर पर विद्यार्थियों की बढ़ती संख्या के लिए शिक्षकों की आवश्यकता को पूरा करने के लिए विकेंद्री त रूप से भर्ती किये जा रहे पैरा शिक्षक पूर्णतया अप्रशिक्षित हैं और अप्रशिक्षित शिक्षकों की कुल संख्या का लगभग 10 प्रतिशत होते हैं। अधिकांश परा-शिक्षकों की भर्ती योग्यताओं को शिथिल कर जाती है।

ज्ञानवान समाज की ओर

शिक्षक शिक्षण कार्यक्रम का यह सबसे महत्वपूर्ण पहलू है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति के अनुसार हर पांच वर्ष में पाठ्यक्रम की समीक्षा होनी चाहिए। पिछली बार इसकी समीक्षा 1998 में की गयी थी। पाठ्यक्रम दस्तावेज के प्रारूप ड्राफ्ट करीकुलम डाकुमेंट में विषय से जुड़े संदर्भों, सरोकारों और चुनौतियों का समावेश है। इसमें खासतौर पर सेवापूर्ण और सेवाकालीन शिक्षक-शिक्षण, शिक्षकों को शिक्षा देने वाले शिक्षकों की शिक्षा और शिक्षक-शिक्षण प्रबंधन पर जोर दिया गया है। आधुनिक सभ्यता वैज्ञानिक और प्राविधिक क्रांति के अभिशापों तथा इससे उपजने वाली चिंताओं पर इसमें विशेष रूप से चर्चा की गयी है। एचआईवी एड्स, किशोर शिक्षा, समावेशित शिखा, जनसंख्या शिक्षा, शांति शिक्षा, मानव अधिकारों और मूल्य शिक्षा को भी डाकुमेंट के प्रारूप में शामिल किया गया है। एनसीईआरटी के परामर्श से प्रारूप की समीक्षा की जा रही है। एनसीटीई ने भी भविष्य के लिए एक ऐसी योजना और पाठ्यक्रम तैयार किया है जो शिक्षक शिक्षण के क्षेत्र में नयी क्रांति का मार्ग प्रशस्त करेगा। भारत को ज्ञानवान समाज-एक ऐसा समाज जिसमें कोई भी बच्चा शाला से बाहर नहीं रहे, कोई भी शिक्षक अप्रशिक्षित नहीं हो, कोई भी वयस्क निरक्षर और बेरोजगार नहीं रहे-बनाने में प्रशिक्षित शिक्षकों की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण है। ❒

(साभारः प्रेस सूचना कार्यालय)

भारत में साक्षरता के प्रसार के लिए सभी संसाधनों का इस्तेमाल

मानव संसाधन विकास मंत्री, श्री अर्जुन सिंह ने कहा है कि देश में साक्षरता के प्रसार के लिए हमें अपने सभी संसाधनों का इस्तेमाल करना होगा। इस संदर्भ में राष्ट्रीय खुली शिक्षा संस्थान (एनआईओएस) आज और ज्यादा प्रासंगिक है। उन्होंने कहा कि आज हम देश में ज्ञान का प्रस्फुटन देख रहे हैं। इसे प्रासंगिक और अर्थपूर्ण बनाने के लिए हमें किसी भी समय और कहीं भी आधार पर शिक्षा के अवसर उपलब्ध कराने चाहिए। शिक्षा केवल कक्षाओं तक सीमित नहीं रहनी चाहिए।

स्कूल शिक्षा तथा साक्षरता सचिव ने कहा कि एनआईओएस को राज्यों के खुले विद्यालयों, व्यावसायिक शिक्षा, अध्यापक प्रशिक्षण और प्रौढ़ शिक्षा के साथ जुड़ने के प्रयास करने चाहिए। इस पहल से ज्यादा से बच्चे खुली शिक्षा प्रणाली में शामिल होंगे। उन्होंने कहा कि केंद्रीय मानव संसाधन विकास मंत्रालय 11वीं पंचवर्षीय योजना में इस बारे में जरूरी प्रावधान बनाने की योजना बना रहा है।

एनआईओएस के अध्यक्ष श्री एनसी पंत ने कहा कि इस संस्थान का उद्देश्य स्कूल की पढ़ाई बीच में छोड़ जाने वाले बच्चों, ग्रामीण युवाओं, शहरी गरीबों, कन्याओं और महिलाओं, अनुसूचित जाति तथा अनुसूचित जनजाति, पिछड़े वर्गों, अल्पसंख्यकों, विकलांगों और भूतपूर्व सैनिकों जैसे विशेष समूहों को शिक्षा प्रदान करना है, ताकि शिक्षा में एकरूपता लाई जा सके। एनआईओएस कार्यक्रम की एक सबसे बड़ी खूबी यह है कि इस कार्यक्रम के अंतर्गत शिक्षा माध्यमिक स्तर पर सात क्षेत्रीय भाषाओं में और उच्चतर माध्यमिक स्तर तक तीन भाषाओं में उपलब्ध है। इस कार्यक्रम में माध्यमिक स्तर तक दिल्ली तथा पुणे में मांग पर परीक्षा की सुविधा उपलब्ध है और हाल ही में पटना में भी यह सुविधा उपलब्ध कराई गई है। एनआईओएस के प्रयासों के फलस्वरूप हर साल संस्थान में लगभग 3 लाख छात्र दाखिला लेते हैं।

बाल विकास की वर्तमान स्थिति

अभिषेक रंजन सिंह

बचपन एक हसीन समय होता है और युवावस्था में अपने बचपन को याद करके किसे पलभर की खुशी नहीं होती। लेकिन क्या ऐसा सभी के साथ है? शायद नहीं? ऐसी स्थिति में दुनिया के बच्चों के बारे में कुछ सकारात्मक सोचना और करना ही भविष्य के लिए शायद सर्वाधिक हितकर होगा। दुनिया में 24.6 करोड़ बच्चे बाल श्रमिक हैं, जिनका बचपन हाशिए पर है और शिक्षा से दूर भी। संयुक्त राष्ट्र संघ की एक रिपोर्ट के अनुसार इसमें से एक-तिहाई बच्चे खान, रसायन, षि और कीटनाशक जैसे खतरनाक उद्योगों या फिर खतरनाक मशीनों, घरेलू कामों, वर्कशाप और अन्य प्रतिबंधित कार्यों में लगे हुए हैं। यहां उनसे काम लेने के साथ-साथ उनका शारीरिक एवं मानसिक शोषण भी किया जाता है। यदि 192 गैर-सरकारी संगठनों की बात मानें तो इनकी मदद से 43,088 गलियों में से मात्र 212 बच्चों को ही घर वापस लाया जा सका है। लेकिन ये बाल-मजदूर ऐसे गरीब और मजबूर परिवार के हैं, जो मजदूरी करके पूरे परिवार का खर्च चलाते हैं। गौर करने की जरूरत है कि इन बाल मजदूरों का काम छुड़वाने के बाद इन मजदूरों के घर काम कैसे चलेगा? पिछले कुछ वर्षों में जिन बाल-श्रमिकों को उद्योगों, खेतों, भट्ठों और होटलों से हटाया गया, उनमें से अधिकांश की रोजी-रोटी की व्यवस्था अब तक नहीं हो पायी है। फलस्वरूप सरकार द्वारा इस विकट समस्या से निपटने के लिए बड़े स्तर पर ढांचागत कदम उठाये जाने की जरूरत है।

हाल ही में संसद में पूछे गये एक सवाल के जवाब में कहा गया कि 15 वर्ष से कम आयु वाले लगभग 1.17 करोड़ बच्चे स्कूल जाने की बजाय अपने परिवार के सदस्यों का पेट भरने के लिए लगातार दिन-रात कठिन परिश्रम करने को मजबूर हैं। सरकार का वह कार्य सराहनीय है, जिसमें आदेश दिया गया है कि कोई भी सरकारी कर्मचारी बाल-मजदूरों से काम नहीं लेगा तथा इसकी लिखित जानकारी वह सरकार को देगा। सरकार का यह कदम मानवीय सर्वोच्च न्यायालय के आदेश के बाद आया, जिसमें कहा गया है कि किसी बच्चे को खतरनाक काम में लगाने के बजाय पढ़ाई में लगाया जाय। यहां ध्यान देने की बात है कि सरकारी कर्मचारियों की संख्या देश में है ही किसी जिनके बाल-मजदूरी न करवाने से बाल-मजदूरी में कमी आ जायेगी? एक रिपोर्ट के अनुसार सितंबर 2004 में शुरू की गयी एक योजना के फलस्वरूप स्कूल न जाने वाले शिशुओं की संख्या अब घटकर 81 लाख की रह गयी है। यह संख्या योजना की शुरूआत के समय 4.2 करोड़ थी। इन तमाम कोशिशों के बाद भी भारत में बाल-श्रमिकों की संख्या अभी-भी करोड़ों के आसपास ही भटक रही है। केंद्र व राज्य सरकारों के प्रयासों से बाल-श्रमिकों की संख्या कम जरूर हुई है लेकिन इसके संदर्भ में बहुत कुछ किया जाना अभी बाकी है। बाल मजदूरों के द्वारा किया गया कठोर श्रम, अशिक्षा, शोषण तथा रोटी के लिए संघर्ष कोई नई बात नहीं है। यह समस्या आज उत्पन्न नहीं हुई है। बाल-श्रम का भी अपना एक अलग इतिहास है। बाल-मजदूरी की समस्या की जड़ें आजादी के काल तक जाती हैं। उपनिवेश काल में भारत में ये बाल श्रमिक खेतों, कारखानों या अन्य खतरनाक उद्यमों में काम करते थे। इसे रोकने के लिए सबसे पहले अंग्रेज सरकार ने 1881 में 'राजकीय श्रम आयोग' गठित किया था। इसमें भारतीय बाल श्रमिकों को काम पर लगाना एक 'अपराध' न मानकर 'बुराई' माना गया था। फिर यह क्रम लंबे समय तक चलता रहा और 1946 में आकर अंग्रेज सरकार ने यह स्वीकार किया कि बाल श्रमिकों को उद्योगों में लगाना गैर-कानूनी है। बालश्रम से संबंधित अधिनियम 1933 में बना। आजादी के बाद 1948 में कारखाना अधिनियम बनाया गया, जिसमें 10 वर्ष से 18 वर्ष के बाल श्रमिकों को खतरनाक मशीनों पर लगाये जानें का निषेध किया गया।

फोटो : बंसीलाल परमार

भारतीय संविधान के अनुच्छेद-39 में बचपन के बचाने तथा उसके कल्याण किये जाने का उल्लेख है। सरल शब्दों में कहा जाए तो बच्चे राष्ट्र की धरोहर व भविष्य के निर्माता हैं, तथा इनको एक अच्छी परवरिश और नयी दिशा देना हमारा परम कर्तव्य है। राष्ट्रपति महोदय के लक्ष्य भारत विजन 2020 को पूरा करने में अहम् भूमिका इस शिशु वर्ग को ही निभानी है, जिन्हें देश का कर्णधार कहा गया है। समाज में बच्चों के प्रति असंतुलन और विसंगति की स्थिति का सबसे मुख्य कारण अशिक्षा और इसके कारण उपजी जनसंख्या विस्फोट की स्थिति है। जनसंख्या विस्फोट पर समय रहते काबू नहीं पाया गया तो ये सभी योजनायें, अनेक तरह के सुधार व प्रयास बौने साबित हो सकते हैं और समस्याओं की एक कतार बड़ी हो सकती है, फिर इन समस्याओं से निपटना पूरे समाज व देश के लिए कठिनतर हो सकता है। बाल श्रमिकों की चिंताजनक दशा केवल भारत में ही नहीं, बल्कि अंतरराष्ट्रीय स्तर तक फैली है। इन बुनियादी समस्याओं से निपटने में भारत सरकार चिंतनशील रही है। बच्चों के असमय श्रम से छुटकारा पाने तथा शिक्षा से जोड़ने के लिए सरकार ने प्राथमिक विद्यालयों में मिड डे मील द्धमध्यान्ह भोजन योजनाऋ योजना के द्वारा किया गया है, जिसमें प्राथमिक शिक्षा को राष्ट्रीय पोषणिक समर्थन के कार्यक्रम, जिसे आमतौर पर 'दोपहर भोजन योजना' के रूप में माना जाता है, की औपचारिक शुरूआत 15 अगस्त, 1995 को की गयी थी। इस योजना का मुख्य उद्देश्य स्कूलों में दाखिला और उपस्थिति बढ़ाने के साथ-साथ प्राथमिक शिक्षा के सार्वत्रीकरण को बढ़ावा देना और सरकारी स्कूलों, स्थानीय निकायों और सरकारी सहायता प्राप्त विद्यालयों में पढ़ने वाले प्राथमिक कक्षाओं के बच्चों के पोषण स्तर में सुधार लाना है। अक्टूबर 2002 से यह कार्यक्रम शिक्षा गारंटी योजना और अन्य वैकल्पिक एवं प्रयोगात्मक शिक्षा के केंद्रों में पढ़ रहे बच्चों के लिए भी लागू किया गया है। 'मध्यान्ह भोजन योजना' से सरकार ने बाल मजदूरों को भोजन उपलब्ध कराकर बाल मजदूरी से बचाने का प्रयास किया है। जो सराहनीय कदम है।

बच्चों के चाचा नेहरू ने यह कभी न सोचा होगा कि देश के सुनहरे भविष्य अपना पेट पालने के लिए अपने बचपन में बैलों की तरह खटेंगे। बालकों के भविष्य की चिंता करते हुए पं. जवाहर लाल नेहरू ने सन् 1956 में 'राष्ट्रीय बाल भवन' नामक एक परियोजना का शुभारंभ किया। इसमें 5 से 16 वर्ष आयु वर्ग के बच्चों के भविष्य की चिंता करते हुए उनकी सृजन क्षमता को बढ़ाने, उनकी सोच को वैज्ञानिक बनाने के साथ ही उनमें चुनौतियां स्वीकार करने, अनुभव लेने, कुछ कर दिखाने तथा रचनाशीलता बढ़ाने की भावना पैदा करने का लक्ष्य इस राष्ट्रीय बाल परियोजना में रखा। हांलाकि अनुसूचित जाति-जनजाति, पिछड़ा वर्ग एवं धार्मिक अल्पसंख्यकों के लिए शिक्षा एवं रोजगार में पूर्ण अवसरों की समानता उपलब्ध कराने के लिए संयुक्त प्रगतिशील गठबंधन सरकार ने लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए राष्ट्रीय न्यूनतम साझा कार्यक्रम में इन समुदायों के कल्याण एवं सशक्तिकरण के लक्ष्य को निर्धारित करने का प्रयास किया है। इसमें कहा गया है कि बच्चों को किसी भी व्यवसायिक शिक्षा से केवल इसलिए वंचित नहीं रखा जाय, क्योंकि वह निर्धन हैं।

> राष्ट्रीय शिक्षा नीति तथा कार्यवाही कार्यक्रम के संदर्भ में केंद्र सरकार की नई और संशोधित नीति में एक ऐसी राष्ट्रीय शिक्षा प्रणाली तैयार कराने का प्रावधान है जिसके अंतर्गत शिक्षा में एकरूपता लाने, प्रौढ़शिक्षा कार्यक्रम को जनांदोलन बनाने, सभी को शिक्षा सुलभ कराने, बुनियादी (प्राथमिक) शिक्षा की गुणवत्ता बनाये रखने, बालिका शिक्षा पर विशेष जोर देने, देश के प्रत्येक जिले में नवोदय विद्यालय जैसे आधुनिक विद्यालयों की स्थापना करने, माध्यमिक शिक्षा को व्यवसायपरक बनाने, उच्च शिक्षा के क्षेत्र में विविध प्रकार जानकारी देने और अंतर अनुशासनात्मक अनुसंधान करने, राज्यों में नये मुक्त विश्वविद्यालयों की स्थापना करने, अखिल भारतीय प्रौद्योगिक शिक्षा परिषद को सुदृढ़ करने तथा खेलकूद, शारीरिक शिक्षा, योग को बढ़ावा देने एवं एक सक्षम मूल्यांकन प्रक्रिया अपनाने के प्रयास शामिल हैं। इसके अलावा शिक्षा में अधिकाधिक लोगों की भागीदारी सुनिश्चित करने हेतु एक विकेंद्रीकृत प्रबंधन व्यवस्था का भी सुझाव दिया गया है।

हमारे श्रम मंत्रालय द्वारा राष्ट्रीय बाल-श्रम परियोजना 15 अगस्त, 1994 को शुरू की गयी थी, फिर समस्याओं को बढ़ता देख 21 जिलों की जगह संख्या बढ़ाकर जिलों की संख्या 250 कर दी गयी और इसे लागू किया गया। इसके अलावा कुछ अन्य व्यवहारिक बातें भी ध्यान में रखी गई, फिर यह सुनिश्चित किया गया कि इस योजना के अंतर्गत 9-14 वर्ष आयु वर्ग के बाल श्रमिकों को औपचारिक शिक्षा-तंत्र के अंतर्गत लाया जाए तथा 5 से 9 वर्ष आयु के बाल श्रमिकों को सीधे 'सर्वशिक्षा अभियान' से जोड़ा जाये। बच्चों के भविष्य को सुनिश्चित करने के साथ-साथ भारत सरकार ने शिशुओं के स्वास्थ्य के लिए भी अनेक कार्यक्रम आयोजित करके रोगों के उन्मूलन का प्रयास किया। हांलाकि खसरा, निमोनिया, थैलिसीमिया तथा असमय क्षयरोग आदि बीमारियों पर तो काबू पा लिया गया है, लेकिन उत्तर प्रदेश, बिहार, महाराष्ट्र और तमिलनाडु इत्यादि राज्यों में पोलियो उन्मूलन का अभियान अभी तक पूर्ण रूप से सफल नहीं हो पाया है। 297 नये मामलों में 269 पोलियो के मरीज उत्तर प्रदेश में पाये गये जो कि कुल मामलों का 90 प्रतिशत है। ध्यान देने की बात है कि इन 90 प्रतिशत मामलों में 70 प्रतिशत मामले मुस्लिम बाहुल्य क्षेत्र के हैं।

पोलियो उन्मूलन पर पूरी तरह से काबू पाने के लिए केंद्र सरकार ने प्रभावित राज्यों की आपात बैठक भी बुलायी। सरकार बाल-श्रमिकों को खोजने तथा इनके स्वास्थ्य, शिक्षा और रोटी की व्यवस्था करने की चिंता पहले से भी करती रही है। सन् 1987 में इस चिंता से मुक्ति के लिए 'राष्ट्रीय बाल श्रमिक परियोजना' चलायी गयी थी।

गौरतलब है कि बाल-श्रम में लगे मासूम स्वयं पर निर्भर होने के कारण दिशाहीनता की दशा में रहते हैं। गलत संगत में पड़ने वगैरह के चलते यह वर्ग

नशे इत्यादि के प्रति ऐसा संवेदनशील हो जाता है जिसे नशीली प्रवृत्तियों से बचाये जाने की अपेक्षा है। देखभाल और निर्देशन के अभाव में कुछ बच्चे गलत आदतों के आदी हो जाते हैं, तथा जाने-अनजाने बीड़ी, सिगरेट, गुटखा, भांग, चरस, अफीम जैसे खतरनाक नशों का सेवन करने लगते हैं। जिससे इन मासूमों को छुटकारा अपनी जान गंवा कर करना पड़ता है, या तो बहुतों को अंग-भंग या पागल बनकर। बालश्रमिकों की समस्याओं को दूर करने के लिए भारतीय संविधान के अनुच्छेद 23 व 24 में क्रमशः यह उल्लेख है कि मानव दुर्व्यवहार और बेगार तथा इस प्रकार के अन्य बलातश्रम प्रतिबंधित है। इसीलिए बाल-श्रमिकों को किसी भी खान में काम करने के लिए, चाहे वह कार्य भूमिगत हो या खुले आसमान के नीचे हो 15 वर्ष का होना अनिवार्य माना गया है। इसकी पुष्टि खान एक्ट-1952 करता है। बच्चों के इन्ही समस्याओं का निराकरण करने तथा शिक्षा को और बेहतर स्थिति में लाने के लिए संयुक्त प्रगतिशील गठबंधन सरकार 'सकल घरेलू उत्पाद (जीडीपी)' का छः प्रतिशत खर्च करने के लिए तेजी से वकालत कर रही है। लेकिन वर्तमान प्रधानमंत्री की इच्छा के विरूद्ध योजना आयोग ने जीडीपी का छः फीसदी हिस्सा शिक्षा पर खर्च करना असंभव बताया है। योजना आयोग की दलील है कि वर्तमान समय में निजी और सरकारी सहायता प्राप्त स्कूलों की संख्या 60 प्रतिशत से कम क्यों है? अक्सर दलील दी जाती है कि बच्चे स्कूल नहीं आते! क्यों नहीं आते? यह योजना आयोग के लिए मंहगा साबित होने का डर उत्पन्न करता है। इसी तरह से सरकार तथा गैर-सरकारी संस्थाओं ने भारी प्रयास किया है कि देश से बाल-श्रम को समाप्त कर दिया जाये, लेकिन इसका समूल नाश कर पाना इतना आसान नहीं। बालश्रम एक विश्वव्यापी समस्या है। दुनिया के प्रत्येक बच्चे का यह मौलिक अधिकार है कि वह जीवन की नैसर्गिक आवश्यकताओं को प्राप्त करें, परंतु ऐसा नहीं हो पा रहा है। बच्चों को शोषण दुनिया भर में मानवाधिकार का उल्लंघन माना गया है, तथा इसे करने वाला अपराधी। दुनिया में आर्थिक विवशता बाल-श्रम का प्रमुख कारण है तथा विकासशील देशों में गरीबी बहुत अधिक है।

> सर्वशिक्षा अभियान के तहत, 2004-05 में देश में प्रारंभिक स्कूल जाने वाले आयु समूह के 15.93 लाख बच्चों की पहचान की गई जिसमें से 10.77 लाख बच्चों का वर्ष 2004 के आरंभ में प्राथमिक स्कूलों में दाखिला हुआ था। दीनदयाल पुनर्वास योजना के अंतर्गत सरकार लगभग 465 विशेष स्कूलों की सहायता कर रही है जिससे लगभग 60,000 विकलांग बच्चे लाभान्वित हुए हैं। ऑटिज्म, प्रमस्तिष्क अंगघात, मानसिक मंदता तथा बहुविकलांगता वाले व्यक्तियों के लिए राष्ट्रीय न्यास गंभीर विकलांगता वाले गृह-आधारित जीवन-कौशल का प्रशिक्षण देने के लिए देखभाल करने वालों की मदद करता है और उन्हें प्रशिक्षित करता है। न्यास ने राज्यों में फैले अब तक 183 देखभाल करने वाले व्यक्तियों को प्रशिक्षित किया है।

भारत में गरीबी अभी-भी बहुत है, और गरीबी के कारण बच्चों की शिक्षा प्रभावित न हो, इसके लिए सरकार को और कारगर पहल की आवश्यकता है। देश में सेंट्रल स्कूल जैसी संस्थाएं और खुलनी चाहिए। इसी क्रम में शिक्षा के निजीकरण को बढ़ावा देने पर और बहस करने की जरूरत है। प्राथमिक विद्यालयों के शिक्षकों पर भी यह आरोप लगाया जा रहा है कि वे अपने कर्तव्य का पालन पूरी ईमानदारी और सत्यनिष्ठा से नहीं करते हैं। इसी क्रम में प्राथमिक विद्यालयों में मिड डे मील परियोजना की हालत भी कुछ ऐसी ही है। वर्तमान में लड़कियों को लेकर बात की जाये तो प्राथमिक शिक्षा देने की पहली समय-सीमा समाप्त हो जाने के बाद भी योग्य आयु वर्ग की 40 प्रतिशत लड़कियां आज भी स्कूल से बाहर ही हैं। देश में आज भी 50 हजार प्राथमिक विद्यालयों की कमी है। इस वजह से शिक्षा सुलभ करापाना और भी कठिन कार्य हो गया है। हांलाकि भारत सरकार वर्तमान में संविधान के अनुच्छेद-21 में संशोधन करके सभी को शिक्षा मुहैया कराने की संवैधानिक गारंटी देने की संभावना पर विचार कर रही है। लेकिन सीएजी (नियंत्रक एवं महालेखापरीक्षक) तथा एसएसए (सर्वशिक्षा अभियान) ने 2007 की समय सीमा तक भी अपने लक्ष्य को प्राप्त करने में संदेह जाहिर किया है।

इन तमाम कोशिशों के बाद बाल दिवस की सार्थकता इसी में है कि इन सवालों और चेतावनियों के अर्थ समझे जाएं और समस्याओं के हल खोजे जाएं। हर चीज का दोष सरकार के मत्थे मढ़ देना कोई अच्छी बात नहीं है। आम जनता, उद्योगपतियों, शिक्षित नागरिकों और एक-एक अभिभावक को यह बात समझनी ही होगी। हमें ध्यान रखना चाहिए कि यही बच्चे कल के राष्ट्र व समाज के भविष्य हैं। ❐

(लेखक स्वतंत्र पत्रकार हैं)

लेखकों से

कुरुक्षेत्र के लिए मौलिक, अप्रकाशित लेखों का स्वागत है। रचना दो प्रतियों में टाइप की हुई हो और उसके साथ मौलिकता का प्रमाण-पत्र संलग्न हो। कुरुक्षेत्र में साहित्यिक रचनाएं प्रकाशित नहीं की जाती हैं। अस्वीकृत रचना लौटाने के लिए कृपया डाक टिकट लगा और अपना पता लिखा लिफाफा लगाएं। लेख संपादक, कुरुक्षेत्र कमरा नं. 655/661, 'ए' विंग, गेट नं. 5, निर्माण भवन, ग्रामीण विकास मंत्रालय, नई दिल्ली-110011 के पते पर भेजें।

बाल श्रम की विभीषिका

उमेश चन्द्र अग्रवाल

कहने को तो बच्चे राष्ट्र के भविष्य का आधार तथा किसी भी परिवार के लिए धरोहर होते हैं तभी सरकार उनके स्वास्थ्य, पोषण, शिक्षा और सांस्कृतिक विकास के लिए विभिन्न प्रकार की व्यवस्थाएं निर्धारित कर उनका समुचित रूप से कार्यान्वयन सुनिश्चित करने का प्रयास करती है। बीसवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध से बाजार की प्रतिस्पर्धा में आगे बढ़ने की प्रवृति ने बाल मजदूरी की संस्कृति को और भी प्रगाढ़ कर दिया है। विकसित तथा विकासशील दोनों तरह के देश इसकी चपेट में है। वस्तुत: संपूर्ण मानव समुदाय के लिए कलंक और प्रत्येक राष्ट्र के लिए सामाजिक-आर्थिक बुराई के रूप में बोझ बन चुकी बाल श्रम प्रथा बाल श्रमिकों को अभिशप्त जीवन जीने के लिए मजबूर कर रही है। अत: अन्य गंभीर समस्याओं की भांति इस अंतरराष्ट्रीय समस्या का भी प्रभावोत्पादक निदान और निराकरण अति आवश्यक हो गया है। उल्लेखनीय है कि बालश्रम का इतिहास वैसे तो सभ्यता की शुरूआत से ही प्रारंभ होता है किंतु वैश्वीकरण तथ औद्योगिकीरण प्रक्रिया के तेज होने के बाद इसका रूप और भी बदतर हो गया है। इसी कारण आज विभिन्न सरकारों के साथ-साथ गैर-सरकारी संगठनों तथा अंतरराष्ट्रीय एजेंसियों का ध्यान भी इस तरफ तेजी से मुड़ा है। मुक्त व्यापार की वकालत करने वाले लोग भी आज यह मानते हैं कि यदि बच्चों को बाजार की प्रवृतियों के ऊपर छोड़ दिया गया तो उनका जीवन नष्ट हो जाएगा। इसीलिए अब वे इस कार्य में सरकारी तथा गैर-सरकारी संगठनों के साथ-साथ बालश्रम उन्मूलन को एक जन आंदोलन के रूप में संचालित कर इस बुराई के खात्मे के लिए चिंतित दिखाई देने लगे हैं।

बालश्रम प्रथा किसी भी राष्ट्र की अर्थव्यवस्था पर एक बोझ, मानवता के नाम पर एक कलंक तथा बच्चों के लिए अभिशाप है लेकिन यह कुछ वर्गों के निजी स्वार्थों के रहते ये न केवल भारत या तीसरी दुनिया के देशों में, बल्कि संसार के संपन्न और विकसित कहे जाने वाले देशों में भी नियोजित प्रकार से तेजी से प्रचलित है। यहां तक कि अमेरिका, ब्रिटेन, जर्मनी और फ्रांस जैसे धनी और संपन्न देशों तक में बालश्रम की घटनाओं में लगातार वृद्धि हो रही है। कहने को तो इन विकसित देशों द्वारा विकासशील देशों में बाल श्रमिकों द्वारा बने हुए उत्पादों से परहेज किया जाता है लेकिन कटु सत्य यह है कि यहां किशोर आयु के बालक और बालिकाओं को धनोपार्जन का लालच देकर श्रमिक गतिविधियों के साथ-साथ अश्लील छायांकन जैसे व्यवसायों में कार्य करने हेतु प्रेरित किया जाता है। वहां के उद्योगपति सस्ती मजदूरी के लिए बाल श्रमिकों को सेवायोजित करते हैं और वहां इन घटनाओं में वृद्धि भी हो रही है लेकिन तीसरी दुनिया के देशों में यह समस्या अति विकराल है। संयुक्त

राष्ट्र अंतरराष्ट्रीय बाल संकट कोष (यूनीसेफ) द्वारा वर्ष 2005 में जारी रिपोर्ट के मुताबिक आज विश्व भर में 24.6 करोड़ बच्चे किसी न किसी प्रकार श्रमिक के रूप में कार्य करने को विवश हैं। इनमें से 15.2 करोड़ बाल श्रमिक अकेले एशिया में, 7.6 करोड़ बाल श्रमिक अफ्रीका में तथा शेष 1.8 करोड़ बाल श्रमिक लेटिन अमेरिकी देशों व अन्य देशों में कार्यरत हैं। उदाहरण के लिए पाकिस्तान में बनने वाले कालीनों का 80 प्रतिशत 15 वर्ष से कम आयु के बच्चे बनाते हैं। इण्डोनेशिया के बहुत सारे बच्चे तंबाकू बीनते हैं। श्रीलंका के चाय की पत्ती और ब्राजील के अनेक बच्चे संतरे चुनकर अपनी जीविका चलाने को विवश है। बांग्लादेश में बड़े पैमाने पर बच्चे टी-शर्ट बनाने के उद्योग में, थाईलैण्ड में बैग बनाने में, मोरक्को में चमड़ा साफ करने के धंधे में, मिश्र में चमेली बीनने में लगे हुए हैं। ब्राजील के खेतों में लाखों बच्चों को कार्य करने की विवशता है और दक्षिणी अफ्रीकी घरों में दसियों हजार छोटे-छोटे बच्चे बतौर घरेलू नौकर काम कर रहे हैं। विभिन्न संगठनों द्वारा एकत्रित किए गए आंकड़ों के निष्कर्ष के रूप में कहा जा सकता है कि तीसरी दुनिया के लगभग सभी देशों में बच्चों को विभिन्न उद्योगों और कार्यों में नियोजित कर उनका शोषण किया जाना आम बात है।

बालश्रम की वर्तमान स्थिति

विश्व के अनेक देशों की भांति भारत में भी बालश्रम की स्थिति अत्यंत गंभीर है। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद से विशेष रूप से इस समस्या को सरकार द्वारा चुनौती के रूप में स्वीकार किया गया है और प्रभावी कदम भी उठाए गए हैं। देश को बाल श्रमिकों से मुक्त कराने और इस समस्या के स्थायी रूप से निराकरण हेतु सरकार द्वारा अनेक प्रावधान, नियम, कानून, योजनाएं और परियोजनाएं संचालित की गई हैं। इसके

अतिरिक्त गैर सरकारी, राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय संगठनों के सहयोग से अनेकानेक ठोस प्रयास भी किए जा रहे हैं लेकिन विडंबना यह है जितने बच्चों को इन प्रयासों के माध्यम से श्रम बाजार से मुक्त कराया जाता है उससे अधिक बच्चे श्रमिक के रूप में बाजार में पहुंच जाते हैं और उनकी संख्या में खास कमी नहीं आ रही है। वर्ष 1971 की जनगणना के अनुसार यह संख्या 1 करोड़ 07 लाख थी जो वर्ष 1981 में बढ़कर 1 करोड़ 11 लाख हो गई। 1986 में राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण संगठन द्वारा किए गए सर्वेक्षण के अनुसार यह संख्या 1 करोड़ 73 लाख बताई गई। वर्ष 1991 की जनगणना के अनुसार भारत में कुल 1 करोड़ 42 लाख 18 हजार 588 बाल श्रमिक थे। वर्ष 1999-2000 के राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण संगठन के 55वें चक्र के सर्वेक्षण में देश मे बाल श्रमिकों की संख्या 1 करोड़ 4 लाख बताई गई। वर्ष 2001 की जनगणना के आंकड़ों के मुताबिक देश में 1 करोड़ 25 लाख बच्चे बाल श्रमिकों के रूप में कार्यरत हैं। राष्ट्रीय श्रम संस्थान के ताजा अनुमानों के अनुसार वर्तमान में भारत में 6 से 14 वर्ष तक के कुल बच्चों की संख्या 22 करोड़ के करीब है जो कुल आबादी का करीब 20 प्रतिशत है। इनमें से लगभग 2.5 करोड़ बच्चे अभी भी विद्यालयों से बाहर हैं। एक प्रतिष्ठित स्वयंसेवी संगठन द्वारा हाल ही में लगाए गए अनुमानों के अनुसार भारत में 2 करोड़ 26 लाख बच्चे "पूर्णकालिक श्रमिक" के रूप में तथा 1 करोड़ 85 लाख बच्चे अंशकालिक श्रमिक के रूप में कार्यरत हैं। बालश्रम पर वर्ष 2005 में आयोजित किए गए एक राष्ट्रीय सेमिनार में देश में बाल श्रमिकों की संख्या 5 से 6 करोड़ तक होने का अनुमान लगाया गया है।

भारत में बाल श्रमिकों के संबंध में राष्ट्रीय श्रम संस्थान के कुछ समय पूर्व प्रकाशित आंकड़ों पर गौर करें तो पता चलता है कि बाल श्रमिकों का कुछ राज्यों, स्थानों तथा कुछ खास उद्योगों व कार्यों में संकेंद्रण है। संस्थान के अनुसार फिरोजाबाद के कांच उद्योग में 60 हजार, तमिलनाडु के माचिस और पटाखा उद्योग में 50 हजार, मेघालय की खानों में करीब 22 हजार, केरल की पत्थर खदानों में 15 हजार, आंध्र प्रदेश और मध्य प्रदेश के स्लेट कारखानों में 20 हजार, आगरा और कानपुर के चमड़ा उद्योग में 40 हजार, मिर्जापुर और भदोही के कालीन उद्योग में 5 हजार, जम्मू-कश्मीर के कालीन उद्योग में लगभग 1.5 हजार, राजस्थान और गुजरात के रत्न-जवाहरात उद्योग में 10 हजार बाल श्रमिक कार्यरत हैं। इसके अलावा चीनी मिट्टी बर्तन उद्योग, होजरी उद्योग, चाय बागान, बीड़ी, हथकरघा और मत्स्य पालन उद्योग आदि में भी सस्ते और सुलभ श्रम संसाधन के रूप में बाल श्रमिक को ही लाभदायक मानते हुए अनेक स्थानों पर बहुसंख्य बच्चे इन कार्यों में लगे हुए हैं। राष्ट्रीय श्रम संस्थान के सौजन्य से किए गए एक अन्य नवीनतम् नमूना सर्वेक्षण के अध्ययन के अनुसार महानगरों में बालश्रम की समस्या और गंभीर है। अकेले दिल्ली में बाल मजदूरों की संख्या 4 लाख बताई गई है जिनमें से लगभग 1 लाख बच्चे विभिन्न घरों में मजदूर के रूप में कार्य करते हैं। शेष चाय की दुकानों, ढाबों, स्कूटर और कार मरम्मत की दुकानों, भवन निर्माण और कुली गिरी आदि के कार्यों में लगे हुए हैं। उल्लेखनीय है कि इन बाल श्रमिकों से बिना किसी अवकाश के प्रतिदिन 15-15 घण्टे कार्य कराया जाता है तथा उन्हें वयस्क व पूर्णकालिक मजदूरों की तुलना में आधी मजदूरी दी जाती है। देश में बाल श्रमिकों की निरंतर बढ़ती हुई संख्या और उनके अनवरत शोषण को रोकने के उद्देश्य से सर्वोच्च न्यायालय के निर्देश पर बाल श्रमिकों को नियोजित करने वाले निम्नांकित उद्योगों को खतरनाक उद्योगों की श्रेणी में चिंहित किया गया है-

★ माचिस एवं पटाखा विनिर्माण उद्योग, शिवकाशी (तमिलनाडु),
★ डायमंड पॉलिशिंग उद्योग, सूरत (गुजरात),
★ कांच एवं चूड़ी उद्योग, फिरोजाबाद (उत्तर प्रदेश),
★ पीतल के बर्तन एवं कलात्मक वस्तु विनिर्माण उद्योग, मुरादाबाद (उत्तर प्रदेश),
★ हस्तनिर्मित कालीन उद्योग, मिर्जापुर-भदोही (उत्तर प्रदेश),
★ ताला एवं चाकू उद्योग, अलीगढ़ (उत्तर प्रदेश),
★ कीमती पत्थरों व नगीनों आदि की कटिंग तथा पॉलिश उद्योग, जयपुर (राजस्थान),
★ स्लेट उद्योग, मंदसौर (मध्य प्रदेश) और मराकपुर (आंध्र प्रदेश),

यह वास्तविकता है कि उपर्युक्त सभी उद्योगों के मालिकों द्वारा बाल श्रमिकों का बड़े पैमाने पर शारीरिक और मानसिक शोषण किया जाता रहा है। इनमें कारखाना अधिनियम के मुख्य प्रावधानों यथा-सुरक्षा, स्वास्थ्य, सामाजिक सुरक्षा, श्रम कल्याण आदि के नियमों व उपनियमों का खुले आम उल्लंघन किया जाता है तथा न्यूनतम मजदूरी अधिनियम और उसके उपबंधों पर तो विचार तक नहीं किया जाता। निःसंदेह आज भी इन खतरनाक उद्योगों में बाल श्रम उन्मूलन के प्रावधानों को और अधिक कठोरता के साथ क्रियान्वित करना अति आवश्यक है।

बाल श्रमिकों के संबंध में राष्ट्रीय एवं अंतरराष्ट्रीय नीति

बालश्रम उन्मूलन के संबंध में वर्ष 1987 में भारत सरकार द्वारा एक राष्ट्रीय नीति बनाई गई जिसमें बाल श्रमिकों के लाभ के लिए कानूनी प्रावधानों को लागू करने के अलावा सामान्य विकास कार्यक्रमों और बाल श्रमिकों की अधिकता वाले क्षेत्रों में परियोजना आधारित कार्य योजना पर बल देने जैसी व्यवस्थाएं निर्धारित की गई हैं। इसी नीति के अंतर्गत बाल श्रमिकों में पुनर्वास के लिए विभिन्न क्षेत्रों में राष्ट्रीय बालश्रम परियोजनाएं संचालित की गई हैं। बालश्रम से मुक्त कराए गए बच्चों के लिए अनौपचारिक शिक्षा, व्यावसायिक प्रशिक्षण तथा पूरक पोषाहार आदि उपलब्ध कराने के साथ इन परियोजनाओं में विशेष विद्यालय खोलने जैसे अनेक कार्य संचालित किए गए हैं। इसके अतिरिक्त हमारी राष्ट्रीय बाल नीति संबंधी प्रस्ताव में भी बच्चों को समुचित संरक्षण प्रदान करने हेतु पर्याप्त व्यवस्थाएं सुनिश्चित की गई हैं। इस नीति में निम्नलिखित तीन मुख्य संकल्प लिए गए हैं-

* देश के 14 वर्ष तक की आयु के सभी बच्चों को निःशुल्क और अनिवार्य शिक्षा की व्यवस्था।
* सभी बच्चों को जन्म से पूर्व तथा बाद में और बढ़ती उम्र में पर्याप्त स्वास्थ्य एवं पोषण सेवाओं की व्यवस्था।
* 14 वर्ष से कम आयु के बच्चों को जोखिम भरे कार्यों में नियोजित करने पर रोक।

हमारी बाल नीति से मिलते-जुलते प्रस्तावों को अंतरराष्ट्रीय स्तर पर भी स्वीकार किया गया है। बच्चों के अधिकारों के संबंध में संयुक्त राष्ट्र महासभा द्वारा 20 नवंबर, 1989 को व्यक्त किए संकल्प में मुख्य तथा तीन बिन्दु विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं-

* बच्चों को स्वास्थ्य और पोषण की समुचित व्यवस्था।
* निःशुल्क और अनिवार्य शिक्षा की समुचित व्यवस्था।
* बच्चों के आर्थिक शोषण तथा बालश्रम के विरूद्ध संरक्षण की व्यवस्था।

अंतरराष्ट्रीय स्तर पर निर्धारित उपरोक्त संकल्पों पर भारत सरकार द्वारा भी वर्ष 1992 में हस्ताक्षर किए गए अर्थात बच्चों के अधिकारों के संबंध में संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा निर्धारित संकल्प भारत के लिए भी कानूनी रूप से मान्य है।

कानूनी प्रावधान एवं उनका क्रियान्वयन

भारत में भी बालश्रम की प्रथा काफी अरसे से चली आ रही है जिसे कम करने के लिए निरंतर प्रयास भी किए जाते रहे हैं। आजादी से पहले भी अंग्रेजी शासन के दौरान ग्रामीण इलाकों में हजारों बच्चे खेतिहर मजदूरों के रूप में और विभिन्न उद्योगों में बाल मजदूर के रूप में कार्य करते थे। उस समय पहली बार वर्ष 1981 में ब्रिटिश सरकार द्वारा मजदूरों के लिए "राजकीय श्रम आयोग" गठित किया गया। इसमें भारतीय उद्योगों में बाल श्रमिकों के व्यापक इस्तेमाल को एक बुराई के रूप में चिन्हित किया गया था। वर्ष 1901 में बनाए गए खदान अधिनियम में अंग्रेजी सरकार द्वारा 12 वर्ष से कम आयु के बच्चों से काम लेना गैर-कानूनी घोषित किया गया। इसके बाद वर्ष 1922 में कारखाना एक्ट बनाया गया जिसमें 15 वर्ष से कम आयु के व्यक्तियों को बालक माना गया और उनके काम करने की अवधि आधे घंटे के विश्राम सहित 6 घंटे नियत की गई। शिशु श्रम से संबंधित एक अधिनियम भी वर्ष 1933 में पारित किया गया जिसमें बच्चों को श्रमिक के रूप में नियुक्त करने पर सजा के भी प्राविधान किए गए। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद से विशेष रूप से बच्चों को संरक्षण देने और उन्हें राष्ट्रीय निधि के रूप में पल्लवित होने के लिए और उनके अधिकारों की रक्षा के लिए पर्याप्त अवसर प्रदान करने हेतु अनेक प्रयास किए गए हैं। सरकार द्वारा देश के सभी 6 से 14 आयुवर्ग के बच्चों को निःशुल्क और अनिवार्य शिक्षा की व्यवस्था करना हमारे संविधान के संशोधन के जरिए 6-14 वर्ष के बच्चे के माता-पिता या अभिभावक द्वारा अपने बच्चे को शिक्षा दिलाने के लिए अवसर उपलब्ध कराने का प्रावधान भी किया गया है। संविधान में ही नागरिकों के मूलभूत अधिकारों में मुख्यत: अनुच्छेद-15(3) के द्वारा सरकार को बालकों के लिए अलग से कानून बनाने का अधिकार है और सरकार द्वारा इस प्रकार के कानून बनाए भी गए हैं। अनुच्छेद-23 के द्वारा बालकों को क्रय-विक्रय एवं उनके द्वारा गैर कानूनी तथा अनैतिक कार्य कराने पर रोक है। साथ ही बालकों को भय दिखाकर या बिना पारिश्रमिक के काम कराना भी प्रतिबंधित है। इसी प्रकार अनुच्छेद-24 के द्वारा 14 वर्ष से कम आयु के बच्चों को कारखानों, खदानों तथा औद्योगिक प्रतिष्ठानों में नियोजित करने पर रोक लगी हुई है। इसके अतिरिक्त संविधान के नीति निर्देशक तत्वों में अनुच्छेद-39 (एफ) के द्वारा बच्चों के स्वास्थ्य और उनके शारीरिक विकास हेतु पर्याप्त सुविधाएं उपलब्ध कराने हेतु सरकार को निर्देश हैं। अनुच्छेद-39 (ई) में सरकार को बच्चों के बचपन की रक्षा करने और यह सुनिश्चित करने के निर्देश हैं कि उन्हें ऐसे कार्यों में न लगाया जाए जो उनके उम्र और स्वास्थ्य के लिए घातक हों।

फोटो : ओम मिश्रा

बच्चों के लिए संविधान में प्रदत्त अधिकारों को सुनिश्चित करने और उनको शोषण से विमुक्त कराने हेतु सरकार द्वारा समय-समय पर विभिन्न कानून भी बनाए गए हैं। जैसे 1949 में राजकीय विभागों एवं अन्य क्षेत्रों में श्रमिकों के नियोजन हेतु न्यूनतम आयु 14 वर्ष निर्धारित की गई। कुछ अन्य कानूनों द्वारा भी विभिन्न क्षेत्रों में बाल श्रमिकों को शोषण और पीड़ा से बचाने के लिए उनकी भर्ती हेतु न्यूनतम आयु और सेवा शर्तें निर्धारित की गई हैं। इनमें कारखाना अधिनियम-1948, बागान श्रमिक अधिनियम-1951, खदान अधिनियम-1952, व्यापारिक जहाजरानी अधिनियम-1958, मोटर परिवहन अधिनियम-1961, बीड़ी सिगरेट सेवा शर्त नियोजन अधिनियम आदि प्रमुख हैं। बाल श्रमिकों के संबंध में आवश्यक व्यवस्थाएं सुनिश्चित करने हेतु वर्ष 1979 में "गुरुपदस्वामी समिति" गठित की गई जिसके द्वारा बालश्रम की समस्या को गरीबी की देन बताया गया और सबसे पहले इसे दूर करने के लिए

प्रभावी कदम उठाने का सुझाव दिया। हरवंश सिंह समिति, सनद मेहता समिति, सिंघवी समिति आदि ने भी बालश्रमिकों की समस्या को गंभीर बताते हुए शीघ्र ही पर्याप्त एवं आवश्यक कदम उठाने हेतु कुछ महत्वपूर्ण सुझाव प्रस्तुत किए। इन सुझावों के समुचित रूप से कार्यान्वयन हेतु प्रयास भी किए गए हैं।

बालश्रम प्रथा के उन्मूलन हेतु सरकार द्वारा एक महत्वपूर्ण प्रयास वर्ष 1986 में एक विस्तृत अधिनियम बनाकर किया गया है जिसे "बालश्रम निषेध एवं नियमन, अधिनियम, 1986" कहा जाता है। इस अधिनियम के माध्यम से 14 वर्ष से कम आयु के बच्चों को कई हानिकारक उद्योगों तथा भारी कार्यों के करने पर रोक लगा दी गई। इनमें यात्रियों, समान या डाक के परिवहन, रेलवे स्टेशनों के खान-पान के प्रतिष्ठान, रेलवे लाइनों के पास निर्माण से संबंधित कार्य, कोयला बीनना तथा राख के गड्ढों की सफाई पटाखे व आतिशबाजी का सामान बनाने व दुकान में कार्य, जहरीले, ज्वलनशील पदार्थ व विस्फोटकों का कार्य, बीड़ी निर्माण, अभ्रक की कटाई, रंगीन छपाई और बुनकरी का काम, इलेक्ट्रॉनिक उद्योगों में टांका लगाने की प्रक्रिया आदि को सम्मिलित किया गया। जनवरी, 1999 तथा मई 2002 में जारी की गई सरकारी अधिसूचनाओं के द्वारा विभिन्न प्रतिबंधित व्यवसायों और प्रक्रियाओं की संख्या बढ़ाकर क्रमशः 13 और 57 कर दी गई है। 1987 में "राष्ट्रीय बाल नीति" की घोषणा भी की गई और इसके क्रियान्वयन हेतु प्रभावी कदम भी उठाए गए हैं। बालनीति के दस्तावेज में "नीति एवं उपाय" के अनुच्छेद-4 में कहा गया है कि "राष्ट्र 14 वर्ष तक की आयु के बच्चों को निःशुल्क व अनिवार्य शिक्षा देने के लिए उचित उपाय करेगा। साथ ही राष्ट्र के आर्थिक स्रोतों के अनुरूप इस कार्य के लिए समयबद्ध कार्यक्रम चलाएगा।" अनुच्छेद-5 में व्यवस्था है कि "जो बच्चे विद्यालयीय शिक्षा प्राप्त करने की स्थिति में नहीं है, उनकी आवश्यकता के अनुरूप शिक्षा के दूसरे तरीकों का विकास किया जाना चाहिए।" अनुच्छेद-8 के अनुसार "बेहाल सामाजिक परिस्थिति में रहने वाले अपराधी बन चुके, भिखारी बनने के लिए मजबूर तथा विभिन्न अन्य परेशानियों में जिन्दगी गुजार रहे बच्चों को शिक्षण, प्रशिक्षण व पुनर्वास दिलाया जाएगा तथा उन्हें देश के सक्षम नागरिक बनने के लिए मदद दी जाएगी।" इसके अनुच्छेद-9 व 10 में कहा गया है कि "बच्चों की उपेक्षा, क्रूरता और शोषण से बचाने के लिए संरक्षण दिया जाएगा। 14 वर्ष से कम आयु के बच्चों को जोखिम वाले खतरनाक कार्यों में नियुक्त करने की अनुमति नहीं दी जाएगी। उन्हें भारी काम में लगाना अपराध माना जाएगा।" राष्ट्रीय बाल नीति में प्रावधानित विभिन्न व्यवस्थाओं को लागू करने के लिए केंद्र और राज्य सरकारों द्वारा समय-समय पर कुछ सफल और कुछ असफल चेष्टाएं भी की जाती रही है।

केंद्र सरकार द्वारा बच्चों के लिए बनाया गया "राष्ट्रीय चार्टर-2003" भी बच्चों को संविधान के अंतर्गत पहले से प्राप्त अधिकारों का उपयोग करने की दिशा में एक उल्लेखनीय प्रयास है। इस चार्टर में बच्चों की खुशहाली के लिए समाज में जागरूकता लाने के साथ-साथ प्रत्येक राज्य सरकार को बच्चों की समुचित देखभाल करने की दिशा में पर्याप्त मार्गदर्शक सिद्धांतों का उल्लेख किया गया है। अंतरराष्ट्रीय श्रम संगठन के सहयोग से इस हेतु दो परियोजनाएं - आईपीईसी अर्थात बालश्रम की समाप्ति हेतु "अंतरराष्ट्रीय कार्यक्रम" और सीएलएएसपी अर्थात "बालश्रम कार्य तथा सहयोग कार्यक्रम" भी प्रारंभ की गई है। सितम्बर, 1990 में राष्ट्रीय श्रमिक संस्थान में श्रम मंत्रालय और यूनीसेफ के सहयोग से बाल श्रमिकों के संबंध में अध्ययन, शिक्षण और प्रशिक्षण, शोध परियोजनाएं आदि चलाने हेतु "बाल श्रमिक सैल" की स्थापना की गई। सड़कों पर घूमकर जीविका कमाने वाले बच्चों के कल्याण हेतु केंद्र सरकार द्वारा गत वर्षों में विशेष प्राविधान भी किए गए हैं। "राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग" द्वारा भी विभिन्न क्षेत्रों में कार्यरत बाल श्रमिकों की समस्याओं का अध्ययन करके संबंधित राज्य सरकारों के माध्यम से इनकी समस्याओं के निराकरण और बालश्रम उन्मूलन हेतु विभिन्न प्रभावी कदम उठाने हेतु प्रयास किया जाना प्रशंसनीय कदम है। राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग की तर्ज पर देश में एक "राष्ट्रीय बाल आयोग" गठित करने की संसद की स्वीकृति भी मिल चुकी है जो बच्चों के विकास और उनकी समस्याओं के निराकरण के लिए विशेष प्रयास करेगा। इसके अध्यक्ष सुप्रीम कोर्ट या हाईकोर्ट के न्यायाधीश होंगे तथा इसमें 6 सदस्य रहेंगे जिनमें एक-एक प्रसिद्ध शिक्षाविद् बाल स्वास्थ्य विशेषज्ञ, बाल देख-रेख, बाल न्याय तथा बालश्रम विशेषज्ञ तथा बाल मनोविज्ञानी सम्मिलित होंगे। मूल रूप से आयोग का काम बच्चों के अधिकारों की रक्षा और उनके शोषण को रोकने के लिए खास उपाय करने का होगा। आर्थिक उदारीकरण के कारण उपजी समस्याओं और पिछड़े क्षेत्रों में गरीब बच्चों को शिक्षा, स्वास्थ्य व जीवन-यापन के जरूरी साधन मुहैया नहीं हो पाने से वे बड़ी संख्या में घरेलू नौकर बनकर शहरों में मामूली पैसे के लिए जीवन बर्बाद कर रहे हैं। पर्यटन के नाम पर बच्चों को बाल वेश्यावृति में भी तेजी से फंसाएं जाने की शिकायतें बढ़ी हैं। इन तमाम तरह की समस्याओं को सामना करने के लिए आयोग काम करेगा। राष्ट्रीय बाल आयोग को विशेष अधिकार होंगे जिससे वे किसी भी सरकारी और गैर-सरकारी पदाधिकारी को सम्मन जारी कर सकेगा। आयोग को बच्चों और उनके अधिकारों से जुड़े कानूनों की मौजूदा परिस्थितियों के साथ समीक्षा करने और उनमें बदलाव के सुझाव देने का अधिकार होगा। बच्चों से जुड़े मामलों में विशेष अदालतें बनवाने और बकाया मामलों को तेजी से सुनवाई के अनुरोध के साथ फैसला करवाने के लिए भी आयोग उचित कार्यवाही करेगा। आयोग को अधिकार होगा कि वे बच्चों की ओर से अपने माता-पिता, संरक्षक, रिश्तेदार और शिक्षकों के विरुद्ध उनके अधिकारों

के हनन की मिलने वाली शिकायतों का निपटारा करेगा और आवश्यक होने पर बच्चों के पुनर्वास की उचित व्यवस्था होगी। बच्चों की पर्याप्त सुरक्षा और आवश्यक देखभाल को सुनिश्चित करने के लिए संसद द्वारा "बाल न्याय (बच्चों की सुरक्षा और देखभाल) अधिनियम, 2000" भी संसद द्वारा पारित किया गया है जो "किशोर न्यायिक अधिनियम, 1986" के स्थान पर बनाया गया है। इसमें किए गए प्रावधानों को बच्चों के अनुकूल बनाए जाने हेतु किशोर न्याय संशोधन विधेयक-2006 भी संसद द्वारा पास कर दिया गया है जिसमें विशेष रूप से किशोर अपराधियों के नाम या फोटो प्रकाशित या प्रसारित करने वालों पर 25 हजार रुपये तक का दण्ड लगाए जाने के प्रावधान रखे गए हैं।

फोटो : ओम मिश्रा

द्वारा इनके कल्याणार्थ अनेक कार्यक्रमों और योजनाओं की घोषणा एवं उनका क्रियान्वयन और उठाए गए ठोस कदम, सभी के लिए शिक्षा और स्वास्थ्य सेवाओं को उपलब्ध कराने का सरकार का दृढ़ निश्चय और किए जा रहे विशेष प्रयास, गैर-सरकारी संगठनों तथा श्रमिक यूनियनों की भागीदारी और मीडिया द्वारा जन चेतना के प्रयासों से जो अनुकूल वातावरण बना है, उससे लगता है कि जब इस दिशा में कुछ सफलता अवश्य मिलेगी और देश के अभागे लाखों-करोड़ों बच्चे अपने मौलिक अधिकारों को प्राप्त कर पाएंगे और देश से बालश्रम जैसी घिनौनी कुप्रथा हमेशा-हमेशा के लिए समाप्त करने हेतु मार्ग प्रशस्त हो सकेगा।

विपत्ति में फंसे हुए बच्चों को राहत पहुंचाने के उद्देश्य से सरकार द्वारा "नि:शुल्क चाइल्ड लाइन फोन सेवा" (1098) भी प्रारंभ की गई है। इस सेवा के प्रारंभ हो जाने से आपदाग्रस्त बच्चों को आशा की एक किरण दिखाई दी है।

उक्त सभी कानूनी प्रावधानों और उनके क्रियान्वयन के लिए किए गए प्रयासों से भले ही हमारा समाज बाल श्रमिकों से पूरी तरह मुक्त नहीं हो सका है लेकिन यह निश्चित है कि निकट समय में इन प्रयासों का बहुत अच्छा प्रभाव दृष्टिगोचर होगा और देश के लाखों-करोड़ों बच्चों को अपने अधिकार प्राप्त करने का मार्ग प्रशस्त होगा। वैसे इस संबंध में उपलब्ध आंकड़े आभास कराते हैं कि वर्तमान में भारत सहित समूचे विश्व में इस बुराई को दूर करने के लिए प्रयासों में तेजी आई है और इसके सकारात्मक प्रभाव भी दिखाई देने लगे हैं। अंतरराष्ट्रीय श्रम संगठन द्वारा जारी वर्ष 2005 की रिपोर्ट के मुताबिक विश्व स्तर पर पहली बार इस समस्या की भयावहता में कमी दिखाई दी है। इस रिपोर्ट के मुताबिक वर्ष 2000 से 2004 के बीच विश्व भर में बाल श्रमिकों की संख्या में 11 प्रतिशत की कमी दर्ज की गई है। साथ ही 5-17 आयु वर्ग के खतरनाक कार्यों में लगे बच्चों की संख्या में भी 26 प्रतिशत की कमी आई है। रिपोर्ट के अनुसार विश्व स्तर पर 5-14 आयु वर्ग के बाल श्रमिकों की कुल संख्या में 33 प्रतिशत की कमी रिकार्ड की गई है। अपने देश के संदर्भ में भी पिछले कुछ वर्षों से विशेष रूप से इस मुद्दे पर राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय झुकाव, न्यायालयों विशेष रूप से सर्वोच्च न्यायालय के ऐतिहासिक निर्णय और मामले की गंभीरता पर कड़ा रुख, केंद्र एवं प्रदेश सरकारों

सर्वोच्च न्यायालय एवं गैर-सरकारी संगठनों की भूमिका

पिछले कुछ वर्षों में इस समस्या के निराकरण के लिए सर्वोच्च न्यायालय द्वारा भी अतिविशिष्ट भूमिका का निर्वहन किया गया है। दिसंबर, 1996 में उच्चतम न्यायालय ने सरकार को अनुच्छेद-45 की याद दिलाते हुए कहा कि शिक्षा का बच्चों को मौलिक अधिकार है और उन्हें नि:शुल्क शिक्षा की व्यवस्था की जाए। इसके अनुपालन में देर से सही लेकिन वर्ष 2002 में 86वां संविधान संशोधन को पास कर दिया गया है और इसके माध्यम से प्राथमिक शिक्षा को बच्चों के मौलिक अधिकारों के अंतर्गत सम्मिलित करने के साथ-साथ बच्चों के माता-पिता अथवा अभिभावकों को भी इसके लिए उत्तरदायी बनाया गया है। इसी प्रकार दिसंबर, 1996 में सर्वोच्च न्यायालय ने तमिलनाडु के शिवकाशी के माचिस और पटाखा उद्योग के मामले में निर्णय देते हुए खतरनाक उद्योगों में बच्चों के काम करने पर प्रतिबंध लगा दिया और बाल श्रमिकों के पुनर्वास के लिए "कल्याण कोष" बनाने का आदेश भी दिया गया। इस आदेश के अनुसार शिवकाशी के माचिस पटाखा उद्योग, सूरत के हीरा पालिश उद्योग, मिर्जापुर-भदोही के कालीन उद्योग, अलीगढ़ के ताला उद्योग और मंदसौर के स्लेट उद्योग के प्रत्येक उद्योग मालिक को प्रत्येक बाल श्रमिक के हिसाब से 20,000/- रुपए इस कल्याण कोष में जमा कराए जाने की व्यवस्था निर्धारित की गई है। इसके अतिरिक्त सरकार द्वारा यह भी सुनिश्चित किया जाता है कि कार्यमुक्त बाल श्रमिक के बदले उसके परिवार के एक वयस्क को उस उद्योग में रोजगार मिल सके। यदि सरकार ऐसा नहीं कर पाती तो सरकार द्वारा स्वयं ऐसे प्रत्येक बच्चे के लिए 5,000/- रुपए इस कोष में योगदान करने की व्यवस्था रखी गई है। इस कोष में जमा राशि का उपयोग बच्चों को अच्छी शिक्षा

देने एवं उनके कल्याण के लिए किए जाने की व्यवस्था है। सर्वोच्च न्यायालय द्वारा अपने आदेश में यह भी निर्दिष्ट किया गया कि श्रम निरीक्षक द्वारा यह भी देखा जाना चाहिए कि बाल श्रमिकों के काम के घंटे 4 से 6 के बीच हो और उन्हें प्रतिदिन काम के दौरान नियोजकों के खर्च पर दो घंटे का समय शिक्षा प्राप्ति के लिए उपलब्ध कराया जाए।

बालश्रम के संबंध में स्वयंसेवी संगठनों का भरपूर सहयोग प्राप्त करने की दिशा में सरकार का दृष्टिकोण शासन की राष्ट्रीय कार्यसूची (1996) "नेशनल एजेण्डा फार गवर्नेन्स" में वर्ष 1996 में भी स्पष्ट किया गया था और बालश्रम उन्मूलन के लिए नए कदम उठाने का मन्तव्य दोहराया गया था। इसके अंतर्गत बाल श्रमिकों के पुनर्वास, राष्ट्रीय बालश्रम परियोजनाओं का कार्यान्वयन, स्वैच्छिक संगठनों को सहायता एवं अनुदान तथा अंतरराष्ट्रीय बालश्रम उन्मूलन कार्यक्रम में भागीदारी आदि प्रमुख प्रावधान निर्धारित किए गए हैं। पिछले कुछ वर्षों में बालश्रम पुनर्वास के लिए विशेष विद्यालयों एवं पुनर्वास केंद्रों की व्यवस्था भी की गई है जहां रोजगार से हटाए गए बच्चों को अनौपचारिक शिक्षा, व्यावसायिक प्रशिक्षण, अनुपूरक आहार आदि की विशेष व्यवस्था रखी गई है। इस परियोजना के अंतर्गत देश में अभी तक आंध्र प्रदेश, बिहार, छत्तीसगढ़, झारखंड, कर्नाटक, महाराष्ट्र, मध्य प्रदेश, राजस्थान, तमिलनाडु, उत्तर प्रदेश, पश्चिम बंगाल, पंजाब तथा उड़ीसा में 3 लाख से भी अधिक बच्चों को शिक्षा की व्यवस्था की गई है। इनमें से करीब 1.50 लाख बच्चे औपचारिक स्कूलों की मुख्य धारा में सम्मिलित किए जा चुके हैं। श्रम मंत्रालय द्वारा स्वयंसेवी संगठनों को वित्तीय सहायता उपलब्ध कराने की भी व्यवस्था है जिसमें बाल श्रमिकों के कल्याण के लिए उनके द्वारा संचालित किए जा रहे प्रोजेक्ट की लागत का 75 प्रतिशत भाग सहायता के रूप में श्रम मंत्रालय द्वारा दिया जाता है। वर्ष 2005-06 में इस योजना के अंतर्गत 87 स्वयंसेवी संगठनों को आर्थिक सहायता उपलब्ध कराई गई है। इन स्वयंसेवी संगठनों द्वारा नियमित रूप से विभिन्न प्रकार के कार्यक्रम आयोजित किए जाते हैं। 4-8 सितंबर, 2005 में "ग्लोबल मार्च अगेन्स्ट चाइल्ड लेबर" नामक संस्था द्वारा नई दिल्ली में बाल श्रम और शिक्षा विषय पर द्वितीय विश्व कांग्रेस का आयोजन किया गया जिसमें बालश्रम उन्मूलन के क्षेत्र में स्वयंसेवी संगठनों के सहयोग प्राप्त किए जाने हेतु काफी व्यावहारिक और उपयोगी सुझाव निष्कर्ष के रूप में प्राप्त हुए हैं।

केंद्र सरकार द्वारा अंतरराष्ट्रीय श्रम संगठन की सहायता से राज्य सरकारों, गैर सरकारी संगठनों श्रम संगठनों और कर्मचारियों के सहयोग से बालश्रम निवारण हेतु देश में कइ विशेष प्रायोजनाएं भी प्रारंभ की गई हैं। इन प्रायोजनाओं का उद्देश्य प्रायोजना क्षेत्रों में धीरे-धीरे बाल-श्रमिकों को हटाना है और बाल श्रमिकों के परिवारों को प्रौढ़ शिक्षा की व्यवस्था करके संबंधित कानून के उचित क्रियान्वयन पर जोर देना है, साथ ही गरीबी उन्मूलन के कार्यक्रमों पर ध्यान देकर हटाए गए बच्चों को उचित पोषण की व्यवस्था किया जाना है। घातक उद्योगों से बाल श्रमिकों के उन्मूलन की योजना के प्रभावी क्रियान्वयन हेतु केंद्र सरकार द्वारा "राष्ट्रीय बालश्रम उन्मूलन प्राधिकरण" का गठन भी किया गया है। सरकार द्वारा चलाई जा रही विभिन्न योजनाओं और प्रयासों के अतिरिक्त इस क्षेत्र में कुछ गैर सरकारी संगठनों, ट्रेड यूनियंस और श्रमिक-परिषदों ने भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। इस समय देश में 250 से अधिक गैर-सरकारी संगठन बाल श्रमिकों के लिए कल्याण की योजनाएं चला रहे हैं। यद्यपि इन संगठनों की पहुंच केवल बड़े-बड़े नगरों तक और बाल श्रमिकों की लगभग एक या दो प्रतिशत आबादी तक ही है लेकिन जिस प्रकार अब सरकार की नीति इस प्रकार के संगठनों को भरपूर सहयोग प्रदान करने की है उससे आशा है कि अब शीघ्र ही बाल श्रमिकों के उन्मूलन में इन संगठनों की और भी अधिक महत्वपूर्ण और प्रभावी भूमिका रहेगी।

उल्लेखनीय है कि बालश्रम का उन्मूलन, विशेषकर खतरनाक व्यवसायों से बाल मजदूरों को हटाना, केंद्रीय श्रम मंत्रालय के सबसे महत्वपूर्ण प्रयासों में से एक है। बालश्रम समस्या से प्रभावित जिलों में 100 और राष्ट्रीय बाल श्रम परियोजना जिन्हें (एनसीएलपी) कहा जाता है, शुरू की गई है जिन्हें मिलाकर इनकी संख्या 250 हो गई है। हाल ही में इन योजनाओं में संशोधन करके तथा अन्य सरकारी कार्यक्रमों के साथ इसके समन्वय पर विशेष जोर दिया गया है। संशोधित योजना के अंतर्गत 9 से 14 वर्ष के बाल श्रमिकों को मुख्य धारा में लाकर एनसीएलपी के अधीन चल रहे विशेष स्कूलों को औपचारिक शिक्षा प्रणाली में शामिल किया गया है। 5 से 8 वर्ष के बाल श्रमिकों को भी सर्वशिक्षा अभियान के तहत मुख्य धारा में लाकर स्कूली शिक्षा दिए जाने की व्यवस्था की जा रही है। संशोधित योजना में बच्चों के स्वास्थ्य की जांच, पोषाहार की आवश्यकता और व्यावहारिक प्रशिक्षण जैसे विषयों पर भी विशेष ध्यान दिया गया है। 10वीं योजना के अंतर्गत बालश्रम उन्मूलन के लिए 602 करोड़ रूपए की राशि आवंटित है जो 9वीं पंचवर्षीय योजना को निर्धारित 250 करोड़ रूपए की राशि के दुगने से भी अधिक है। इस प्रकार केंद्रीय श्रम मंत्रालय अर्थात केंद्र सरकार की कोशिश इस बात की रही है कि ऐसे जोखिम वाले व्यवसायों से बाल मजदूरी को पूरी तरह समाप्त किया जाए और यह काम 10वीं योजना के अंत अर्थात वर्ष 2007 तक पूरा हो जाए। भले ही इस निर्धारित अवधि में यह कार्य पूर्ण न हो सके लेकिन यह कहना अतिशयोक्तिपूर्ण नहीं होगा कि दसवीं योजना की अवधि में इस दिशा में महत्वपूर्ण उपलब्धियां अर्जित की गई हैं। बालश्रम उन्मूलन पर भारत-अमेरिका परियोजना जिसे इन्डस के नाम से जाना जाता है के अंतर्गत वर्ष 2007 तक 80 हजार और बाल श्रमिकों को मुख्य धारा में लाने का लक्ष्य निर्धारित किया गया है। यह परियोजना राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र दिल्ली, महाराष्ट्र, मध्य प्रदेश, तमिलनाडु और उत्तर प्रदेश के 21 जिलों में चलाई जा रही है। इसका उद्देश्य शिक्षा विभाग के साथ मिलाकर इन जिलों में खतरनाक व्यवसायों में काम कर रहे बाल मजदूरों को हटाना है। अमेरिका के श्रम विभाग द्वारा इस परियोजना के लिए भारत को 2

करोड़ डॉलर की सहायता प्रदान की गई है। शर्तों के मुताबिक इतनी ही राशि भारत सरकार द्वारा भी खर्च किए जाने का प्राविधान किया गया है। यह परियोजना 16 फरवरी, 2004 से आरंभ की जा चुकी है और इसके अच्छे परिणाम प्राप्त होने लगे हैं। इन दोनों योजनाओं के अतिरिक्त केंद्रीय श्रम मंत्रालय के बालश्रम प्रभाग द्वारा स्वयंसेवी संगठनों को विशेष अनुदान और सहायता देने की योजना भी लागू की गई है। योजना के अंतगर्त राज्य सरकार की सिफारिशों पर कामकाजी बच्चों के पुनर्वास की परियोजना लागत का 75 प्रतिशत अंश वित्तीय सहायता के रूप में केंद्रीय श्रम मंत्रालय द्वारा स्वयंसेवी संगठनों को दिए जाने की व्यवस्था रखी गई है। इस योजना के अंतर्गत गैर सरकारी संगठनों को उन जिलों में बालश्रम उन्मूलन के लिए सीधे सहायता प्रदान की जाती है जहां राष्ट्रीय बालश्रम परियोजना या भारत-अमेरिका परियोजना से संबंधित योजनाएं लागू नहीं की जा रही है।

चुनौतियां एवं निराकरण

देश को बाल श्रमिकों के नियोजन के कलंक से मुक्ति दिलाने हेतु अभी तक किए गए प्रयासों और उनसे मिले परिणामों के अनुभवों के आधार पर यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि इस महत्वपूर्ण अभियान के समक्ष अनेक चुनौतियां एवं समस्याएं हैं जिनके निराकरण की योजना बनाने के लिए पहले इन चुनौतियों और समस्याओं के विषय में गहन अध्ययन किया जाना चाहिए और बाद में उनके निराकरण हेतु व्यावहारिक समाधान खोजे जाने चाहिए। बालश्रम उन्मूलन की दिशा में अभी तक के अनुभवों के आधार पर यह कहा जा सकता है कि बाल श्रमिकों के संबंध में सरकारी संगठनों, स्वैच्छिक संस्थाओं, औद्योगिक प्रतिष्ठानों अथवा अंतरराष्ट्रीय एजेंसियों आदि द्वारा प्रकाशित आंकड़ों में बहुत कुछ भिन्नता मिलती है। इनमें से कुछ आंकड़े तो पूर्वाग्रहों से ग्रसित भी बताए जाते हैं। अत: समस्या से निराकरण की योजना बनाने से पूर्व आवश्यक है कि इस संबंध में सही-सही आंकड़े एकत्र किए जाएं। इस कार्य के लिए सरकार को कुछ प्रतिष्ठित एवं विश्वसनीय स्वयंसेवी संस्थाओं की सहायता लेनी चाहिए ताकि इस ओर विशेष ध्यान देकर विभिन्न प्रकार के कार्यों में लगे बाल श्रमिकों की ठीक-ठीक संख्या, उनकी ठीक-ठीक आयु, पारिवारिक स्थिति, शैक्षिक स्तर, कार्य के घंटे, कार्य की दशाएं, वेतन अथवा पारिश्रमिक की दरें आदि-आदि की ठीक-ठीक सूचनाएं संकलित की जानी अपरिहार्य हैं तभी उनके पुनर्वास अथवा कल्याण की योजनाओं का निर्माण और उनको मूर्त रूप दिया जाना संभव हो सकेगा। इस दिशा में यद्यपि केंद्र सरकार तथा योजना आयोग के अतिरिक्त विभिन्न राज्य सरकारों द्वारा समय-समय पर सर्वेक्षण कराए जाते रहे हैं, लेकिन जिस तरीके से और जिस अंतराल पर उन्हें अंजाम दिया गया है, वे कारगर साबित नहीं हो रहे हैं। यही नहीं, अभी तक "बच्चे" की सही-सही परिभाषा तक को हम निर्धारित नहीं कर पाए हैं। चाइल्ड लेबर एक्ट के मुताबिक 14 वर्ष या उससे कम आयु के बच्चे को "बालक" माना गया है। भारतीय दंड संहिता के अनुसार 16 वर्ष या इससे कम आयु का बच्चा "बालक" माना जाता है जबकि महिला एवं बाल विकास मंत्रालय द्वारा 18 वर्ष या इससे कम आयु वाला बच्चा "बालक" की श्रेणी में रखा गया है। अब इस तरह के विरोधाभासों को शीघ्रतापूर्वक ठीक किया जाना नितान्त आवश्यक है।

बाल श्रमिकों की समस्या को गंभीरतम करने के लिए दूसरी प्रमुख चुनौती देश में व्याप्त बेरोजगारी और गरीबी से संबंधित है। सर्वोच्च न्यायालय ने भी अपने दिसंबर, 1996 के बालश्रम से संबंधित निर्णय में बालश्रम के लिए गरीबी को उत्तरदायी मानते हुए कहा कि जब तक परिवार के लिए आय की वैकल्पिक व्यवस्था नहीं हो पाती, तब तक बालश्रम से निजात पाना मुश्किल है। यह निर्विवाद सत्य है कि देश में अधिकांश बाल श्रमिक पारिवारिक गरीबी अथवा पारिवारिक बेरोजगारी के शिकार है। परिवार के सदस्यों को दो जून की रोटी उपलब्ध कराने के उद्देश्य से अभिभावकों द्वारा उन्हें असमय ही परिवार के बोझ को उठाने के लिए विवश किया जाता है। वर्तमान में उपलब्ध नवीनतम आंकड़ों के अनुसार देश में 26 करोड़ लोग आज भी गरीबी की रेखा से नीचे जीवन-यापन करने के लिए विवश है जिन्हें दो जून का भोजन भी सुनिश्चित नहीं है। लाखों नवयुवक आज भी ऐसे हैं जो रोजगार की तलाश में दर-दर भटक रहे हैं अथवा भरण पोषण के लिए आवश्यक अथवा क्षमता के अनुसार वांछित रोजगार से निम्न स्तर का अल्पकालिक रोजगार होने से परिवार के लिए वांछित आय प्राप्त नहीं कर पा रहे हैं। ऐसी परिस्थिति में अपने परिवार के छोटे-छोटे सदस्यों को विवशता में बाल श्रमिकों के रूप में बाजार में प्रवेश दिलाते हैं। कुछ परिवार ऐसे भी हैं जिनमें कोई प्रौढ़ सदस्य नहीं है और मजबूरी में उन परिवारों के बच्चों को श्रम बाजार की शरण लेनी पड़ रही है। हालांकि युवकों को रोजगार के अवसर बढ़ाने हेतु, सरकार द्वारा बेरोजगारी निवारण की अनेक योजनाएं और कार्यक्रम चलाए जा रहे हैं लेकिन जनसंख्या के बढ़ते प्रकोप तथा आपाधापी के माहौल के कारण उनका असर आंशिक तौर पर ही हो पा रहा है। इस समस्या के निराकरण के लिए प्रत्येक परिवार के कम से कम एक प्रौढ़ सदस्य को रोजगार के अवसरों की गारंटी प्रदान करने के अलावा और कोई दूसरा रास्ता नहीं है। हालांकि देश के 200 जिलों में फरवरी, 2006 से राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना लागू की गई है और अगले

3 वर्षों में इसे पूरे देश में लागू किया जाना भी प्रस्तावित है लेकिन इसमें निर्धारित प्रावधानों को विस्तारित किया जाना होगा ताकि जरूरतमंद लोगों को व्यावहारिक रूप में रोजगार की गारंटी प्राप्त हो सके। इसके लिए सरकार को बेरोजगारी निवारण की अधिक व्यावहारिक, कारगर और प्रभावी योजनाएं बनाकर उनको ठीक से क्रियान्वित करना होगा तथा ऐसे परिवारों को जिनमें कोई प्रौढ़ अथवा रोजगार युक्त सदस्य नहीं है, उनको नियमित आय के साधन जुटाने हेतु भी आवश्यक कदम उठाने होंगे।

इस समस्या के लिए उत्तरदायी तीसरी प्रमुख चुनौती इनके नियोजकों की लोभी अथवा शोषण की बढ़ती प्रवृत्ति है। बाल श्रमिकों के नियोजक, चाहे वह ढाबों और चाय की दुकानों के मालिक हों, घरेलू नौकरों के रूप में कार्य कराने वाले सेठ, साहूकार अथवा अफसर हों अथवा कांच, जरी, कालीन, आतिशबाजी, माचिस आदि उद्योगों को परिचालित करने वाले उद्योगपति हों, सभी का उद्देश्य अधिक से अधिक श्रम कराकर कम से कम पारिश्रमिक भुगतान कर उनका शोषण करने का रहता है। इसके लिए यदि उन्हें कानून की परिधि से बचने के लिए झूठे-सच्चे आंकड़े प्रस्तुत करने पड़े अथवा किन्हीं लोगों की गैर कानूनी सेवा-अर्चना भी करनी पड़े तो उन्हें कोई संकोच नहीं होता है। इस चुनौती का मुकाबला सरकार को अपने तंत्र को अधिक क्रियाशील और प्रभावी बनाकर तथा सामाजिक कार्यकर्ताओं आदि की सहायता प्राप्त करते हुए दृढ़तापूर्वक करना होगा अन्यथा अपनी धन-दौलत, मायाजाल, प्रपंच एवं प्रभावशीलता की आड़ में इनके शोषणकर्ताओं की संख्या में निरंतर वृद्धि होती रहेगी और दिन-प्रतिदिन अधिक संख्या में प्रताड़ित और शोषित होते रहेंगे ये अबोध बच्चे!

इस क्षेत्र में चौथी प्रमुख चुनौती इस समस्या के समाधान हेतु बनाए गए "नियमों और कानूनों के प्रभावी क्रियान्वयन न हो पाने" से संबंधित है। यद्यपि बच्चों को श्रमिकों की दुनिया में प्रवेश से रोकने हेतु अथवा उनके शोषण को प्रतिबंधित करने हेतु सरकार द्वारा अनेक कानूनी प्रावधान किए गए हैं लेकिन कड़वी सच्चाई यह है कि इन कानूनों और प्रावधानों का न तो कड़ाई से पालन संभव हुआ है और न ही इनके प्रभावी क्रियान्वयन हेतु उपयुक्त वातावरण बनाया जा सका है। यद्यपि पिछले कई वर्षों से इस दिशा में सरकार ने कुछ कड़े और प्रभावी कदम भी उठाए हैं और कहीं-कहीं अच्छी सफलता भी अर्जित की है लेकिन उपलब्ध अधिनियमों और कानूनों में खामियां और कमियों का लाभ उठाकर अधिकांश दोषी नियोजकों को दंडित कर पाना संभव नहीं हो पा रहा है। "भारतीय चिकित्सा अनुसंस्थान परिषद" के महानिदेशक की अध्यक्षता में गठित की गई सलाहकार समिति द्वारा हाल ही में की गई सिफारिशों के अनुसरण में 1 अगस्त, 2006 को केंद्र सरकार द्वारा 14 वर्ष से कम आयु के बच्चों को ढाबों, दुकानों व घरेलू नौकर के रूप में रखने पर पाबंदी भी लगाई गई है लेकिन इस पाबंदी पर अमल किया जाना कितना संभव हो पाएगा यह तो भविष्य के गर्भ में ही है। उल्लेखनीय है कि कई वर्ष पूर्व केंद्र सरकारं द्वारा ही सरकारी कर्मियों द्वारा बच्चों को घरेलू नौकर के रूप में रखने पर भी पाबन्दी लगाई गई थी लेकिन इस पाबंदी को कितना लागू किया जा सका है इस तथ्य से साबित हो जाता है कि अभी तक इस अपराध के लिए कहीं भी किसी को दण्डित नहीं किया जा सका है जबकि इसके उल्लंघन के अनेकों उदाहरण आज हम सभी के समक्ष दिन-प्रतिदिन दिखाई पड़ते हैं। अत: कानून बनाने से अधिक आवश्यकता आज उनको व्यावहारिक रूप से अमल में लाने के लिए प्रयत्न करने की है। साथ ही कानूनों को भी कठोर किया जाना भी बहुत जरूरी है। बालश्रम निवारण से संबंधित अधिनियम में संशोधन कर 14 वर्ष तक की आयु के सभी बच्चों को किसी भी उद्योग अथवा प्रक्रिया में नियोजन एवं उपयोग पर पूर्ण प्रतिबंध लगाना और बालश्रम शोषण को गैर-जमानती अपराध घोषित कर कड़ी से कड़ी सजा की व्यवस्था करना बहुत आवश्यक है। इसके साथ-साथ कानूनी प्रावधानों को इतना सशक्त और प्रभावी भी बनाया जाना चाहिए जिससे कि अपराधी को बच निकल जाने हेतु कोई रास्ता नहीं मिल सके ताकि किए गए अपराध के लिए पर्याप्त सजा दिलाया जाना संभव हो सके।

बालश्रम निवारण के क्षेत्र में पांचवीं प्रमुख चुनौती बाल श्रमिकों को श्रम क्षेत्र में हटाकर इनके पुनर्वास अथवा शिक्षा की समुचित व्यवस्था किए जाने से संबंधित है। कानूनी प्रावधानों का दृढ़तापूर्वक उपयोग कर इन्हें इनके कार्यक्षेत्र से हटाकर इनके उचित पुनर्वास एवं शिक्षा की समुचित व्यवस्था तुरंत उपलब्ध कराना आवश्यक होगा। साथ ही साथ अब आवश्यक हो गया है कि 6 से 14 वर्ष तक के सभी बच्चों को निश्चित रूप से संविधान में प्रावधानित नि:शुल्क और अनिवार्य शिक्षा की वास्तविक रूप में व्यवस्था सुनिश्चित की जाए। यद्यपि स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद से विद्यालय जाने वाले इस आयुवर्ग के बच्चों की संख्या 5 करोड़ से बढ़कर 22 करोड़ हो गई है लेकिन अभी तक लगभग 2.5 करोड़ बच्चे विद्यालयों में नहीं जा पाते हैं। यद्यपि 86वें संविधान संशोधन (2002) के अनुक्रम में प्राथमिक शिक्षा प्रत्येक बच्चे का मौलिक अधिकार भी घोषित कर दिया गया है लेकिन अभी इसे अमल में लाए जाने हेतु आवश्यक व्यवस्थाएं सुनिश्चित किया जाना जरूरी है। इन बच्चों के माता-पिता को प्रौढ़ शिक्षा के माध्यम से जागरूक और उत्तरदायित्वपूर्ण बनाया जाना भी आवश्यक है। पर्याप्त प्रचार द्वारा जन भावनाओं को प्रेरित कर जन मानस को इस बुराई के प्रति संवेदनशील बनाया जा सकता है। कानूनों के प्रभावी क्रियान्वयन के साथ-साथ जन सहयोग और जन चेतना द्वारा भी इस बुराई को समाप्त करने में सहायता प्राप्त की जा सकती है। बाल अधिकारों के समर्थक अंतरराष्ट्रीय संगठनों एवं विभिन्न देशों द्वारा बाल श्रमिकों के हाथों से बने सामान के बहिष्कार एवं उनके आयात पर लगाए गए प्रतिबंधों जैसे ठोस कदम भी अपने देश के नागरिकों द्वारा उठाए जा सकते हैं और इसके लिए जरूरत होगी देश में जनचेतना लाने हेतु जन आंदोलन चलाने की। ❐

(लेखक स्वतंत्र पत्रकार हैं)

बाल श्रमिक : अस्तित्व की खोज में

ब्रजेश कुमार तिवारी

यूनीसेफ इस बात पर बल देता है कि मानवीय संसाधनों के निवेश या मानव संसाधन निर्माण की प्रत्येक दीर्घकालीन योजना बच्चों से ही प्रारंभ की जानी चाहिए लेकिन स्थिति ऐसी नहीं है। आज बाल-श्रम एक विश्वव्यापी समस्या है। भारत में स्थिति और अधिक विस्फोटक है। विश्व के कुल बाल श्रमिकों में लगभग 20-25 प्रतिशत अकेले भारत में है। आज करोड़ों बच्चे गुलामी से भी बदतर हालात से जूझ रहे हैं और बेहद जोखिम वाले कार्य करने को विवश हैं। तीसरी दुनिया के अन्य देशों के मुकाबले भारत में बाल श्रम उन्मूलन की दिशा में कुछ विशेष उपाय नहीं किये जा सके हैं। माइरन वीनर ने अपनी पुस्तक 'द चाइल्ड एंड स्टेट इन इंडियन' में इस बात का खुलासा करने की कोशिश की है कि क्यों भारत में बच्चों एवं रोजगार के प्रति अन्य देशों की अपेक्षा एक अलग ढंग का उपागम अपनाया गया है।

संयुक्त राष्ट्र संघ जहां 18 वर्ष से कम आयु का श्रमिक बाल श्रमिक मानता है वहीं भारतीय संविधान के अनुसार 5-14 वर्ष के बीच के बालक या बालिका जो वैतनिक काम करते हैं या श्रम द्वारा पारिवारिक कर्ज चुकाते हैं, बाल श्रमिक हैं। बाल-श्रम की पृष्ठभूमि में मुख्यत: गरीबी ही होती है। परिवार के सदस्यों का पेट पालने के लिए ही बच्चों को जोखिम भरे, कमरतोड़ मेहनत वाले कार्यों में झोंक दिया जाता है। बेरोजगार माता-पिता बच्चों को कार्य पर भेज देते हैं। अशिक्षा के चलते तथा जनसंख्या वृद्धि से जब गरीब व निर्धन परिवार बड़ा होने लगता है तो उसके अनुरूप आय की पूर्ति बाल श्रम से की जाती है। औद्योगीकरण व तकनीकी के कारण नियोक्ता सस्ता श्रम चाहता है। ऐसे में बाल-श्रम से अच्छा उपाय उनके लिए क्या हो सकता है? हमारे यहां बेरोजगारी भत्ता नहीं मिलने से भी अभिभावक अपने बच्चों से श्रम करवाने के लिए मजबूर होते हैं।

बाल श्रमिकों का वर्ग सकल राष्ट्रीय उत्पाद में लगभग 7 प्रतिशत योगदान दे रहा है। सर्वाधिक बाल श्रमिक आंध्र प्रदेश तथा उत्तर प्रदेश में हैं। तमिलनाडु के शिवकाशी पटाखा फैक्टरी में और माचिस इकाई में 45 हजार बच्चे कार्यरत हैं। फीरोजाबाद शीशा उद्योग में 45 हजार तो कालीन उद्योग में एक लाख बाल श्रमिक हैं। बच्चों की एक बड़ी संख्या जयपुर में पत्थरों की घिसाई में, मुरादाबाद पीतल के बर्तन उद्योग में, अलीगढ़ ताले उद्यम में, मार्कापुरा (आंध्र प्रदेश) और मंदसौर (मध्य प्रदेश) में स्लेट उद्यम में और गलीचे के कार्यों में कार्यरत हैं। इसके अतिरिक्त घर में नौकर, भोजनालय तथा ढाबे में बैरे तथा पेपर बेचने जैसे कार्यों में लाखों बाल श्रमिक हैं। इस समय लगभग ढाई करोड़ बाल श्रमिक हैं तथा इनकी संख्या सन् 2020 तक पांच करोड़ हो जाने की आशंका है।

बाल-श्रम निरोधक उपबंध के अंतर्गत संविधान के अनुच्छेद 15(3) द्वारा सरकार को बालकों के लिए अलग से कानून बनाने का अधिकार दिया गया है। अनुच्छेद 23 बालकों के क्रय-विक्रय एवं उनके द्वारा गैर-कानूनी तथा अनैतिक कार्य करने पर रोक लगाता है। संविधान का अनुच्छेद 24 जो 14 वर्ष से कम आयु के बच्चों को कारखानों, खदानों तथा औद्योगिक प्रतिष्ठानों में नियोजित करने से रोकता है। अनुच्छेद 39 बच्चों के स्वास्थ्य एवं उनके शारीरिक विकास हेतु पर्याप्त सुविधाएं उपलब्ध कराने हेतु सरकार को निर्देश देता है। 1986 में बाल श्रम निरोधक व नियमन कानून बने, 1996 में खतरनाक उद्योगों में बाल-श्रम को सर्वोच्च न्यायालय ने गैर-कानूनी घोषित किया, बाल श्रमिक सेल बने, बाल-श्रम परियोजना हेतु पंचवर्षीय योजनाओं में बजट भी बढ़े परंतु यह सब संवेदनहीन व अनुत्तरदायित्वपूर्ण प्रशासन की भेंट चढ़ गया। ये परियोजनायें गरीब परिवार के बृहद समूह तक नहीं पहुंच पाये। अंतरराष्ट्रीय श्रम संगठन का मानना है कि मात्र श्रम कानून बालश्रम समस्या का समाधान नहीं कर सकते। सरकार द्वारा ग्राम विकास के लिये भेजे गये धन का 20 प्रतिशत ही गांवों में वास्तविक रूप से लगता है। इससे न तो ग्रामीण शिक्षा में सकारात्मक परिवर्तन और न ही रोजगार में वृद्धि हुई। इससे और भी बालश्रम की समस्या बढ़ती जा रही है।

सन् 1979 में गुरूपदस्वामी समिति गठित की गयी। 1987 में "राष्ट्रीय बाल-श्रम नीति" की घोषणा की गयी। सरकार द्वारा घोषित "राष्ट्रीय एजेण्डा" (1998) में सरकार द्वारा सभी बच्चों के लिए शिक्षा, पोषण और चिकित्सा सुविधा हेतु विशेष प्रयास करने की प्रतिबद्धता प्रदर्शित की गयी। "राष्ट्रीय बाल आयोग" गठित किया जा रहा है। "बाल न्याय" (बच्चों की सुरक्षा और देखभाल) अधिनियम 2000 भी संसद द्वारा पारित किया जा चुका है। पूरे देश में "समन्वित बाल-दिवस" (1975) जैसा महत्वपूर्ण कार्यक्रम चलाया जा रहा है। राष्ट्रीय शिशु सदन योजना (1994), मध्यान्ह भोजन योजना (1995), बालिका समृद्धि योजना (1997), उदिशा योजना (1997), किशोरी शक्ति योजना (2000) आदि कार्यक्रम भी चलाये जा रहे हैं। बच्चों के

सामाजिक महत्व को ध्यान में रखते हुए संयुक्त राष्ट्र संघ और अन्य अंतरराष्ट्रीय संस्थाओं ने 1979 को अंतरराष्ट्रीय बाल वर्ष के रूप में मनाया। बच्चों को अनिवार्य रूप से शिक्षा उपलब्ध कराने हेतु 93वां संविधान संशोधन संसद द्वारा पास किया गया, जिसमें 14 वर्ष तक के सभी बच्चों को मुफ्त शिक्षा देने की बात कही गयी है।

बाल-श्रम की समस्या को जड़ से समाप्त करने हेतु सरकार बच्चों के माता-पिता को रोजगार मुहैया कराये जिससे वे अपने बच्चों का भरण-पोषण ठीक से कर सके। सरकार कुटीर एवं लघु उद्योगों को बढ़ावा दे तथा षि विकास पर उचित ध्यान दे ताकि ग्रामीण बच्चों के माता-पिता आत्म निर्भर बन सके और बच्चों से नौकरी की नौबत ही न आये। सामाजिक संस्थायें अभिभावकों को व समाज में जागरूकता फैलायें और समझायें कि बाल-श्रम कितनी बड़ी समस्या है। निःशुल्क शिक्षा योजना प्रभावी बनायी जाये। बाल-श्रम विरोधी कानून का कड़ाई से पालन सुनिश्चित कराया जाय। प्रायः कानून के पालन में होने वाली कमी की आड़ में बाल श्रमिकों विशेषकर बालिकाओं के साथ मानसिक व शारीरिक शोषण नियोक्ता करते हैं। प्रायः बाल श्रमिक अमानवीय परिस्थितियों के अंतर्गत कार्य करते हैं। श्रम के अनुपात में उन्हें वेतन बहुत कम दिया जाता है व उन्हें रोजगार सुरक्षा भी प्राप्त नहीं है। इनसे अवकाश के दिनों में भी कार्य कराया जाता है।

बाल-श्रम को संज्ञेय अपराध माना जाये, इसका प्रयास किया जाना चाहिए। व्यापक स्तर पर जागरूकता तथा शिक्षा का कार्यक्रम चलाया जाये। सरकार को ऐसे उद्योगों द्वारा उत्पादित वस्तुओं के प्रति कड़ा रूख अपनाना चाहिए, ताकि बाल श्रम को हतोत्साहित किया जा सके। जिस समाज में लोगों को अपने मौलिक अधिकारों तक की जानकारी नहीं है, वहां पर ऐसे कार्यक्रमों से अधिकारों के प्रति जनता के बीच चेतना लायी जा सकती है। इसके साथ ही राजनीतिक सक्रियता एवं दृढ़ इच्छा शक्ति की बड़ी शिद्दत से जरूरत महसूस की जा रही है। वस्तुतः बाल-श्रम की समस्या एक सामाजिक आर्थिक पृष्ठभूमि से जुड़ी हुई समस्या है, जिसे बगैर दृढ़ इच्छा शक्ति एवं प्रभावी कदमों के समाप्त करना एवं दिवा:स्वप्न ही माना जायेगा। अध्ययन बताता है कि आज के उपभोक्तावादी युग में बाजार की शक्तियों दिनोदिन बढ़ती ही जा रही है। संवेदना और नैतिकता की बाजार में कोई जगह नहीं है अतः श्रम के प्रति सम्मान भी घटता जा रहा है और बच्चों के रूप में सस्ते श्रम को बढ़ावा दिया जा रहा है। सच तो यह है कि उच्चतम न्यायालय के आदेशों की सार्थकता तभी सामने आयेगी, जब हम व्यावहारिक मोर्चे पर बाजी जीत सकेंगे। यद्यपि स्थिति अंधकारमय है लेकिन आशा है कि बाल श्रमिकों से मुक्त समाज की धरती पर सुबह जरूर आयेगी। ❑

(लेखक काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी से संबद्ध हैं)

बच्चों को घरेलू नौकरों या खानपान के स्थानों पर नौकर रखने पर प्रभावी तौर पर रोक लगाने में श्रम मंत्रालय ने राज्य सरकारों से सहयोग मांगा

श्रम मंत्रालय ने घरेलू नौकरों के रूप में और ढाबों आदि में बाल श्रमिकों को नौकरी देने पर रोक लागू करने के लिए राज्य सरकारों से मदद मांगी है। मुख्यमंत्रियों को भेजे गए पत्र में श्रम और रोजगार मंत्री ने 10 अक्टूबर 2006 से लागू रोक के तहत काम से हटाए गए बाल श्रमिकों के पुनर्वास के लिए भी राज्यों से सहयोग मांगा है। राज्य स्तरीय अधिकारियों, नागरिक समाज संगठनों, गैर सरकारी संगठनों और हित धारकों को इस बारे में जागरूक बनाने के लिए मंत्रालय क्षेत्र स्तरीय बैठकें कर रहा है। इस तरह की बैठकें अमृतसर, बंगलूर, गुवाहाटी और रांची में आयोजित हो चुकी हैं।

श्रम और रोजगार सचिव श्री केएम साहनी ने भी केंद्र सरकार के मंत्रालयों के सचिवों को पत्र लिखा है जिसमें, उन्होंने संबंधित विभागों से बुनियादी संरचनात्मक सहायता प्रदान कराने का आग्रह किया है ताकि बाल श्रम से मुक्त कराए गए बच्चों और उनके परिवारों के पुनर्वास का लक्ष्य पूरा किया जा सके। उन्होंने यह भी आग्रह किया है कि दीर्घकालिक उपायों के तौर पर श्रमिक बच्चों और उनके परिवारों के लिए योजना में विशेष प्रावधान करें। महिला और बाल विकास मंत्रालय और गरीबी उपशमन, सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्रालय ने इस दिशा में पहल शुरू कर दी है। इन मंत्रालयों के सचिवों की एक बैठक की अध्यक्षता अभी हाल में ही साहनी ने की है ताकि इन बच्चों और उनके परिवारों को विभिन्न केंद्रीय मंत्रालयों की सहायता मिल सके। पुनर्वास कार्य में औद्योगिक संघों और गैर-सरकारी संगठनों से भी उनकी राय और सहयोग मांगे जा रहे हैं।

इस बीच कार्मिक और प्रशिक्षण विभाग ने 31 अगस्त, 2006 को सभी सरकारी अधिकारियों को बच्चों को घरेलू नौकरी के रूप में नहीं रखने के लिए विस्तृत निर्देश जारी किये हैं। सरकार ने घरेलू नौकरों, ढाबों, रेस्तरां, होटलों, मोटलों, चाय घरों, रिसार्टों, स्पा या अन्य मनोरंजन केंद्रों में बाल श्रम पर रोक लगाने का निश्चय किया है। मंत्रालय ने चेतावनी दी है कि इन स्थानों पर अगर बाल श्रम करवाया गया तो अधिनियम के तहत कानूनी कार्रवाई की जाएगी।

बालश्रम उन्मूलन के लिए आवश्यकता है वैकल्पिक रोजगार की

राकेश शर्मा

घरेलू काम, सड़क ढाबों, होटलों आदि में बाल मजदूरी पर सरकारी प्रतिबंध 10 अक्तूबर से लागू हो रहा है। बाल श्रम उन्मूलन और विनियम अधिनियम 1986 के अंतर्गत 13 उद्योगों को बाल श्रम कानून के प्रतिबंधित भाग में रखा गया था। सामाजिक संगठनों अंतर्राष्ट्रीय श्रम सुधार मानकों में परिवर्तन तथा न्यायालयों के हस्तक्षेप के कारण समय-समय पर सरकारी अधिसूचनाओं के माध्यमों से कुछ उद्योगों और कार्यों को प्रतिबंधित श्रेणी में शामिल किया जाता रहा है। गौरतलब है कि 14 वर्ष आयु वालों के लिए सरकार ने 57 उत्पादन प्रक्रियाओं और 15 व्यवसायों को प्रतिबंधित कर दिया है। घरों और ढाबों के इस सूची में शमिल करने के बाद सरकार ने अधिसूचना जारी की थी। यह अधिसूचना 10 अक्तूबर 2006 से प्रभावी हो जाएगी।

इस अधिनियम में प्रावधान है कि कोई भी व्यक्ति, जो इस अधिनियम के उपबंधों का उल्लघंन करते हुए किसी बच्चे को काम पर रखता है तो उसे कम से कम तीन माह से लेकर एक वर्ष तक का कारावास या कम से कम 10,000 रुपये से लेकर 20,000 रुपये तक का जुर्माना या दोनों दंड दिया जा सकता है। इसके आरोप में पकड़े जाने पर किसी बच्चे को नौकर रखने पर छह महीने की कैद या 20,000 रुपये तक का जुर्माना या दोनों सजाएं हो सकती हैं। दूसरी बार यह अपराध करने पर सजाएं दुगुनी की जा सकती है। केंद्र सरकार ने कानून को प्रभावी रूप से लागू कराने और बच्चों के परिवारों के पुनर्वास के लिए केंद्र ने राज्य सरकारों से भी मदद मांगी है।

सरकारी सेवा के नियमों में संशोधन

इसी प्रकार की एक केंद्रीय अधिसूचना 14 अक्तूबर 1999 की सरकारी कर्मचारियों के सेवा नियमों में संशोधन के माध्यम से जारी की गई। इसके माध्यम से सरकारी कर्मचारियों के सेवा नियमों में संशोधन किया गया है। ताकि कोई भी सरकारी अधिकारी न तो बच्चे से घरेलू बाल मजदूरी करा सकता है और न ही नौकर रख सकता है। राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग के एक फैसले के परिणामस्वरूप एक निर्णय एक छह वर्षीय बालक अशरफ के मामले में दिया गया था। दिल्ली के एक आईएएस अधिकारी ने अपने घरेलू नौकर द्वारा बच्चे के गिलास से बचे हुए दूध को पी लेने की सजा के तौर पर नौकर अशरफ के शरीर को गर्म लोहे से दाग दिया था। इसके विरुद्ध आवाज उठाई गई। श्री कैलाश सत्यार्थी के आंदोलन और मांगों के सामने मानवाधिकार आयोग ने इस पर कड़ी कार्रवाई का आदेश दिया और 1996 से अशरफ से शुरू हुआ यह आंदोलन धीरे-धीरे रफ्तार पकड़ चुका है। आज बल्कि विज्ञापन फिल्मों में एक्टिंग भी कर रहा है। कार्मिक और प्रशिक्षण विभाग ने 31 अगस्त, 2006 को सभी सरकारी अधिकारियों को बच्चों को घरेलू नौकरों के रूप में नहीं रखने के लिए विस्तृत निर्देश जारी किये हैं।

बाल श्रम उन्मूलन - विकास की गारंटी

अंतर्राष्ट्रीय श्रम संगठन के ग्लोबल इम्पलाइमेंट ट्रेंड के अनुसार दुनिया में करीब 18 करोड़ लोग बेरोजगार हैं और दुनिया भर में 24 करोड़ 60 लाख बच्चे काम-धंधे में लगे हैं। इस तुलनात्मक रिपोर्ट से पता चलता है कि बच्चों को स्कूल भेजकर अर्थव्यवस्था को दोहरा लाभ पहुंचाया जा सकता है। हाल ही में अंतर्राष्ट्रीय श्रम संगठन (आईएलओ) ने रिपोर्ट में खुलासा किया है कि बाल मजदूरी पर होने वाला खर्च और आमदनी का अनुपात सात गुना है। यदि कोई देश बाल श्रम उन्मूलन में एक रुपया खर्च करता है तो कालांतर में उसे सात रुपये का फायदा होगा क्योंकि इन बच्चों को शिक्षित कर क्षमता का पूर्ण विकास होने से देश की आर्थिक संपन्नता बढ़ेगी। संयुक्त राष्ट्र संघ की सबके लिए शिक्षा पर आयोजित बैठक में स्वीकार किया गया है कि बाल मजदूरी खत्म किए बिना सबके लिए शिक्षा का लक्ष्य हासिल नहीं किया जा सकता है।

बालश्रम के विविध रूप

बाल और श्रम अपने आप में निरीह एवं निरपवाद शब्द हैं, किंतु जब ये दोनों मिलकर बालश्रम बन जाते हैं तो एक विकट सामाजिक बुराई का रूप लेते हैं। एक विद्वान के अनुसार बालश्रम किसी बालक द्वारा किया गया कोई भी ऐसा कार्य, जिसे सीधे तौर पर स्वयं बालक को या फिर उनके परिवारजनों को आर्थिक लाभ पहुंचाने के प्रयोजन से किया जाये और जिससे उसके स्वयं के शारीरिक, मानसिक या सामाजिक विकास में बाधा पहुंचे। भारत सरकार द्वारा नियुक्त बालश्रम पर समिति के अनुसार बालकों की जनसंख्या का वह भाग आता है, जो या तो वैतनिक या अवैतनिक कार्यों पर नियुक्त हो। बाल मजदूर निम्न श्रेत्रों में अधिक रूप से पाए जाते हैं :

असंगठित क्षेत्र - होटल, ढाबा, फैक्टरी व दुकान, आटो वर्कशाप, अखबार बेचना, कोयला, अभ्रक चुनना, कचरा चुनना, खेती-बाड़ी, घर में नौकर का काम आदि।

संगठित क्षेत्र - कालीन बुनाई, दियासलाई, आतिशबाजी, हथकरघा, चमड़ा, कांच, भवन निर्माण, पत्थर खदान, रत्न उद्योग, ताला उद्योग आदि।

बाल श्रम के दुष्परिणाम

बाल श्रम के कारणों को जानने के लिए श्रम मंत्रालय ने श्री एम एस गुरुपदस्वामी की अध्यक्षता में एक 16-सदस्यीय समिति का गठन किया था। कहा था - अत्यधिक निर्धनता, फायदेमंद, रोजगार के अवसरों की

कमी, अनिश्चित आजीविका और निम्न स्तरीय जीवन शैली बाल श्रम को बड़े पैमाने पर फैलाने के मुख्य कारण हैं। बाल श्रमिक पहले खेतों के कामों में लगे रहते थे, किंतु औद्योगिकीकरण एवं शहरीकरण के बढ़ने के साथ-साथ विभिन्न उद्योगों एवं व्यवसायों में बाल श्रमिकों को बड़े पैमाने पर नियोजित किया जाने लगा है। बाल-बालिका श्रमिकों का यौन-शौषण मालिकों, ठेकेदारों, एजेंटों, सहकर्मियों, अपराधियों आदि द्वारा किया जाता है। ताकि बच्चों में इतना डर पैदा कर दिया जाए कि वे शोषण के विरुद्ध आवाज तक नहीं उठा सकें।

बाल मजदूरों का शारीरिक शोषण भी अधिक मात्रा में किया जाता है। सिर पर बोझा ढोने, ज्वलनशील भट्टियों में काम करने, कोई चीज खींचने के लिए अंतिम दम तक जोर लगाने, गंदे व बदबूदार कार्यों के कारण उनकी अनुमानित आयु एक-तिहाई रह जाती है। खानों एवं खदानों में बच्चों को भेजने को प्राथमिकता इसलिए दी जाती है कि उनमें व्यस्क नहीं घुस सकते। जब वे बड़े होते तो उनकी छंटनी कर दी जाती है। शोर करने वाले मशीनों पर बच्चे प्रायः बहरे हो जाते हैं और धूल के कारण नजला हो जाता है।

बाल श्रम विरोधी कानून

20 वीं सदी के शुरू में प्रथम विश्व युद्ध के बाद श्रमिकों के हितों की रक्षा के लिए अंतर्राष्ट्रीय संगठन की आवश्यकता समझी गई। वर्ष 1919 में अंतर्राष्ट्रीय श्रम संगठन की स्थापना की गई। बच्चों को विनियमित करने का प्रावधान किया गया। 12 वर्ष से अधिक उम्र वाले बच्चों को ही काम करने का सुझाव इस संगठन ने दिया। भारत में 1929 में रॉयल कमीशन की स्थापना हुई, जिसने अपनी रिपोर्ट 1931 में दी। इस रिपोर्ट में बच्चों के काम की दशाओं का दुःखद वर्णन किया गया था। बाल श्रमिक विरोधी कानून की शुरुआत बाल अधिनियम से होती है। बाल श्रम के उन्मूलन के लिए सर्वप्रथम ब्रिटिश शासन काल में वर्ष 1881 में खदानों एवं कारखानों में काम कर रहे बच्चों की सुरक्षा का कानूनी प्रावधान किया गया। इसमें सात वर्ष के नीचे के बच्चों को कारखाने में काम करने मनाही थी।

इसके बाद के प्रमुख अधिनियम इस प्रकार है: खदान अधिनियम 1901, फैक्टरी अधिनियम 1911, भारतीय खाद्य अधिनियम 1923, फैक्टरी संशोधित अधिनियम 1926, भारतीय बंदरगाह अधिनियम (संशोधित) 1931, चाय बागान मजदूर अधिनियम 1932, बाल बंधुआ श्रम अधिनियम 1933, फैक्टरी (संशोधित) अधिनियम 1934, भारतीय खदान (संशोधित) अधिनियम 1935, बाल रोजगार अधिनियम 1938, फैक्टरी अधिनियम 1948, बाल रोजगार (संशोधित) अधिनियम 1951, बागान श्रम अधिनियम 1951, खदान अधिनियम 1951, खदान अधिनियम 1952, फैक्टरी (संशोधित) अधिनियम 1954, व्यापारिक जहाजरानी अधिनियम 1958, मोटर ट्रांसपोर्ट मजदूर अधिनियम 1961, बीड़ी एवं सिगार मजदूर (सेवा शर्तें) अधिनियम 1966, बालरोजगार (संशोधित) अधिनियम 1978 एवं बाल श्रम (उन्मूलन तथा नियमन) अधिनियम 1986 मुख्य हैं। इसके बाद 1987 में राष्ट्रीय बाल श्रम नीति में भी बाल श्रम उन्मूलन के लिए अनेक प्रावधान किए गए।

संविधान में प्रावधान

भारतीय संविधान में बाल श्रम रोक लगाई गई है। हमारे मौलिक अधिकारों के अध्याय 3 में अनुच्छेद 23 के अंतर्गत बेगार पर निषेध लगा दिया गया है, अर्थात कोई भी व्यक्ति किसी दूसरे व्यक्ति से बलात काम नहीं ले सकता। अनुच्छेद 24 में प्रावधान किया गया है कि चौदह वर्ष से कम उम्र के किसी बच्चे को किसी कारखाने या खदान या अन्य किसी खतरनाक रोजगार में नियोजित नहीं किया जाएगा। अनुच्छेद 39 (ई) में यह प्रावधान है कि राज्य में ऐसी व्यवस्था करेगा जिससे पुरुष और स्त्री मजदूरों के स्वास्थ्य एवं शक्ति तथा बच्चों की नाजुक उम्र का दुरुपयोग न हो और भारत के नागरिक आर्थिक जरूरत से मजबूर होकर ऐसा कार्य (पेशा) न करें जो उनकी उम्र या ताकत के प्रतिकूल हो। अनुच्छेद 39 (एफ) में प्रावधान है कि राज्य ऐसी सुविधाओं एवं अवसरों की व्यवस्था करेगा जिससे बच्चे स्वतंत्रता एवं सम्मान के साथ तथा स्वस्थ तरीके से विकसित हों तथा उनका बचपन एवं जवानी शोषण व नैतिक तथा भौतिक परित्याग से सुरिक्षत हो। अनुच्छेद 45 में प्रावधान है कि राज्य संविधान लागू होने के दस वर्षों के अंदर 14 वर्ष की उम्र तक के बच्चों को मुक्त एवं अनिवार्य शिक्षा देने की कोशिश करेगा।

बाल श्रम उन्मूलन के उपाय

सबसे पहले यह जरूरी है कि मजदूरी समाप्त नहीं होने की धारणा को तोड़ना पड़ेगा। बाल मजदूरी प्रथा के कई कारण हैं लेकिन मुख्य कारण गरीबी, वयस्कों की बेरोजगारी तथा कम मजदूरी दर है। इसलिए विभिन्न विभागों के समन्वयन से विकास एवं कल्याण कार्यक्रमों का सीधा लाभ बाल मजदूरों के परिवारों को मिलना चाहिए जिससे उन परिवारों को बाल मजदूरों के जरिए मिलने वाली आय का वैकल्पिक स्रोत मिल सके। इतना ही नहीं, ऐंसे गरीब एवं वंचित परिवारों में स्वास्थ्य, पोषाहार, सार्वजनिक वितरण प्रणाली के माध्यम से सस्ते खाद्यान्न, कपड़े, मिट्टी का तेल तथा अन्य आवश्यक वस्तुएं उपलब्ध कराई जाएं, जिससे उन परिवारों में मृत्यु-दर और जन्म दर कम हो तथा उनकी औसत आयु बढ़े।

बाल श्रमिकों को मुक्त कराने के पश्चात उनके पुर्नवास की ओर ध्यान दिया जाना चाहिए। अन्यथा बाल श्रमिक आजीविका के साधनों से वंचित रहकर आजीविका के साधनों से वंचित रहकर असामाजिक कार्यों की ओर उन्मुख होकर अनेक समस्याएं उत्पन्न कर सकते हैं। पारंपरिक व्यवसाय को बढ़ावा देने के लिए व्यवसाय में लगे छोटे सदस्यों को प्रशिक्षण एवं स्थानीय ग्रामीण बैंको को ऋण दिलवा कर उनकी स्थिति मजबूत करनी चाहिए। स्कूलों में पाठ्यक्रमों में बाल श्रम प्रथा उन्मूलन से संबंधित एक अध्याय शामिल किया जाए। बाल श्रमिकों की शिक्षा का उचित प्रबंध करने के साथ ही उनको प्राथमिक शिक्षा के स्तर पर शिल्प कला की शिक्षा भी दी जानी चाहिए क्योंकि देश में काफी बड़ी संख्या में ऐसे बच्चे हैं, जो हस्तकला के क्षेत्र में अपने परिवार का हाथ बंटाते हैं। हमारी वर्तमान शिक्षा व्यवस्था बाल मजदूरों को बढ़ाने के लिए भी जिम्मेदार है। देश में एक तरफ तो स्कूलों का अभाव है और जहां स्कूल हैं भी वहां वह गरीब बच्चों की पहुंच के बाहर हैं। अगर गरीब बच्चे किसी तरह

पढ़-लिख भी लिए तो नौकरी नहीं मिलती। ग्रामवासियों को यह सोचने पर मजबूर होना पड़ता है कि शिक्षा प्राप्त करना उनके लिए पैसे और समय दोनों की बर्बादी है अत: रोजगारपरक शिक्षा की व्यवस्था ही बाल मजदूरों की बाढ़ को रोक सकती है।

बाल श्रम उन्मूलन अकेले सरकार की जिम्मेदारी नहीं है। वास्तव में यह ऐसा कार्यक्रम है, जिसके लिए बाल श्रम को एक सामाजिक और आर्थिक समस्या मानते हुए एक राष्ट्रीय अभियान चलाया जाना चाहिए। इस दिशा में परिवर्तनों के लिए हमें व्यापक और केंद्रित नीतियां और कार्यक्रम तैयार करने होंगे। इस दिशा में निरंतर शोध की आवश्यकता है ताकि बाल श्रमिकों के लिए क्रियान्वित शैक्षिक कार्यक्रमों को वास्तविकता में धरातल से जोड़ा जा सके।

10वीं योजना में बाल श्रम उन्मूलन

जनगणना के अनंतिम आंकड़ों के अनुसार 5-14 वर्ष की आयु वर्ग में कामकाजी बच्चों की संख्या 1.259 करोड़ है। बाल श्रम उन्मूलन के लिए 10वीं योजना में राष्ट्रीय बाल श्रम परियोजना के अंतर्गत कवर किए जाने वाले जिलों की संख्या 100 से बढ़ाकर 250 कर दी गई है। ताकि बाल श्रम की बहुलता वाले क्षेत्रों में बाल श्रमिकों का पुनर्वास किया जा सके।

दोपहर का भोजन कार्यक्रम से मिलने वाली खाद्य सुरक्षा का बाल श्रमिकों की संख्या कम करने पर सकारात्मक प्रभाव पड़ा है। सबको शिक्षा मुहैया कराने के उद्देश्य से शुरू किए गए सर्व शिक्षा अभियान से भी बच्चों के बीच साक्षरता के स्तर में उल्लेखनीय वृद्धि हुई है। विशेष स्कूलों की स्थापना राष्ट्रीय बाल श्रम परियोजना के अंतर्गत शुरू की गई है।

बाल श्रम का उन्मूलन करने के लिए सरकार ने एक राष्ट्रीय बाल श्रम परियोजना (एनसीएलपी) स्कीम तैयार की है। इस स्कीम के अंतर्गत कामकाजी बच्चों को कार्य से हटाया जाता है और विशेष स्कूलों में डाला जाता है, ताकि उन्हें शिक्षा की औपचारिक प्रणाली की मुख्यधारा में शामिल किया जा सके। इस योजना को, जो 1988 में देश के बारह जिलों में आरंभ की गई थी, दसवीं योजना के दौरान 21 राज्यों के 250 जिलों को शामिल करने के लिए बढ़ा दिया गया है।

भारत सरकार और अमरीकी श्रम विभाग ने देश के 21 जिलों में बाल श्रमिकों के पुनर्वास के लिए इंडस (इंडो-यूएस) नामक एक संयुक्त परियोजना आरंभ की है। इस परियोजना का लक्ष्य एक केंद्रित और एकीकृत रूप से परियोजनागत क्षेत्र में जोखिमकारी उद्योगों में बाल श्रम का पूरी तरह उन्मूलन करना है। इस परियोजना के अंतर्गत कार्य से हटाए गए 80,000 से अधिक बच्चे लाभान्वित होंगे।

देश के 72 नगरों में मुसीबत में फंसे बच्चों के लिए एक नि:शुल्क टेलीफोन हेल्पलाइन सेवा उपलब्ध कराई गई है जो चौबीस घंटे उपलब्ध रहेगी। इसके नि:शुल्क फोन नंबर 1098 है। इस नंबर पर कोई भी बच्चा या उसकी तरफ से कोई भी संबंधित वयस्क संपर्क कर सकता है। फोन किये जाने पर बच्चों को तुरंत आपातकालीन सहायता प्रदान की जाएगी, जिसमें मेडिकल सहायता, शरण, बच्चों को संबंधी तक पहुंचाना, बचाव और बाल विकास मंत्रालय ने बाल सेवाओं का कार्य चाइल्ड लाईन फाउंडेशन को सौंपा है यह सरकार का एक स्वैच्छिक संगठन हैं।

चाइल्ड लेबर (प्रिवेंशन एंड रेगुलेशन) एकट 1986 के अंतर्गत खतरनाक समझे जाने वाले 64 पेशों में 14 साल से कम उम्र के बच्चों को लगाने पर रोक थी। इसका दायरा अब घर और ढाबों-होटलों तक बढ़ा दिया गया है। घरेलू बाल मजदूरी को खत्म करने के लिए केंद्र सरकार की ओर से जारी नए आदेश से बाल मजदूरी खत्म करने की दिशा में नया रास्ता खुला है। ❐

सदस्यता कूपन

मैं/हम कुरुक्षेत्र का नियमित ग्राहक बनना चाहता हूं/चाहती हूं/चाहते हैं।

शुल्क : एक वर्ष के लिए 70 रुपये, दो वर्ष के लिए 135 रुपये, तीन वर्ष के लिए 190 रुपये का (जो लागू नहीं होता, उसे कृपया काट दें)

डिमांड ड्राफ्ट/भारतीय पोस्टल आर्डर क्रमांक .... दिनांक .... संलग्न है।

नाम (स्पष्ट अक्षरों में) ....

पता ....

.... पिन ....

इस कूपन को काटिए और शुल्क सहित इस पते पर भेजिए :

विज्ञापन और प्रसार प्रबंधक

प्रकाशन विभाग, पूर्वी खंड-4, तल-7, रामकृष्णपुरम,

नई दिल्ली-110 066

कृपया ध्यान रखें, आपका डिमांड ड्राफ्ट/भारतीय पोस्टल आर्डर *निदेशक, प्रकाशन विभाग* को नई दिल्ली में देय हो।

सरकार की चिंता: बाल मजदूरी

सौरभ पाण्डेय

हमारे देश की कुल आबादी का 15.42 फीसदी बच्चे हैं। उनके विकास से ही समाज का विकास हो सकता है। प्रत्येक वर्ष बाल दिवस बड़े ही विधिवत रूप से मनाया जाता है। इस दिन हम सभी मिलकर बच्चों की दशा व दिशा का मंथन करते हैं। कुछ तथ्य भी निकालते हैं, उन तथ्यों पर आधारित मैराथन बैठकों का दौर भी चलता है, नये विचार, योजनाओं का खाका बनता है और प्रतिज्ञाएं ली जाती है लेकिन तब बहुत दुःख होता है जब ये प्रतिज्ञाएं मात्र मौखिक वचन बनकर रह जाती हैं। इसके संकेत यूनेस्को की उस सूची से मिलते हैं जिसमें भारत को उन 29 देशों की सूची में रखा गया है जहां सबको शिक्षा देने का लक्ष्य अभी तक पूरा नहीं हो पाया है। यूनेस्को के मुताबिक सभी को शिक्षा देने में सबसे बड़ी पग बाधा बाल मजदूरी है। बाल मजदूरी हमारे देश की विकट समस्या है जिसका समुचित समाधान अभी तक नहीं ढूंढा जा सका है। पिछले वर्ष सितंबर में लगातार पांच दिन नई दिल्ली में बालश्रम एवं शिक्षा पर गहन विचार द्वितीय विश्व कांग्रेस के अधीन किया गया। इसका आयोजन 'ग्लोबल मार्च अंगेस्ट चाइल्ड लेबर' ने किया। जिससे यह बात सामने आयी कि बाल मजदूरी की समाप्ति हेतु अंतरराष्ट्रीय संगठनों पर दबाव बनाना जरूरी है।

बालश्रम पर रोक लगाने के लिए हमारे देश में कानूनों की कोई कमी नहीं है। इसमें बाल श्रम अधिनियम 1986 शामिल है। इसके उपबंधों के अनुसार 13 जोखिमकारी व्यवसायों व 57 जोखिमकारी प्रक्रियाओं में बच्चों का नियोजन प्रतिबंधित है। बाल मजदूरी में नियोजकों की संलिप्तता पर उन्हें दण्डित करने का प्रावधान भी है। बाल मजदूरी से बच्चों को मुक्त कराने हेतु छापों की पद्धति प्रयोग में लायी जाती है और बच्चों को मुक्त कराया जाता है। लेकिन जिम्मेदारी की सीमा यहीं पर समाप्त नहीं हो जाती, वरन असली जिम्मेदारी की शुरूआत यहीं से होती है अर्थात् मुक्त कराये गये बच्चों का पुनर्वास। भारत मे तकरीबन 7 से 8 करोड़ बच्चे मजबूरी और पेट पालने हेतु कम एवं कच्ची उम्र से मजदूरी में लग जाते हैं। एक बार मजदूरी में फंसे बच्चे इसके दुष्चक्र से बाहर नहीं निकल पाते। बच्चों के लिए कोई भी कार्य श्रम की दृष्टि से हानिकारक ही माना जायेगा।

दुनिया में लगभग 25 करोड़ बच्चे बाल मजदूरी में लगे हुए हैं। इस प्रकार के बच्चों के पास न तो शिक्षा के लिए समय है और ही साधन। दूसरी तरफ वो बच्चे हैं जो साधन संपन्न हैं किंतु पब्लिक और प्राइवेट स्कूलों की कमाऊ नीति के चलते बस्ते के अनचाहे बोझ के नीचे दबे चले जा रहे हैं और चाहकर भी उफ तक नहीं कर पाते।

ऐसी विडंबना देखने को और कहां मिलेगी कि जिनके पास साधन हैं वे बस्ते के बोझ से दबे जा रहे हैं और जो साधनहीन हैं, उन्हें स्कूल का मुंह देखना भी नसीब नहीं। इसी समस्या को दृष्टिगत रखते हुए सरकार द्वारा राष्ट्रीय बाल श्रम परियोजना की शुरूआत 21 राज्यों के 250 जिलों में शुरू की गयी है। इसमें राष्ट्रीय सोसाइटियों द्वारा विशेष स्कूल खोले जाते हैं। जहां पहले बुनियादी और फिर नियमित शिक्षा की व्यवस्था की जाती है। पिछले तीन वर्षों में अरबों रूपये व्यय किए गये जिनके संतोषजनक परिणाम भी निकले हैं। हाल ही में राष्ट्रीय शैक्षिक योजना एवं प्रशासन संस्थान द्वनीपात्र की एक रिपोर्ट बेहद चौंकाने वाली है जिसमें कहा गया है कि सर्वशिक्षा अभियान के तहत बच्चों को स्कूल में रोक पाने की नीतियां कामयाब नहीं रहीं। रिपोर्ट के मुताबिक प्राथमिक स्तर पर एडमीशन लेने वाले 42 फीसदी बच्चे अभी भी स्कूलों में रूक नहीं पाते। जबकि 10 फीसदी से अधिक बच्चे कक्षा 5 की पढ़ाई के बाद पढ़ाई ही छोड़ देते हैं। हालांकि यह प्रतिशत पिछले वर्ष 11 था।

भारत के प्रथम प्रधानमंत्री पंडित जवाहर लाल नेहरू ने एक बार कहा था कि "मैं देश के हर बच्चे की आंख में आने वाले हिंदुस्तान की तस्वीर देखता हूं।" पं. नेहरू की यह पंक्तियां आज भी वही महत्व रखती है जो तब रखती थी। लेकिन समय के बहाव ने सब कुछ तो बदला लेकिन तस्वीर से धुंधलका अभी तक समाप्त नहीं हो पाया है। प्रयासों की कसौटी पर परिणाम उचित नहीं बैठते हैं। ये नकारात्मकता नहीं अपितु नग्न यथार्थ है जिसे चाहकर भी नकारना सच्चाई से मुंह

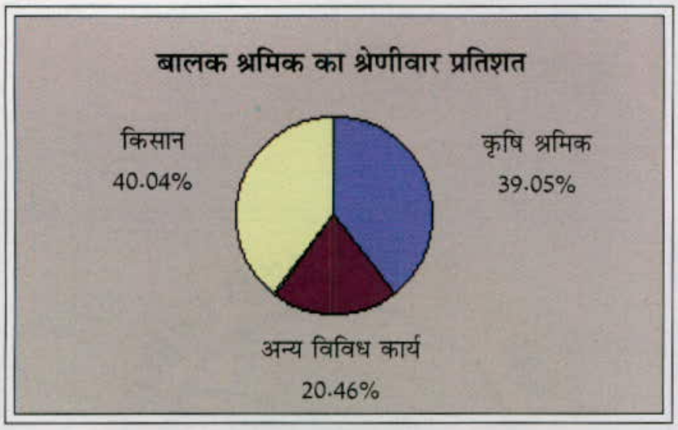

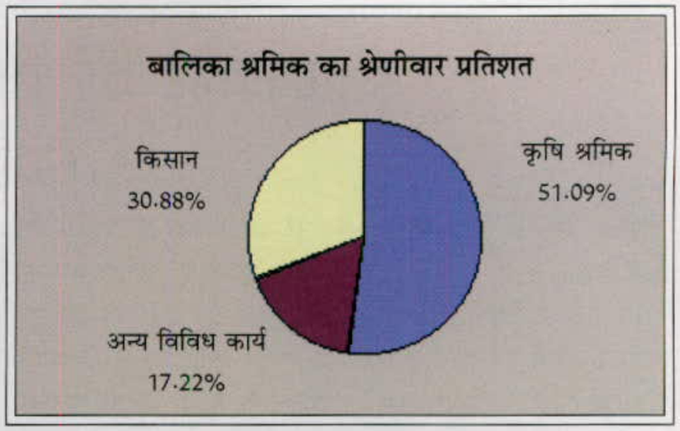

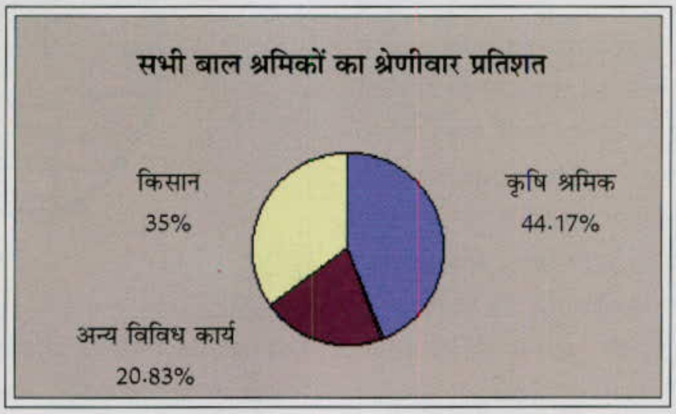

चुराना ही होगा। योजनाओं व क्रियान्वयन के बीच समन्वय न होना भी इसका एकमात्र कारण प्रतीत होता है। अर्थव्यवस्था के मामले में तीसरे पायदान पर खड़े होने के बावजूद यह दशा भारत के लिए काफी निराशाजनक है कि अभी तक यहां पर बच्चों की स्थिति सुधरने का नाम नहीं ले रही है।

बाल मजदूरी में एक महत्वपूर्ण घटक यह भी है कि "बच्चे सस्ते होते हैं" अर्थात एक वयस्क की अपेक्षा लगभग आधे दाम पर बच्चे काम करने को तैयार हो जाते हैं इसी कारण से बच्चों से काम लेने वाले ठेकेदार आदि के लिए वे आसान शिकार बनते हैं। उनकी बेबसी का फायदा ठेकेदार आसानी से उठा लेते हैं। बाल मजदूरी पर रोक के लिए सुप्रीम कोर्ट ने 10 दिसंबर 1986 को अपने निर्देश (रिट याचिका सिविल संख्या 465/86) में कहा था कि खतरनाक धंधे में काम कर रहे बच्चों का पुनर्वास किया जाये और गैर-खतरनाक काम में लगे बच्चों की दशा में सुधार किया जाय। तब से लेकर आज तक तमाम बच्चों का पुनर्वास हुआ लेकिन अभी और ठोस प्रयासों की जरूरत है।

भारत में बाल मजदूरी के कारकों में आर्थिक स्थिति, कानूनों की प्रभावशीलता, सामाजिक दशाएं, शैक्षिक वातावरण जिम्मेदार होता है। वर्ष 1979 में गुरूपद समिति की ताजा रिपोर्ट के मुताबिक गरीबी ही बाल मजदूरी, बच्चों के खराब भविष्य के लिए जिम्मेदार है। 1995 में कोपेनहेगेन ने 200 राष्ट्रों के सम्मेलन में भारत ने भी हिस्सा लिया और ऐलान किया गया कि वर्ष 2000 तक भारत को बाल श्रम से मुक्त करा लिया जायेगा। बाल मजदूरी के उन्मूलन के लिए सरकार प्रयासरत है।

बच्चों की खराब दशा को दुरूस्त करने में मीडिया की सकारात्मक भूमिका महत्वपूर्ण हो सकती है। बाल मजदूरी की मानसिकता को बदलने में मीडिया अच्छा कार्य कर सकता है। मीडिया उन लाखों करोड़ों 'छोटुओं' के आंसू पोंछ सकता है, उनकी गले में अटक चुकी आवाज को बाहर निकाल सकता है। बच्चे कल का भविष्य है जैसा आज आप उन्हें देंगे वैसा ही कल आपको देखने को मिलेगा। शायद रस्किन की ये पंक्तियां इसी बात का समर्थन करती हैं कि "बच्चों को जरा प्यार दो तो बहुत सा लौट कर आता है" इसलिए हम सभी को बच्चों के उज्ज्वल भविष्य के लिए कुछ ऐसा करना होगा कि हमारा कल अच्छा हो। लेकिन यह प्रयास नि:स्वार्थ और ईमानदारी से करना होगा। इन प्रयासों में सरकार के साथ-साथ नागरिकों, अभिभावकों और समुदायों की सहभागिता आवश्यक है। ❐

(लेखक जन संचार एवं पत्रकारिता पाठ्यक्रम से संबद्ध हैं)

कुरुक्षेत्र मंगाने का पता

विज्ञापन और प्रसार प्रबंधक
प्रकाशन विभाग
पूर्वी खंड-4, तल-7
रामकृष्णापुरम, नई दिल्ली-110066

मूल्य एक प्रति	:	सात रुपये
वार्षिक शुल्क	:	70 रुपये
द्विवार्षिक	:	135 रुपये
त्रिवार्षिक	:	190 रुपये
विदेशों में (हवाई डाक द्वारा)		
पड़ोसी देशों में	:	500 रुपये (वार्षिक)
अन्य देशों में	:	700 रुपये (वार्षिक)

भारत में बालश्रम : एक अनसुलझी समस्या

राजेश जैन

पिछले पांच दशकों से निरंतर बनाई जा रही विभिन्न योजनाओं, कल्याणकारी कार्यक्रमों, विधि निर्माण और प्रशासनिक कार्यों के बाद भी भारत में अधिकांश बच्चे दु:ख और कष्ट में रह रहे है हैं। जबकि बच्चों की संख्या आज विश्व की कुल जनसंख्या का लगभग 37 प्रतिशत है तथा उनमें से 87 प्रतिशत 0-18 आयु वर्ग में विकासशील देशों में, और उन विकासशील देशों में शहरी जनसंख्या का 27 प्रतिशत और 31 प्रतिशत ग्रामीण जनसंख्या निरपेक्ष गरीबी रेखा के भी नीचे है। यही कारण है कि विकासशील देशों के बच्चों का एक बड़ा हिस्सा शोषण और बीमारियों का शिकार है, क्योंकि निर्धन परिवारों के लाखों बच्चों को आर्थिक कारणों से बाध्य होकर बालश्रम में सम्मिलित होना पड़ता है। बच्चों की भावनात्मक, शारीरिक और लैंगिक दुर्व्यवहार की समस्या बढ़ रही है, जिसके कारण समाजशास्त्रियों एवं मनोचिकित्सकों का ध्यान इस ओर आकर्षिक हुआ है। क्या जनता और सरकार की बालश्रम जैसी समस्या को हल करने में सहयोग की आवश्यकता नहीं है ?

बच्चों की एक बड़ी संख्या शिक्षा को छोड़ने के लिए बाध्य होकर, अपनी आयु से अधिक दायित्वों का निर्वाह करती है। ये बच्चे कभी जान ही नहीं पाते हैं कि बचपन क्या होता है, जबकि भारतीय संविधान की–

- ★ धारा 24 में यह उल्लिखित है कि चौदह वर्ष से कम आयु के किसी बालक को किसी कारखाने में काम करने के लिये या किसी जोखिम वाले रोजगार में नियुक्त नहीं किया जायेगा।
- ★ धारा 39(1) के अनुसार बाल्यावस्था और किशोरावस्था को शोषण और नैतिक एवं भौतिक परित्यक्ता से बचाया जायेगा।
- ★ धारा 45 के अनुसार संविधान लागू होने से 10 वर्षो की अवधि में सब बालकों की, जब तक कि वे 14 वर्ष की आयु को प्राप्त नहीं कर लेते, राज्य नि:शुल्क और अनिवार्य शिक्षा का प्रावधान करने की प्रयत्न करेगा।

अत: बच्चों को अपने जीवन तथा कल्याण का अधिकार है। बहुत सी अन्तर्राष्ट्रीय और राष्ट्रीय स्तर की संस्थायें इस संबंध में कार्य कर रही है। संयुक्त राष्ट्र संघ और विश्व में फैले हुए अन्य संगठन बच्चों के कल्याण में लगे हुए हैं। मानवाधिकारों की सर्वभौमिक घोषणा 1984 के अनुच्छेद 25 के अनुसार प्रत्येक व्यक्ति को एक निश्चित जीवन स्तर जीने का अधिकार है, जो उसके और परिवार के लिये पर्याप्त हो। बच्चों के संबंध में संयुक्त राष्ट्र संघ के कन्वेशनों (सीआरसी) पर भारत ने भी हस्ताक्षर किये हैं। यही नहीं भारतीय संविधान का अनुच्छेद 32 आर्थिक शोषण के विरुद्ध है जिसमें कहा गया है कि वे कार्य जो स्वास्थ्य के लिये हानिकारक तथा शिक्षा में विघ्न डालता हो, काम करने के घंटों तथा रोजगार की शर्तें आदि का उचित निर्धारण होना चाहिए। परन्तु क्या कारण है कि भारत में आज भी बाल श्रम समस्या गम्भीर रुप धारण किये हुए है।

बाल श्रम की स्थिति

अधिकांश कार्यरत बच्चे ग्रामीण क्षेत्रों में केन्द्रित हैं। उनमें से लगभग 60 प्रतिशत दस वर्ष की आयु से कम के हैं। व्यापार एवं व्यवसाय में 23 प्रतिशत, जबकि 36 प्रतिशत घरेलू कार्यों में लगे हुए हैं। शहरी क्षेत्रों में उन बच्चों की संख्या अधिक है जो केन्टीन, रेस्टोरेन्ट और माल की फेरी लगाने में लगे हुए हैं, परंतु इनके नाम कहीं दर्ज नहीं हैं। ज्यादा बदकिस्मतों में वे हैं, जो कि जोखिम वाले उद्यमों में कार्यरत हैं।

तमिलनाडु के कुछ जिलों में पटाखों और माचिस की इकाईयों में 45,000 बच्चे कार्यरत हैं। उत्तरप्रदेश के फिरोजाबाद के कांच के कारखानों में लगभग 46.000 बच्चे और गलीचे के कारखानों में एक लाख बच्चे काम करते हैं। इसी जयपुर, अलीगढ़, मिर्जापुर एवं असम में बच्चों की स्थिति बदतर बनी हुई है। मिजोरम में पत्थर खदानों में काम करने वाले 7000 से अधिक बच्चे पाये गए हैं। वाराणसी में 5000 बच्चे, रेशम बुनने के उद्यम में कार्यरत हैं। दिल्ली में 60,000 से अधिक बच्चे दो या तीन रुपये प्रतिदिन की मजदूरी पर ढाबों, चाय के स्टालों में काम करते हैं। यही नहीं बालश्रम विकट रूप में बंधुआ श्रम से जुड़ा हुआ है। असम के चाय बागानों में 12 वर्ष से कम उम्र के बच्चे काम में लगे हुए हैं।

तमिलनाडु के कुछ जिलों में पटाखों और माचिस की इकाईयों में 45,000 बच्चे कार्यरत हैं। उत्तरप्रदेश के फिरोजाबाद के कांच के कारखानों में लगभग 46. 000 बच्चे और गलीचे के कारखानों में एक लाख बच्चे काम करते हैं। इसी जयपुर, अलीगढ़, मिर्जापुर एवं असम में बच्चों की स्थिति बदतर बनी हुई है। मिजोरम में पत्थर खदानों में काम करने वाले 7000 से अधिक बच्चे पाये गए हैं। वाराणसी में 5000 बच्चे, रेशम बुनने के उद्यम में कार्यरत हैं। दिल्ली में 60,000 से अधिक बच्चे दो या तीन रुपये प्रतिदिन की मजदूरी पर ढाबों, चाय के स्टालों में काम करते हैं। यही नहीं बालश्रम विकट रूप में बंधुआ श्रम से जुड़ा हुआ है। असम के चाय बागानों में 12 वर्ष से कम उम्र के बच्चे काम में लगे हुए हैं।

उत्तरप्रदेश के मिर्जापुर जिले में गलीचे के उद्योग में काम करने वाले एक लाख बच्चों का यूनीसेफ द्वारा किये गये अध्ययन में पाया गया कि 71 प्रतिशत भागने की कोशिश मे पीटे जाते हैं इनमें से अधिकांश बच्चे 5-12

आयु समूह के बच्चे हैं। यहीं हजारों बच्चों को तीन-तीन वर्षों तक वेतन नहीं दिया गया था। अधिकांश बच्चे हैं। यहीं हजारों बच्चों को तीन-तीन वर्षों तक वेतन नहीं दिया गया था। अधिकांश बच्चे टी.वी., खून की कमी और आंखों की बीमारी से पीड़ित पाये गये हैं। अत: यह स्पष्ट है कि बच्चों का किसी ने किसी तरीके से शोषण किया जा रहा है और बाल श्रम समस्या विकट रूप धारण कर चुकी है। इसके पीछे क्या कारण हैं? जानना आवश्यक है।

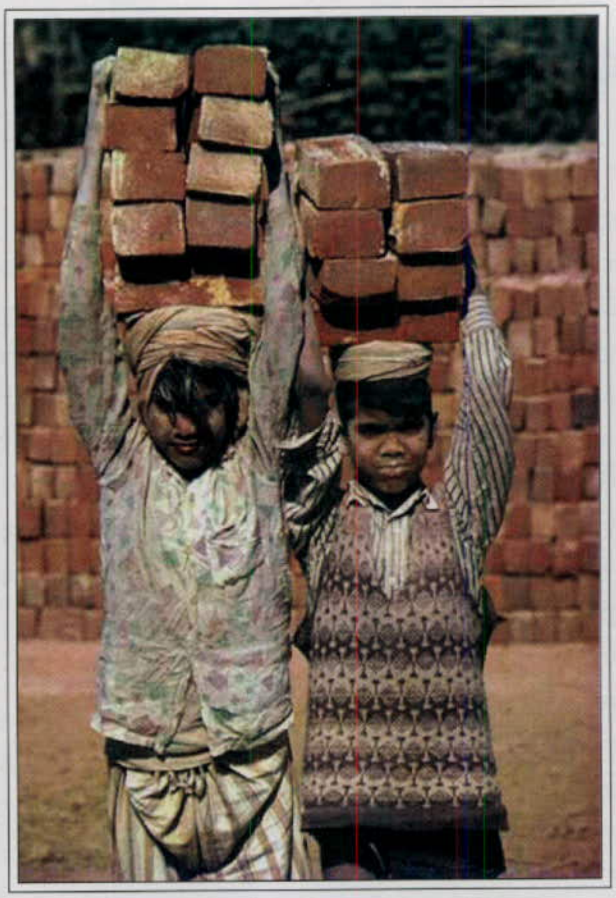

भारत जैसे विशाल देश में जहां जनसंख्या का 26 प्रतिशत से अधिक भाग घोर दरिद्रता की स्थितियों में रह रहा है, वहां बालश्रम एक बहुत पेचीदा विषय है। बच्चे दरिद्रता के कारण नौकरी करते हैं, और उनकी कमाई के बिना उनके परिवारों का जीवन स्तर और भी अधिक गिर सकता है। ऐसी परिस्थिति में काम का विकल्प, बेरोजगारी, गरीबी या इससे भी अधिक गिर सकता है। ऐसी परिस्थिति में काम का विकल्प, बेरोजगारी, गरीबी या इससे भी अधिक खराब विकल्प अपराध है। बालश्रम के कारणों के संबंध में विभिन्न वर्गों का दृष्टिकोण अलग है। जैसे मिल मालिको का कहना है कि नौकरी उन्हें भूखों मरने से रोकती है। अधिकारीगण का कहना है कि सरकार उन्हें पर्याप्त वैकल्पिक नौकरियां उपलब्ध नहीं कर पा रही है। समाज वैज्ञानिक कहते हैं कि बालश्रम मुख्या कारण निर्धनता है। बच्चे या तो अपने मात-पिता की आय को बढ़ाते हैं याह परिवार में अकेले वेतनभोगी होते हैं। बालश्रम से उद्यमों को लाभ होता है, जैसे उत्तरप्रदेश का गलीचे का उद्यम जिसमें एक लाख बच्चे काम करते हैं उनसे 150 करोड़ रुपये की विदेशी मुद्रा प्रतिवर्ष कमाता है।

बालश्रम का प्रभाव

कारखानों में काम करने से बच्चे तपेदिक जेसी बीमारी का शिकार हो जाते हैं, क्योंकि कारखानों में ईट की दीवारों पर जो कालिख जमी रहती है, जिसकी हवा प्रदूषित रहती है वे भट्टियां 1400 डिग्री सेल्सियस के ताप पर जलती हैं। मिल मालिक आर्सेनिक और पोटाशियम जैसे खतरनाक रसायनों को काम में लेते हैं, जिससे बच्चों के फेफड़ों पर जोर पड़ता है। दिल्ली, तमिलनाडु, आंध्रप्रदेश और महाराष्ट्र के कारखानों में यह पता लगता है कि बहुत बड़ी संख्या में बालश्रमिकों की दशा अत्यंत दयनीय है वे जीवित कंकाल नजर आते हैं शरीर में खाज-खुजली होती है। निर्धन परिवार के होने के कारण अनेक बच्चे स्कूल ही नहीं गये हैं। अत: बालश्रम के कारण बच्चों को फेफड़ों की बीमारियां, तपेदिक, आंख की बीमारियां, अस्थमा, ब्रोंकाईटिस और कमरदर्द रहता है। कुछ आगकी दुर्घटनाओं में जख्मी हो जाते हैं, जिन्हें उनके मालिक निर्दयतापूर्वक निकाल देते हैं। प्रश्न उठता है कि बालश्रम की इस समस्या का समाधान कैसे किया जाये।

बालश्रम समस्या को हल करने के उपाय

वैसे तो भारत में बालश्रम तथा बच्चों के शोषण पर अनके कानूनी प्रतिबंध लगे हुए हैं। संविधान के अनुसार 14 वर्ष से कम आयु वाले बच्चे को किसी भी करखाने में नहीं रखा जा सकता। कारखाना अधिनियम 1948, बाल अधिनियम 1960, 1978, बाल श्रमिक अधिनियम 1986 आदि द्वारा बालश्रम पर प्रतिबंध लगाया गया है परन्तु व्यवहार में इन कानूनों से बचने के लिए अनेक साधन ढूंढ़ लिये जाते हैं। इसलिये कतिपय सुझाव प्रस्तुत किये जा रहे हैं-

- ★ सरकार द्वारा काम करने की स्थितियों में सुधार किया जाये अर्थात् काम के घन्टे कम चाहिए।
- ★ न्यूनतम मजदूरी, स्वास्थ्य एवं शिक्षा की व्यवस्था सरकार द्वारा की जाये।
- ★ विकास कार्यक्रम योजना का लाभ बालश्रम के परिवार को निर्धारित होना चाहिए।
- ★ असंगठित क्षेत्रों में बच्चों का संरक्षण किया जाये।
- ★ बच्चों की रोटी, कपड़ा और मकाना की अनिवार्य सरकार या समाजसेवी संगठनों द्वारा पूर्ण की जाये।
- ★ बालश्रम कानून का उल्लंघन करने वालों को कठोर दण्ड की व्यवस्था की जाये।
- ★ बालश्रम के विरोध में जनजागरूकता पैदा की जाये चाहे उसके लिये समाचारपत्र, दूरदर्शन आदि संचार साधनों का प्रयोग किया जाये। ❒

(लेखिका शासकीय स्वशासी कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सागर में राजनीति विज्ञान विभाग से संबद्ध हैं)

बाल मजदूरी : बाल मजबूरी : समस्या एवं समाधान

आरती

प्रायः हर भाषा, संस्कृति और देश में ऐसा कहा जाता है कि बच्चे राष्ट्र के भावी कर्णधार होते हैं, आज के बच्चों में हम आने वाले कल को देख सकते हैं। परंतु जिस राष्ट्र के बच्चों का ही वर्तमान अंधकार में डूबा हो और उनका स्वयं का भविष्य उजाले की तलाश में भटक रहा हो, हम उस देश के अच्छे भविष्य की कल्पना कैसे कर सकते हैं?

आज विश्व के अमीर या गरीब, विकसित या विकासशील सभी देशों में बच्चों के नन्हे हाथों का यह प्रयोग धनोपार्जन के लिए किया जाता है। संयुक्त राष्ट्र अंतरराष्ट्रीय बाल संकट कोष द्वारा 11 जून 2005 को जारी किए गई रिपोर्ट के अनुसार विश्व भर में 24.6 करोड़ बच्चे बाल श्रमिक के रूप में कार्य करते हैं, इनमें से 15.2 करोड़ केवल एशिया में हैं।

भारत में वर्ष 2001 की जनगणना के अनुसार 25.2 करोड़ बच्चों में से 1.25 करोड़ बच्चे बाल-श्रमिक के रूप में कार्य कर रहे हैं। परंतु विश्व बैंक के मानव विकास रिपोर्ट के अनुसार 25 करोड़ बच्चे बाल-श्रमिक के रूप में भारत में काम कर रहे हैं।

1986 के बाल-श्रम अधिनियम की अनुसूची के अंतर्गत हमारे देश में 13 व्यवसायों और 57 खतरनाक प्रक्रियाओं में बच्चों से काम कराने पर प्रतिबंध है, परंतु इस अधिनियम के तहत घरेलू नौकर के काम को खतरनाक नहीं मानते हुए इसे प्रतिबंधित नहीं किया गया है। परिणामस्वरूप बाल-श्रमिकों में से 10-20 प्रतिशत घरेलू नौकर हैं। इनमें से 60 प्रतिशत 10 वर्ष से कम आयु के हैं। तमिलनाडु के रामानाथपुरम जिले में शिवकाशी नामक जगह में पटाखा और माचिस बनाने में 45 हजार बच्चे कार्यरत हैं। उत्तर प्रदेश के फिरोजाबाद के शीशे के कारखाने में 45 हजार बच्चे और कालीन उद्योग में एक लाख बच्चे काम करते हैं।

भारत जैसे विकासशील देशों में बाल-श्रम को बढ़ावा देने वाले अनेक सामाजिक-आर्थिक कारक हैं, जिनकी वजह से सरकार के प्रयास के बावजूद भी भारत में यह अभिशाप के रूप में विद्यमान है। इसके प्रमुख कारणों में है-

गरीबी- इस समस्या का प्रमुख कारण हमारे देश की गरीबी है। ईश्वर सभी बच्चों को, चाहे वो अमीर हो या गरीब स्नेह और प्यार से बनाते हैं, परंतु यह समानता यहीं तक सीमित रह जाती है। जन्म के बाद वो दिन कभी नहीं आता, जब एक गरीब बच्चा खुद की तुलना आर्थिक रूप से संपन्न घरों के बच्चे से कर सके। शायद उनके जीवन में वो दिन ही नहीं आता, जब वो खुद की तुलना एक बच्चे से करे या खुद को बच्चा समझ सके। जन्म लेते ही इनका बचपन छिन जाता है और ये वयस्क की तरह रोजी-रोटी कमाने के लिए काम करने लगते हैं।

अशिक्षा- हमारे देश में एक प्रमुख समस्या अशिक्षा की है जो विशेष रूप से अनुसूचित जाति एवं जनजाति जैसे सामाजिक-आर्थिक दृष्टि से पिछड़े वर्गों में व्याप्त है। ये लोग बच्चों को शिक्षा देने के बजाए उन्हें व्यवसायिक कामों को सिखाना बेहतर समझते हैं।

जनसंख्या वृद्धि- हमारे देश की जनसंख्या इतनी ज्यादा है और दिन-प्रतिदिन तेजी से बढ़ती जा रही है, जिसकी वजह से सभी को रोजगार मिलना

असंभव लगता है। हमारी जनसंख्या का एक बड़ा भाग मजदूरी करके अपना गुजारा करते हैं। ऐसे में एक आदमी की मजदूरी से 10-12 लोगों वाले बड़े परिवार का गुजारा करना मुश्किल है। इस कारण ये अपने बच्चों को भी काम पर लगाते हैं। सस्ता बाल मजदूरी- इसका एक प्रमुख कारण लोगों की सोच में गिरावट आना है। आज मनुष्य मानवता के सिद्धांत को भूल कर विलासितापूर्ण जीवन की तरफ उन्मूख होते जा रहे हैं। यह जानते हुए कि बाल श्रम कानून एवं मानवता दोनों ही दृष्टि से अपराध है, बच्चों से काम कराते हैं क्योंकि उनसे कम पैसे में अधिक काम कराया जा सकता है।

इस प्रकार स्पष्ट है कि जिस गति से भारत के विभिन्न क्षेत्रों में आजादी के पूर्व से लेकर आज तक, लाखों बच्चे तमाम तरह के शोषण के शिकार हो रहे हैं उनके विरूद्ध सभी तबकों द्वारा एक महान क्रांति अथवा कम से कम जन-आंदोलन की शुरूआत काफी पहले हो जानी चाहिए थी, किंतु क्रांति और जन-आंदोलन की बात कौन करे, किसी क्षेत्र या तबके में बच्चों के प्रति परानुभूति एवं गहन संवेदना भी अभिव्यक्त नहीं की जाती।

हालांकि सरकार द्वारा इस विकराल समस्या के समाधान के लिए समय-समय पर अनेक अधिनियम बनाये गए तथा योजनाएं लाई गई हैं। संविधान में भी बाल-श्रम के खिलाफ अनेक प्रावधान हैं। संविधान के अनुच्छेद 15(3) द्वारा सरकार को बालकों के लिए अलग से कानून बनाने का अधिकार है। अनुच्छेद 23 के अनुसार बालकों के क्रय-विक्रय एवं उनके द्वारा गैर-कानूनी तथा अनैतिक कार्य कराने पर रोक लगता है। अनुच्छेद 24 के अनुसार 14 वर्ष से कम आयु के बच्चों से किसी फैक्ट्री, खनन कार्य या जोखिम वाले काम को नहीं कराया जा सकता है। अनुच्छेद 39 (नीति-निर्देशक तत्व) बच्चों के स्वास्थ्य एवं उनके शारीरिक विकास हेतु सुविधाएं उपलब्ध कराने हेतु सरकार को निर्देश देता है। अनुच्छेद 39(ई) में सरकार को बच्चों के बचपन की रक्षा करने और यह सुनिश्चित करने के निर्देश दिये गये हैं कि उन्हें ऐसे कार्यों में न लगायें जायें, जो उनकी उम्र और स्वास्थ्य के लिए घातक हो।

समय-समय पर अनेक बालश्रम निरोधक अधिनियम भी बनाये गये हैं-

फैक्ट्री एक्ट 1948 : किसी भी फैक्ट्री में 14 वर्ष से कम आयु के बच्चों के रोजगार के बारे में निषेधात्मक व्यवस्थाएं निर्देशित करता है।

खान एक्ट 1952 : खानों में काम करने के लिए न्यूनतम आयु 15 वर्ष निर्धारित करता है।

बागान श्रम एक्ट 1951 : 12 वर्ष से कम आयु के बच्चों को चाय, कॉफी और रबर के बागानों में रोजगार निषेधित करता है।

अनुबंधित श्रमिक अधिनियम 1975 : अनुबंधित श्रमिकों, जिसमें बच्चे भी शामिल है, की कार्यदशाएं, मजदूरी भुगतान तथा कल्याण सुविधाओं को निर्धारित करता है।

बाल-श्रमिक अधिनियम 1986 : बच्चों को कुछ व्यवसायों में प्रवेश पर रोक लगाता है और कुछ अन्य व्यवसाय-प्रकारों की दशाओं का नियमितीकरण करता है।

1987 को राष्ट्रीय बालश्रम नीति के अंतर्गत बाल श्रमिकों को शोषण से बचाने, उनकी शिक्षा, चिकित्सा, मनोरंजन तथा सामान्य विकास पर जोर देने की व्यवस्था की गई है।

महिलाओं और बच्चों के विकास के लिए मानव-संसाधन विकास मंत्रालय के अंतर्गत 1985 में महिला एवं बाल-विकास विभाग स्थापित किया गया है। बाल-विकास हेतु सरकार ने समय-समय पर कई योजनाएं प्रारंभ की हैं-

समन्वित बाल विकास योजना (1975), बेसहारा बच्चों हेतु समन्वित कार्यक्रम (1997), राष्ट्रीय शिशु सदन योजना (1994), मध्यान्ह योजना (1995), बालिका-समृद्धि योजना (1997), किशोरी-शक्ति योजना (2000), स्वधारा योजना (2001)

सरकार द्वारा बालश्रम को समाप्त करने तथा बच्चों के संपूर्ण विकास के लिए अनेक प्रयास किए गए एवं अभी भी किए जा रहे हैं। परंतु यदि हम इस समस्या को स्थायी समाधान चाहते हैं, तो देश के प्रत्येक नागरिक को इस दिशा में सकारात्मक कदम उठाना पड़ेगा, क्योंकि भारत जैसे देश में बाल श्रम की समस्या अत्यंत जटिल एवं बहुआयामी है, जिसका निदान भी बहुआयामी ही हो सकता है। इसलिए समाज तथा राष्ट्र के नागरिक होने के नाते इस समस्या का समाधान करना हमारा कर्तव्य भी बनता है। सचमुच इस कुप्रथा का उन्मूलन सिर्फ सरकारी कार्यक्रमों से नहीं हो सकता। इसके लिए समाज के सभी वर्गों तथा स्वयंसेवी संस्थाओं, बुद्धिजीवियों, पत्रकारों, श्रमसंघों, सामाजिक कार्यकर्ताओं, शिक्षकों, सरकारी कर्मचारियों आदि को एकजुट होकर प्रयास करना होगा।

आज आर्थिक रूप से संपन्न परिवारों के सदस्य क्लब, पार्टी और अपने अन्य शौक को पूरा करने में लाखों रूपये खर्च करते हैं। परंतु जब किसी सामाजिक समस्या के समाधान की बात आती है तो इसे सरकार की जिम्मेदारी का रूप देकर मुंह मोड़ लेते हैं। यह सच है कि कुछ परिवार और गैर सरकारी संस्था बाल-विकास में लगे हैं, परंतु इस समस्या को जड़ से खत्म करने के लिए हमें और व्यापक कदम उठाने होंगे। यदि आर्थिक रूप से संपन्न प्रत्येक परिवार एक अनाथ या गरीब बच्चे की पढ़ाई एवं विकास की जिम्मेदारी ले तो हमारा देश इस समस्या को आसानी से हल कर सकता है तथा विश्व में मानवता एवं एकता की मिसाल कायम कर सकता है। ❐

(लेखिका काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी में शोधार्थी हैं)

असंगठित क्षेत्र के श्रमिकों का कल्याण

अजय कुमार सिन्हा

असंगठित क्षेत्र के श्रमिकों का कल्याण केन्द्र और राज्यों में एक के बाद एक सभी सरकारों के लिए एक बड़ी चिंता का विषय रहा है। देश की श्रमिक संख्या में लगभग 93 प्रतिशत असंगठित क्षेत्र में हैं, जो न केवल बिखरे हुए हैं, बल्कि एक स्थान से दूसरे स्थान को जाते रहते हैं इनमें ज्यादातर अनपढ़ हैं और मकान, भोजन और कपड़े जैसे बुनियादी आवश्यकताएं भी इन्हें उपलब्ध नहीं हैं। इतना ही नहीं वे इस तरह के काम में कई पीढ़ियों से लगे हुए हैं। ऐसे लोगों में अपना काम धंधा करने वाले भी हैं, जैसे-गलियों के फेरी लगाने वाले, छोटे दुकानदार, कारीगर, बुनकर, छोटे और बहुत छोटे किसान मछुआरे और मेहनत मजदूरी करने वाले निर्माण मजदूर, खेतिहर मजदूर घरेलू नौकर और रिक्शा चालक आदि। क्योंकि ये असंगठित हैं और बिखरे हुए हैं, इसलिए उनकी तरफ लोगों का ध्यान भी कम ही जाता है।

लेकिन इस बात से कोई इंकार नहीं कर सकता कि राष्ट्र के निर्माण और उन्नति में तथा समाज की खुशहाली में उनका योदान है। ये असंगठित क्षेत्र के मजदूर ही हैं, जो परियोजना के स्थलों पर सबसे पहले पहुंचते हैं, चाहे वे सिंचाई या बिजली परियोजनाएं हों या आवास परिसर हों। ये वही लोग हैं जो उपभोक्ताओं केदरवाजों तक सामान पहुंचाते हैं। ऐसा अनुमान है कि देश के सकल घरेलू उत्पादों के लगभग 60 प्रतिशत में असंगठित क्षेत्र का हाथ है। लेकिन, इसके बदले में सामाजिक सुरक्षा के नाम पर उन्हें कुछ नहीं मिलता या बहुत कम मिलता है, जिसके कारण बीमारी में, बुढ़ापे में बेरोजगारी के समय ताकि आकस्मिक मौत होने की स्थिति में उनकी हालत शोचनीय हो जाती है।

न्यूनतम सामाजिक सुरक्षा

असंगठित क्षेत्र में श्रमिकों के लिए उपलब्ध सामाजिक सुरक्षा प्रणाली की समीक्षा के लिए और उसके दायरे को बढ़ाने के लिए सिफारिशें करने के वास्ते संयुक्त प्रगतिशील गठबंधन सरकार द्वारा केन्द्र में राष्ट्रीय असंगठित क्षेत्र उद्यम आयोग का गठन प्रसिद्ध अर्थशास्त्री डॉ. अर्जुन सेनगुप्ता की अध्यक्षता में किया गया। आयोग ने मई 2006 में अपनी रिपोर्ट सरकार को सौंपी। आयोग ने राष्ट्रीय न्यूनतम सामाजिक सुरक्षा उपायों की सिफारिश की हैं, जो संरक्षात्मक किस्म के हैं।

इन प्रस्तावों की मुख्य बातें-बीमारी के समय चिकित्सा लाभ, बीमारी भत्ता और प्रसूति लाभ, प्राकृतिक या दुर्घटना में मृत्यु होने पर जीवन बीमा राशि और गरीबी की रेखा से ऊपर वालों के लिए भविष्य निधि कोष-सह-बेरोजगारी राशि तथा गरीबी की रेखा से नीचे के 60 वर्ष और इससे अधिक उम्र के श्रमिकों के लिए 200 रुपये मासिक पेंशन।

असंगठित क्षेत्र के वे सभी श्रमिक, जिनकी मासिक आय 6500 रुपये से कम है, इस योजना का लाभ सकते हैं। योजना में शामिल होने के लिए श्रमिक को केवल अपनी मासिक आय बतानी होती है और इसकी जांच की भी कोई जरूरत नहीं होती। माना जाता है कि उसे यह घोषणा सबसे निचले स्तर पर श्रमिक सुविधा केन्द्रों में करनी होती है, इसलिए इस योजना के दुरूपयोग की कोई संभावना नहीं है।

यह योजना ऐसी है, जिसमें सभी को अंशदान करना होता है। श्रमिक, मालिक और सरकार प्रतिदिन एक रुपया (यानि 3 रुपये प्रतिदिन) देंगे। क्योंकि 17 प्रतिशत अनौपचारिक श्रमिक (गैर-कृषि क्षेत्र में) ऐसे हैं, जिनके काम देने वाले मालिक जाने-माने हैं, उनका अंशदान सरकार द्वारा दिया जा सकता है। गरीबी की रेखा से नीचे के श्रमिकों को भी अंशदान से छूट दी जाएगी और इसका भुगतान केन्द्र सरकार द्वारा किया जाएगा। बाकी का सरकारी अंशदान केन्द्र और राज्य सरकारों द्वारा 75:25 के अनुपात में दिया जाएगा। लगता है कि बहुत ही कम मामलों में नियोक्ताओं को अंशदान देना होगा और लगभग पूरा खर्च सरकार द्वारा ही उठाया जाएगा।

अंशदान से हर साल प्रत्येक श्रमिक के लिए 1095 रुपये की राशि इकट्ठी हो जाएगी। सिफारिशों के अनुसार उस राशि से श्रमिकों को तीन प्रकार की सामाजिक सुरक्षा मिलेगी। (क) श्रमिक और उसके परिवार को एक वर्ष में 15 हजार रुपये तक का चिकित्सा लाभ, श्रमिक या उसके जीवन साथी के लिए 1000 रुपये का प्रसूति लाभ और 3 दिन से अधिक दिनों तक अस्पताल में रहने पर 15 दिन का बीमारी भत्ता (ख) आयोग ने स्थायी विकलांगता के लिए 15,000 रुपये की बीमा राशि की और दुर्घटना होने पर 1500 रुपये की राशि की सिफारिश की है। (ग) आयोग ने भविष्य निधि के लिए भी सिफारिश की है जिसपर निश्चित रूप से 10 प्रतिशत का ब्याज मिलेगा। श्रमिक चाहें तो समय अवधि पूरी होने पर इसे ले सकते हैं, या इसे वार्षिकी (एन्विटी) में बदल सकते हैं। गरीबी रेखा से नीचे के श्रमिकों के लिए वृद्धावस्था पेंशन योजना का विस्तार करके 200 रुपये मासिक पेंशन की व्यवस्था की गई है।

संघीय ढांचा

योजना तैयार करने और उसे लागू करने के लिए एक संघीय ढांचे की सिफारिश की गई है जिसके अंतर्गत केन्द्र में एक राष्ट्रीय सामाजिक सुरक्षा बोर्ड होगा और राज्य के सामाजिक सुरक्षा बोर्ड, राज्य और जिला स्तरों पर वैसा ही काम करेंगे। श्रमिक सुविधा केन्द्रों के रूप में गैर-सरकारी संगठन, मजदूर संघ आदि इस योजना में सहायता करेंगे, जिसमें श्रमिकों का पंजीकरण भी शामिल होगा। लेकिन श्रमिकों का वास्तविक पंजीकरण करना और उन्हें पहचान पत्र जारी करना, जिला समितियों की जिम्मेदारी होगी।

सामाजिक सुरक्षा बोर्ड, भारतीय जीवन बीमा निगम, सामान्य बीमा कंपनियों, म्यूचअल फंड और डाकघरों के साथ समझौते करेंगे, जिसके देशभर में पेंशन और अन्य लाभ देने के लिए लगभग 156000 केन्द्र हैं। पूरी योजना विभिन्न चरणों 5 वर्ष में पूरी की जाएगी। केन्द्र और राज्य सरकारों को पांचवे वर्ष में लगभग 25,01 करोड़ रुपये का आर्थिक बोझ उठाना होगा। क्योंकि उस समय तक सभी लाभर्थियों को इस योजना में शामिल किया जा चुका है। इस योजना को लागू करने के लिए केन्द्र सरकार का संसद के इस मानसून सत्र में विधेयक लाने की योजना है।

इसमें कोई संदेह नहीं कि असंगठित क्षेत्र के श्रमिकों की तकलीफों को दूर करने में सामाजिक सुरक्षा योजना भूमिका निभाएगी। लेकिन कोष के लिए राशि का जमा होना और श्रमिकों को लाभ पहुंचाने की कारगर व्यवस्था करना, ऐसे दो प्रमुख पहलू हैं, जिसके लिए बहुत बड़ी राजनीतिक इच्छा शक्ति और नये-नये उपायों की आवश्यकता है। जब सभी मजदूर योजना दायरे में आ जाऐंगे, तो सरकार को हर वर्ष 25401 करोड़ रुपये वार्षिक की आवश्यकता होगी। इस प्रकार का सुझाव दिया गया है सरकार यह राशि करों पर उपकर लगाकर या सामाजिक सुरक्षा कर लागू करके या व्यय की राशि का फिर से निर्धारण करके यह राशि जुटा कर सकती है। लेकिन यह आसान नहीं है। केन्द्र सरकार पहले ही आयकर पर 2 प्रतिशत शिक्षा उपकर लगा चुकी है, विभिन्न सेवाओं पर सेवाकर लगाया गया है। सड़कों के विकास के लिए सरकार डीजल और पेट्रोल की बिक्री पर एक रुपया प्रति लीटर ले रही है देश के 200 जिलों में सरकार ने महत्वाकांक्षी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गांरटी योजना शुरू की है, जिसमें विभिन्न चरणों में देश के सभी ग्रामीण क्षेत्रों को शामिल कर लिया जाएगा। कई राज्यों की वित्तीय स्थिति को देखते हुए किसी नई योजना के लिए धन निकालना उनके लिए आसान नहीं होगा।

बड़ी चुनौती

योजना का लाभ श्रमिकों तक पहुंचाना एक बहुत बड़ी चुनौती है, क्योंकि वे बिखरे हुए हैं और सरकारी एजेंसियों के कामकाज की भी उन्हें जानकारी नहीं है। राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना इसका ज्वलंत उदाहरण है। कहा जाता है कि गरीबी की रेखा से नीचे के लोगों के लिए योजना के अंतर्गत जो अनाज दिया जाता है, उसे असामाजिक तत्व मंडियों में पहुंचा देते हैं।

इन सब रुकावटों के बावजूद इस योजना को लागू करने के लाभ केवल इन मजदूरों तक ही सीमित नहीं रहेंगे, बल्कि इससे पूरी अर्थव्यवस्था और समाज को भी लाभ पहुंचेगा इससे उत्पादकता बढ़ेगी और श्रमिकों का रहन-सहन बेहतर होगा। ❐

(लेखक स्वतंत्र पत्रकार हैं)

बुनियादी ढांचा क्षेत्र में विशाल पूंजी निवेश की ज़रूरत : प्रधानमंत्री

नई दिल्ली के विज्ञान भवन में 7 अक्टूबर 2006 को 'बुनियादी ढांचे के निर्माण में चुनौती और अवसर' विषय पर एक सम्मेलन आयोजित किया गया। सम्मेलन के उद्‌घाटन के मौके पर प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह ने देश में बुनियादी ढांचा क्षेत्र की वर्तमान स्थिति पर चिंता जताई। इस अवसर पर प्रधानमंत्री के अतिरिक्त वित्तमंत्री पी. चिदंबरम, योजना आयोग के उपाध्यक्ष मोंटेक सिंह अहलूवालिया और रेलमंत्री लालू प्रसाद यादव भी उपस्थित थे। सम्मेलन के अवसर पर रेखांकित किया गया कि विकास की गति को कायम रखने के लिए बुनियादी ढांचे का मजबूत होना अनिवार्य है।

प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह ने बुनियादी ढांचे के विकास के लिए वर्ष 2012 तक साढ़े चौदह लाख करोड़ रुपये के विशाल पूंजी निवेश की ज़रूरत पर बल दिया। उन्होंने वायदा किया कि इसके लिए सरकार स्वतंत्र और पारदर्शी नीति और प्रभावशाली नियामक व्यवस्था का निर्माण करेगी जिससे निजी क्षेत्र की भागीदारी सुनिश्चित हो सके। प्रधानमंत्री ने सार्वजनिक के साथ-साथ निजी क्षेत्र की भागीदारी को बेहद महत्वपूर्ण और आवश्यक बताया। बिजली क्षेत्र को अर्थव्यवस्था का सबसे महत्वपूर्ण अंग बताते हुए उन्होंने कहा कि राज्यों को इस क्षेत्र को वित्तीय रूप से व्यावहारिक बनाने के लिए तुरंत उपाय करने चाहिए। बिजली क्षेत्र में पारेषण और वितरण से कुल उत्पादन का 40 प्रतिशत व्यर्थ चला जाता है जो कि इस क्षेत्र की सबसे बड़ी समस्या है।

डा. मनमोहन सिंह ने कहा कि पिछले तीन वर्षों से भारत ने आठ प्रतिशत की विकास दर हासिल की है। इसे आगे भी बनाए रखने के लिए भारत को अपनी नीतियों में सुधार करने की आवश्यकता है। विकास दर को नौ से दस प्रतिशत तक ले जाने के लिए और अधिक प्रयास करने होंगे। विशेष रूप से कृषि और विनिर्माण क्षेत्रों को बढ़ावा देने की आवश्यकता है। प्रधानमंत्री ने कहा कि बुनियादी ढांचे के विकास के लिए सरकारी निवेश की अपनी सीमाएं होती हैं। जब तक निजी क्षेत्र भागीदारी नहीं करेगा, तब तक बुनियादी ढांचा क्षेत्र चिंता का विषय बना रहेगा। उन्होंने विश्वास दिलाया कि निजी क्षेत्र की भागीदारी को आकर्षक बनाने के लिए एक समग्र नीति बनाई जाएगी।

योजना आयोग की ओर से आयोजित इस सम्मेलन में वित्तमंत्री पी. चिदंबरम ने कहा कि भारत के बुनियादी ढांचे के विकास के लिए अगले पांच वर्षों में 363 अरब डालर के निवेश की आवश्यकता है। ऐसा करके ही आठ प्रतिशत की विकास दर को सुनिश्चित किया जा सकता है। उन्होंने कहा कि लंबे समय से बुनियादी ढांचे का विकास सार्वजनिक क्षेत्र का दायित्व रहा है। इस कारण इस क्षेत्र में पर्याप्त प्रगति नहीं हो पायी। अब इसमें निजी कंपनियों की हिस्सेदारी की जरूरत है। वित्तमंत्री ने कहा कि बुनियादी ढांचा क्षेत्र में निवेश अर्थव्यवस्था की विकास दर के अनुरूप होना चाहिए। उन्होंने बुनियादी ढांचा क्षेत्र के विकास में सरकार के साथ भागीदारी के लिए निजी क्षेत्र को आमंत्रण भी दिया ताकि आठ प्रतिशत की विकास दर को सुनिश्चित किया जा सके।

बाल विकास की चुनौतियां एवं समाधान

रमेश चन्द्र तिवारी

बच्चे राष्ट्र की महत्वपूर्ण सम्पत्ति हैं। ये भावी पीढ़ी या समाज के निर्माता होते हैं। इनके शारीरिक, बौद्धिक, मानसिक एवं संवेगात्मक गठन का भावी पीढ़ी या समाज के स्वरूप निर्धारण में काफी योगदान होता है। बच्चों पर ही राष्ट्र या विश्व की सभ्यता एवं संस्कृति का भविष्य आधारित है। बौद्धिक रूप से अल्पविकसित होने के कारण बच्चों को अपनी भौतिक, बौद्धिक तथा मानसिक आवश्यकताओं तथा साधनों का समुचित ज्ञान नहीं होता। बच्चे अपनी आवश्यकताओं या साधनों से अनभिज्ञ ही नहीं वरन् उन आवश्यकताओं की पूर्ति के साधनों को एकत्र करने तथा उपयोग करने में भी अक्षम होते हैं। वर्तमान औद्योगिक परिवेश में परिवारों का स्वरूप तथा बच्चों के आलम्बन के आधार बदल रहें हैं। ऐसे परिवेश में परिवार का रूप गुणात्मक एवं मात्रात्मक दोनों ही अर्थों में परिवर्तित हो रहा है। परिवार छोटे तथा प्रत्यक्षतः तात्कालिक उपयोगिता के लिए सक्रिय हो रहे हैं। पहले बच्चों का लालन-पालन परिवार के सदस्यों की संख्या अधिक होने तथा उनके क्रियाकलाप का स्वरूप परस्परावलम्बी होने से परिवार में ही हो जाता था। अब सदस्य संख्या की कमी तथा क्रियाकलाप का स्वरूप स्वावलम्बी होने से बच्चे के लालनपालन की अतिरिक्त व्यवस्था की आवश्यकता प्रतीत होने लगी है।

भारत में 14 वर्ष से कम उम्र के बच्चों की संख्या कुल जनसंख्या के 40 प्रतिशत के करीब है। यद्यपि सम्पूर्ण देश की मृत्युदर में पिछले दशक से कुछ कमी आई है लेकिन शिशु मृत्युदर में अपेक्षित कमी नहीं आ पा रही है। अन्य विकसित देशों की तुलना में अभी भी भारत में शिशु मृत्यु दर काफी अधिक है।

भारत में बच्चों की सम्पूर्ण मृत्यु की लगभग आधी संख्या (48.5 प्रतिशत) 0-4 वर्ष के बीच की होती है। लगभग एक तिहाई बच्चों की मृत्यु एक वर्ष पूरा करने के पहले ही हो जाती है। सम्पूर्ण मृत्यु दर का 1/5 वां हिस्सा एक महिना पूरा होने से पहले तथा 1/10 वां हिस्सा का जन्म लेने से पहले सप्ताह में मृत्यु हो जाती है। शिशुओं की यह सम्पूर्ण मृत्युदर विभिन्न राज्यों के अनुसार अलग-अलग है।

उत्तर प्रदेश में शिशु मृत्युदर 10.7 प्रतिशत है तो केरल में इसका प्रतिशत 6.2 प्रतिशत है। सन 1991 के रजिस्ट्रार जनरल के एक सर्वेक्षण के अनुसार ग्रामीण क्षेत्रों में 75 प्रतिशत प्रसव अप्रशिक्षित चिकित्सा कर्मियों एवं परम्परागत दाइयों द्वारा सम्पन्न कराया गया जबकि नगरीय क्षेत्रों में मात्र 33 प्रतिशत प्रसव सम्पादित हुए। बच्चों की मृत्यु के कारणों के अंतर्गत 1-4 वर्ष के बच्चों मं 25 प्रतिशत बुखार से, 23 प्रतिशत श्वसन सम्बन्धी बीमारियों से, पेट सम्बन्धी बीमारियों से 22 प्रतिशत तथा अधिकांश बच्चों की मृत्यु-निमोनियां, पेचिस, (डिसेन्ट्री) अतिसार

फोटो : ओम मिश्रा

(डायरिया) और शीतज्वर (इन्फ्लनुएंजा) से होती है। बच्चों की इस मृत्यु पर निम्नलिखित कारकों का प्रभाव पड़ता है।

तालिका-1

शिशु मृत्युदर महिला साक्षरतादर, जन्म दर और कुछ राज्यों में प्रति दिन लिए जाने वाले भोजन में कैलोरी की मात्रा का विवरण

राज्य	शिशु मृत्युदर प्रति 10000 जन्म पर	महिला साक्षरता दर	जन्मदर प्रति 10000 जन संख्या	भोज्य कैलोरी
मध्य प्रदेश	97	28.9	30.6	2614
गुजरात	64	48.6	25.3	2375
आन्ध्र प्रदेश	66	32.7	22.3	2340
तमिलनाडु	53	51.3	18.9	1871
केरल	16	86.2	18.2	2140
महाराष्ट्र	49	52.3	22.3	2211
कर्नाटक	62	44.3	22.7	2431

स्रोतः नेशनल फैमिली हेल्थ सर्वे

जैवकीय कारण

बच्चे का जन्म के समय वजन– जन्म के समय बच्चे का कम वजन (2.5 किग्रा.) तथा अधिक वजन (4 किग्रा.) दोनों मृत्यु का खतरा उत्पन्न करते हैं। 1 कि.ग्रा. वजन के बच्चे जन्म लेते ही मर जाते हैं। कम वजन के बच्चे पैदा होने का प्रमुख कारण मां का गर्भावस्था के दौरान खानपान की खराब स्थिति का होना है। निम्नलिखित तालिका में कुछ प्रमुख राज्यों की शिशु मृत्युदर, महिलाओं की साक्षरता की स्थिति, जन्मदर तथा औषत प्रतिदिन भोजन में कैलोरी की मात्रा को दर्शाया गया है। जिसमें विभिन्न राज्यों में खानपान की स्थितियों का आंकलन किया गया है।

इस तालिका से यह स्पष्ट हो रहा है कि केरल राज्य ने सामाजिक विकास के कुछ निश्चित उपायों में अन्य राज्यों से काफी आगे बढ़ गया है। इस राज्य में सबसे कम बाल मृत्युदर है, सबसे कम जन्मदर है और उच्च साक्षरता दर है।

- ★ माता की आयु– मां की उम्र का बच्चे के भाग्य के साथ गहरा सम्बन्ध है। मां की उम्र 19 वर्ष से कम तथा 30 वर्ष से अधिक होने पर बच्चे की मृत्यु दर अधिक होती है। कम उम्र की महिला अपेक्षाकृत गरीब एवं कम शिक्षित होती है।
- ★ जन्म क्रम– इस क्रम में उच्च मृत्युदर प्रथम प्रसव के दौरान ही पाई जाती है। दूसरे प्रसव के समय शिशु मृत्युदर कम पाई गई है। तीसरे प्रसव के बाद शिशु मृत्युदर क्रमशः बढ़ने लगती है। 5वें शिशु का भाग्य तीसरे शिशु से काफी खराब हो जाता है। पोषक तत्वों की कमी के कारण प्रथम तीन शिशुओं की तुलना में 4 थे एवं 5वें शिशुओं के मरने के अबवसर 4–5 गुने अधिक हो जाते हैं। कहने का तात्पर्य यह कि जितने अधिक बच्चे होंगे उनमें जीवित रहने की अवधि कम हो जाती है।
- ★ जन्म अंतराल– बार बार गर्भधारण करने का शिशु के मृत्युदर पर अध्यधिक प्रभाव पड़ता है। इसके परिणाम स्वरूप मां को कुपोषण तथा रक्ताल्पता का शिकार होना पड़ता है और फिर कम भार का शिशु पैदा होता है। यदि मां पुनः जल्दी गर्भवती हो जाती है और उसके छोटे बच्चे को शीघ्र स्तनपान कराना बंद कर दिया जाता है तो उस बच्चे में (1) प्रोटीन की कमी (2) डायरिया एवं निर्जलीकरण की प्रवृत्ति पैदा हो जाती है जिसके कारण बच्चे की मृत्युदर की सम्भावना बढ़ जाती है। डा. खन्ना ने एक अध्ययन में बताया है कि जो बच्चे एक वर्ष के अंतराल पर पैदा होते हैं उनमें 3 या 4 वर्ष के अंतराल पर पैदा होने वाले बच्चों की तुलना में मृत्युदर अधिक होती है। इससे यह स्पष्ट होता है कि दो बच्चों के बीच का अंतराल जितना अधिक होगा उनमें जीवित रहने की संभावना उतनी ही अधिक हो सकती है।
- ★ एक से अधिक पैदाइश– प्रायः ऐसा पाया गया है कि एक से अधिक बच्चे एक साथ पैदा होने पर उनका वजन कम रहता है और ऐसे बच्चों के जीवित रहन की संभावना काफी क्षीण हो जाती है।
- ★ परिवार का आकार– अध्ययनों से यह ज्ञात होता है कि परिवार का आकार बड़ा होने से शिशु की मृत्युदर बढ़ जाती है। ऐसे परिवारों के बच्चों में कई संक्रमण सम्बन्धी बीमारियां, कुपोषण, डायरिया तथा गंभीर श्वसन सम्बन्धी बीमारियां अधिक पाई जाती है जो उनके स्वास्थ्य को प्रभावित करती हैं।

तालिका–2

कुछ चुने हुए देशों में प्रति 1000 की आबादी पर शिशु मृत्युदर–(वर्ष 2003 में)

देश	(प्रति 1000 पर शिशुमृत्युदर)
स्वीडन	3
स्विट्जरलैंड	4
फ्रांस	4
न्यूजीलैंड	8
यूएसए	6
यूके	5
जापान	68
श्रीलंका	14
बंग्लादेश	75

स्रोतः राष्ट्रीय परिवार स्वास्थ्य सर्वे तथा आफिस आफ रजिस्ट्रार जनरल आफ इंडिया–2003

बड़े परिवारों के बच्चों में इन बीमारियों की समयावधि और तीव्रता में भी वृद्धि देखी जाती है। एक अध्ययन के अनुसार जिन परिवारों में तीन से अधिक बच्चे हैं उनके बच्चों में बीमारियों की अवधि अपेक्षाकृत अधिक पाई गई है। ऐसे परिवारों के बच्चों के प्रति मां के देखभाल में काफी गिरावट देखी जाती है। यदि परिवार में बच्चे कम होंगे तो उन्हें मां की अच्छी देखभाल मिलेगी, परिवार के संसाधनों का अच्छा उपयोग कर सकेंगे और मृत्युदर कम हो जायेगी।

उपरोक्त तालिका से यह स्पष्ट है कि मात्र बांग्लादेश को छोड़कर अन्य सभी देशों की तुलना में भारत में शिशु मृत्युदर काफी अधिक है।

- ★ उच्च जनन क्षमता–जनन क्षमता का बच्चों के स्वास्थ्य एवं मृत्युदर पर गहरा प्रभाव पड़ता है। जितनी अधिक जनन क्षमता होगी उतनी ही मृत्युदर भी अधिक होगी।

आर्थिक कारक

आर्थिक कारक शिशुमृत्युदर को प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष दोनों तरह से प्रभावित करता है। स्वास्थ्य सुविधाओं की गुणवत्ता व उपलब्धता तथा बच्चे को मिलने वाला प्राकृतिक पर्यावरण दोनों का ही आर्थिक स्थिति से गहरा सम्बन्ध होता है। विभिन्न अध्ययनों एवं सांख्यिकीय आंकड़ों से यह ज्ञात होता है कि मलिन बस्तियों में रहने वाले बच्चों में मृत्युदर अधिक होती है। स्वास्थ्य की बेहतर स्थिति को बनाये रखने व शिशु मृत्युदर को कम करने के लिए निरन्तर सामाजिक आर्थिक विकास एवं अच्छी स्वास्थ्य सुविधाओं की आवश्यकता है।

सामाजिक एवं सांस्कृतिक कारक

- ★ स्तनपान शिशु के अच्छे स्वास्थ्य के लिए स्तनपान कराना अत्यन्त आवश्यक है। मां का दूध शिशु के लिए अमृत के समान है। यह न केवल शिशु को स्वस्थ्य ही रखना है वरन् इसमें बीमारियों से लड़ने की क्षमता भी विकसित करता है। बहुत शीघ्र स्तनपान छुड़ा देने एवं बोतल द्वारा बच्चे को दुग्धपान कराने की आदत से बच्चे के स्वास्थ्य की स्थिति में गिरावट आ जाती है तथा उसे कई बीमारियों का शिकार होना पड़ता है जो अंततः उसकी मृत्यु का कारण बनता है।

★ धर्म और जाति– व्यक्तियों के सामाजिक एवं सांस्कृतिक रहन सहन का भी शिशु के पालन पोषण पर प्रभाव पड़ता है। यथा पुरानी आदतें, प्रथायें, रूढ़ियां रीतिरिवाज आदि शिशु की सफाई, खाने पीने एवं वस्त्र पहनने, देखभाल करने तथा विभिन्न दैनिक क्रियाकलापों पर प्रभाव डालती है।

★ कम उम्र में विवाह– कम आयु में गर्भधारण करने से जन्म से पूर्व एवं जन्म के बाद के शिशुओं को मृत्यु की संभावना काफी बढ़ जाती है।

★ बच्चे का लिंग– भारत के अधिकांश भागों में बालकों की अपेक्षा बालिकाओं के पालन पोषण में भेदभाव किया जाता है। यह उन परिवारों में और भी अधिक देखा जाता है जहां पहले से ही लड़कियों की बहुलता होती है। बहुत से परिवारों में बालिकाओं के जन्म लेने पर मातम मनाया जाता है। साख्यिकीय आंकड़े यह बताते हैं कि बालकों की अपेक्षा बालिकाओं की मृत्युदर अधिक है।

★ मातृत्व का गुण–बच्चे की देखभाल की कला को जानना आवश्यक है। अत्यधिक गरीबी की दशा में भी यदि मां को बच्चे के पालन पोषण की अच्छी कला ज्ञात हो तो वह बच्चा जीवित रह सकता है।

मां की शिक्षा– स्वास्थ्य सुधार की दिशा में अशिक्षा सबसे बड़ी बाधक है। एक ही सामाजिक आर्थिक स्थिति में मां की शिक्षा बच्चे के स्वास्थ्य के लिए प्रमुख निर्धारक तत्व के रूप में मानी जाती है। केरल राज्य का उदाहरण इस संदर्भ में आसानी से दिया जा सकता है जहां शिक्षा का स्तर ऊंचा होने के कारण शिशु मृत्युदरों में अन्य राज्यों की अपेक्षा काफी कमी देखी जा सकती है। शिक्षित महिलायें देर से विवाह करती हैं और देर से बच्चा पैदा करने का प्रयास करती हैं। ये महिलायें मुख्यत: कम बच्चे पैदा करती है और दो बच्चों के बीच काफी अन्तराल रखती हैं।

स्वास्थ्य सुविधाओं की गुणवत्ता– शिशु की मृत्यु दर को बढ़ावा देने में प्रसवपूर्व की अपर्याप्त देखभाल तथा प्रसव के दौरान शीघ्र अच्छी चिकित्सकीय सुविधाओं का उपलब्ध न होना भी प्रमुख कारक हैं। ग्रामीण क्षेत्रों में प्रशिक्षित कुशल दाइयों का अभाव तथा अप्रशिक्षित चिकित्सा कर्मी शिशु मृत्यु दर को बढ़ाने में सहायक बन जाते हैं। एक सर्वेक्षण के अनुसार ग्रामीण क्षेत्रों में लगभग 48 प्रतिशत प्रसव अप्रशिक्षित दाइयों द्वारा सम्पादित किये जाते हैं।

पारिवारिक विखण्डन– जिन परिवारों में माता या पिता की मृत्यु हो गई हो या वे एक दूसरे से अलग हो गये हो या पति–पत्नी में परित्याग हो गया हो अथवा तलाक ले लिया हो उन परिवारों में शिशु मृत्यु दर अधिक मिलती है।

अवैधानिक संतान– ऐसी संतान जो अवैध यौन संबंधों के कारण जन्म लेती है उनमें मृत्यु दर अधिक देखी गई है क्योंकि ये बच्चे प्राय: मातापिता दोनों द्वारा निराद्रित होते हैं साथ ही समाज भी उन्हें हेय दृष्टि से देखता है अत: इनका पालन पोषण समुचित ढंग से न हो पाने के कारण, ये कई तरह के कुपोषण एवं आवश्यक चिकित्सकीय सुविधाओं से वंचित रह जाते हैं। परिणामस्वरूप इनका स्वास्थ्य खराब हो जाता है और ये मृत्यु के शिकार बन जाते हैं।

अमानवीय आदतें एवं रीतियां– बहुत सी सामाजिक बुराइयों एवं अंधविश्वासों का परम्परागत तरीकों से पालन करने के कारण शिशुओं की मृत्युदर में वृद्धि हो रही है। यथा शिशु को मां के कोलेस्ट्रम से वंचित कर देना, उसके शरीर को दागना उसके नाल पर गोबर का लेप करना, जंग लगे हंसिये का नाल काटने में प्रयोग, शीघ्र स्तनपान छुड़ा देना आदि बच्चे की मृत्यु का कारण बनते हैं।

तालिका–3

भारत	विकसित देश
व्यक्ति की औसत आयु 67 वर्ष	78वर्ष
जन्म लेने वाले 1000 बच्चों में 53 मौतें	मात्र 06 बच्चो की मौत
5 वर्ष से कम उम्र के 1000 बच्चों में 68 मौतें	मात्र 08 बच्चों की मृत्यु
गर्भावस्था में प्रति 1000 महिलाओं में 350 मौतें	मात्र 13 महिलाओं की मृत्यु
प्रति 10 हजार की आबादी पर 8.4 प्रतिशत चिकित्सक उपलब्ध	25.2 प्रतिशत चिकित्सक उपलब्ध
प्रति व्यक्ति प्रतिवर्ष आय 1240 यूएस डाल	2642 यूएस डालर
सरकार द्वारा स्वास्थ्य पर कुल बजट का 1.6 प्रतिशत खर्च	6.3 प्रतिशत खर्च
भोजन में कैलोरी – 2628	3377 कैलोरी
शुद्ध पेयजल 72 प्रतिशत	शत प्रतिशत
शौचालय की व्यवस्था 43 प्रतिशत	शत प्रतिशत
संक्रमण तथा अन्य परोपजीवी रोगों से मरने वालों की संख्या 43 प्रतिशत	12 प्रतिशत

अप्रशिक्षित दाई– ये परम्परागत अप्रशिक्षित दाईयां, अशिक्षित एवं स्वास्थ्य संबंधी नियमों से अनजान होती हैं। इस कारण बच्चे के जन्म लेते ही उसे कई तरह के संक्रमणों का शिकार होना पडता है और फिर वह मृत्यु का कारण बनते हैं।

प्रदूषित वातावरण– जन्म के बाद शिशु बाह्य पर्यावरण से काफी प्रभावित होता है। यथा शुद्ध पेयजल का अभाव, घर का प्रदूषित वातावरण, घर की गंदी नालियों की जल निकासी का कुप्रबंध, अत्यधिक भीड़ और मक्खियां, कीटों एवं मच्छरों का प्रकोप शिशु के स्वास्थ्य को खराब कर देता है और वह मृत्यु का शिकार हो जाता है। इस प्रकार की स्थिति भारत, पाकिस्तान, बांग्लादेश, नेपाल, श्रीलंका, भूटान आदि देशों में ही देखने को मिलती है। यदि हम विकसित देशों से भारत की तुलना स्वास्थ्य के विभिन्न क्षेत्रों में करें तो हमें निम्नलिखित स्थितियां दिखाई देती हैं।

उपरोक्त आंकड़ों को देखने से हम यह मानने को बाध्य हो जाते हैं कि अभी स्वास्थ्य के हर आयामों पर हमें काफी प्रयास करना पड़ेगा तभी हम इन देशों की तुलना में अपने को यथोचित स्थान दिला पायेंगे।

समाधान के उपाय

★ उपरोक्त स्थितियों को देखते हुए हमारा यह कर्त्तव्य हो जाता है कि गर्भावस्था के दौरान मां को इस बात की जानकारी दे कि वह संतुलित आहार ग्रहण करे। संतुलित आहार के बारे में प्राय: लोगों को यह भ्रांति होती है कि यह बहुत महंगा होता है। यह सोच सही नहीं है। वास्तव में साधारण चावल, दाल, रोटी, सब्जी का भोजन पर्याप्त है। साथ में थोड़ा तेल, दूध व मौसमी फल संतुलित भोजन की मांग को पूर्ण कर देते हैं। यदि इस सुझाव को गर्भवती महिला स्वीकार कर ले तो वह (कुपोषण) एवं रक्ताल्पता से बच जायेगी। परिणामस्वरूप बच्चा सामान्य भार का पैदा होगा और स्वस्थ रहेगा। इस प्रकार शिशु मृत्यु की दर को कम

किया जा सकता है। यहां मैं इस बात का उल्लेख करना आवश्यक समझता हूं कि भारत में औसत प्रतिव्यक्ति भोज्य कैलोरी 2628 है जबकि विकसित देशों में यह 3377 कैलोरी है। इससे यह स्पष्ट हो रहा है कि अभी भी हम संतुलित आहार के संदर्भ में विकसित देशों से काफी पिछड़े हुए है। इस संदर्भ में भारत में एकीकृत बाल विकास की सेवा इस क्षेत्र में काफी सक्रिय हैं। हमें अन्य सामाजिक संगठनों एवं स्वैच्छिक संस्थाओं से भी इस कार्य में सहयोग लेना चाहिए।

- दूसरा उत्तरदायित्व मां एवं बच्चे को संक्रमण से बचाना है। भारत वर्ष में बच्चों के मृत्यु का प्रमुख कारण संक्रमण की बीमारी है। बहुतसी बीमारियों को टीकाकरण के माध्यम से रोका जा सकता है। इस संबंध में विश्वव्यापी टीकाकरण अभियान का शुभारंभ 1985 से ही हो गया है। इसका उद्देश्य मां एवं बच्चे को 6 प्रमुख बीमारियों से बचाना तथा उनके जीवन को सुरक्षा प्रदान करना है। यह कार्यजन चेतना पैदा कर सफलतापूर्वक सम्पादित किया जा सकता है।
- शिशु की मृत्युदर को कम करने के लिए स्तनपान सर्वाधिक प्रभावशाली माध्यम है। इसके क्रियान्वयन से गैस्ट्रोइन्टेस्टाइनल तथा रेस्पाइरेटरी संक्रमण से शिशु की रक्षा की जा सकती है।
- हम एक अत्यन्त कम खर्चीली तकनीक का प्रयोग समुदाय में कर सकते हैं। इस संदर्भ में प्रतिमाह एक बार बच्चों का वजन लिया जाना चाहिए और उनकी स्वास्थ्यवृद्धि का चार्ट तैयार करना चाहिए। इस चार्ट से बच्चे में कुपोषण की जानकारी पहले ही हो जायेगी और उसे अच्छी स्वास्थ्य सुविधा उपलब्ध कराई जा सकेगी। अत: इस चार्ट का नियमित उपयोग कर शिशु के स्वास्थ्य को उन्नत बनाया जा सकता है।
- दो बच्चों के जन्म के बीच का अंतराल जितना ही अधिक होगा उतना ही अच्छा मां एवं शिशु का स्वास्थ्य होगा। अत: इस संदर्भ में मां को शिक्षित कर परिवार नियोजन की विधियों के प्रयोग करने की सलाह दी जानी चाहिए।
- बच्चे जिस पर्यावरण में रहते हैं यदि वह प्रदूषण रहित न हो तो उन्हें कई बीमारियों का शिकार हो जाना पड़ता है। इस संदर्भ में प्रदूषित भोजन एवं जल महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। प्रदूषित जल का उपयोग करने से बच्चों में कई तरह की बीमारियां हो जाती हैं इसमें पीलिया प्रमुख बीमारी है। प्रदूषित जल पीने से बीमारियों का सबसे अधिक प्रभाव बच्चे पर पड़ता है। उनका शारीरिक विकास प्रभावित होता है और मृत्यु तक हो जाती है। इसलिए बच्चों को शुद्ध पेयजल उपलब्ध कराना अति आवश्यक है।
- महिलाओं को शिक्षित कर हम बेहतर स्वास्थ्य की कल्पना कर सकते हैं। शिक्षित महिलायें जल्दी गर्भवती नहीं होना चाहिए हैं। वे एक शिशु को जन्म देने के बाद काफी अंतराल के बाद ही दूसरा शिशु पैदा करती हैं। व्यक्तिगत सुचिता एवं स्वास्थ्य का ध्यान रखती हैं। प्रदूषित वातावरण एवं खाद्यपदार्थों व पेयपदार्थों के प्रति सावधान रहती हैं। इनसे अपने बच्चों को भी सुरक्षित रखती हैं। इस संदर्भ में केरल एवं तमिलनाडु राज्य का उदाहरण किया जा सकता है। चूंकि इन राज्यों में महिला साक्षरता दर अन्य राज्यों की तुलना में अधिक है, इस कारण इन राज्यों के बच्चों के पालन-पोषण एवं स्वास्थ्य के स्तर में पर्याप्त सुधार हुआ है।

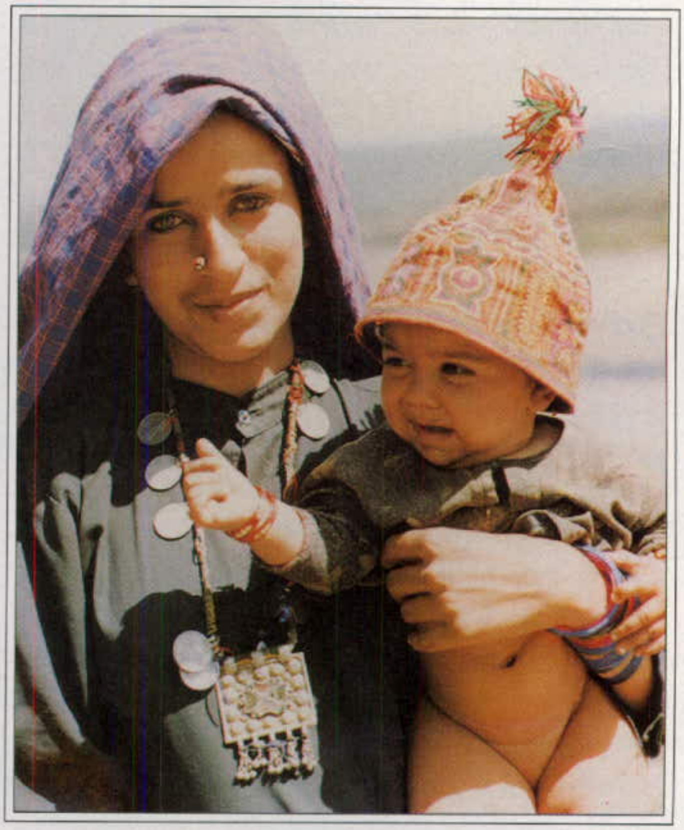

उपरोक्त सभी समस्याओं एवं सुझावों पर एक विहंगम दृष्टि डालने के उपरांत हम इस निष्कर्ष पर पहुंचते हैं कि भारत में अच्छे स्वास्थ्य का पैमाना शारीरिक, मानसिक व आर्थिक स्थिति का सुदृढ़ होना ही माना जाता है जबकि विदेशों में स्थिति इससे काफी भिन्न है। वहां के लोग शुद्ध पेयजल की उपलब्ध, नियोजित विकास, अप्रदूषित वातावरण, उचित मात्रा में भोजन की उपलब्धि, सामाजिक समरसता और भयरहित वातावरण को अच्छे स्वास्थ्य का पैमाना मानते हैं। इंडियन मेडिकल एसोसिएशन के एक पदाधिकारी के मुताबिक डायरिया से पीड़ित व्यक्ति को डाक्टर दवा देकर तो ठीक कर देता है परन्तु उस पानी को शुद्ध नहीं कर पाता जिसके चलते लोग बीमारियों से पीड़ित होते हैं। यद्यपि चिकित्सा के क्षेत्र में नित नये-नये शोध हो रहे हैं परन्तु इस चिकित्सकीय शोध का लाभ केवल सुविधा सम्पन्न लोगों को ही मिल रहा है, गरीब व्यक्ति उससे काफी दूर हो चुका है। दरअसल चिकित्सक चिकित्सा, अस्पताल एवं समाज सेवा यह स्वास्थ्य के बहुत छोटे से अंग हैं। स्वास्थ्य का सीधा सम्बन्ध सामाजिक न्याय से है। समाज में स्वास्थ्य लोगों कही संख्या, सामाजिक समरसता और सामाजिक न्याय को दर्शाता है। मार्डन मेडिसिन पर यह हमेशा आरोप लगता है कि यह बीमारी और दवाओं के जाल में ही फसी रहती है। स्थिति यह है कि जितना धन इस पर खर्च किया जा रहा है वही धनराशि ब स्वस्थ रहने की आधारभूत सुविधाओं पर खर्च होगा तभी देश की सम्पूर्ण आबादी स्वस्थ रह सकेगी। ❐

(लेखक महात्मागांधी काशी विद्यापीठ, वाराणसी के समाजकार्य विभाग में रीडर हैं)

RAU'S IAS

A name that Nation trusts

Amazing Success

Our 2005 Exam Results : Nine positions secured by our students in first 20 and 49 in first 100 with overall 203 total selections. As regards the past achievements, Study Circle has contributed nearly one-third of the total selections done for Civil Services by UPSC since 1953.

It is a well known fact that Rau's is the most trusted and recommended name all over the country for IAS & PCS coaching.

Unbeatable Strategy

Answers that matter : The most crucial fact about coaching is that it should improve the quality of your answers in the minimum possible time. It is precisely this training on which we focus on at Rau's to give an extra edge to the answers you give / write in the Civil Services Examination.

Be Sure

We have no branches or associates any where in India except Jaipur. Our name which has become a legend among students for the highest standards in teaching, and hence has been copied by a lot of people across India, but no one can match our quality.

Programme Highlights

Civil Services/PCS Exam - 2007 & Judicial Services Exam - 2007

- Personal Guidance (English Medium) is available for -
  General Studies/ Essay, History, Sociology, Public Administration, Geography, Psychology, Law & Commerce.
- पर्सनल गाइडेंस (हिन्दी माध्यम) -
  सामान्य अध्ययन / निबंध, इतिहास, भूगोल, समाजशास्त्र एवं लोक प्रशासन में उपलब्ध।
- Postal Guidance in English Medium available for -
  General Studies, History, Sociology, Public Administration and Geography.
- पोस्टल गाइडेंस (हिन्दी माध्यम) -
  केवल सामान्य अध्ययन, भारतीय इतिहास एवं भूगोल में उपलब्ध।
- Hostel facility arranged.

कोई भी लक्ष्य बड़ा नहीं ।
जीता वही जो डरा नहीं ।।

If you are taught by the stars, sky is the limit.

New batches for 2007 Exam, start from 27th October, 2006

Admission Open, Apply Now.

Contact personally or write for prospectus with a DD/MO for Rs. 50/- favouring

RAU'S IAS STUDY CIRCLE

Head Office : 309, Kanchanjunga Bldg., 18, Barakhamba Road, Connaught Place, New Delhi-110001
Phone : 23738906-07, 23318135-36, 32448880-81, 65391202, Fax: 23317153

Jaipur Centre : 701, Apex Mall, Lal Kothi, Tonk Road, Jaipur - 302015, Ph.: 0141-6450676, 3226167, 9351528027

For full details on fast-track log-on our website: www.rauias.com

The Original Rau's / Rao's - Since 1953

KH-11/06/01

आर. एन./708/57
डाक-तार पंजीकरण संख्या : डी.एल. (एस)-05/3164/2006-08
आई.एस.एस.एन. 0971-8451, पूर्व भुगतान के बिना आर.एम.एस.
दिल्ली में डाक में डालने के लिए लाइसेंस : यू (डी.एन.)-55/2006-08

R.N./708/57
P&T Regd. No. DL (S)-05/3164/2006-08
ISSN 0971-8451, Licenced under U (DN)-55/2006-08
to Post without pre -payment at R.M.S. Delhi.

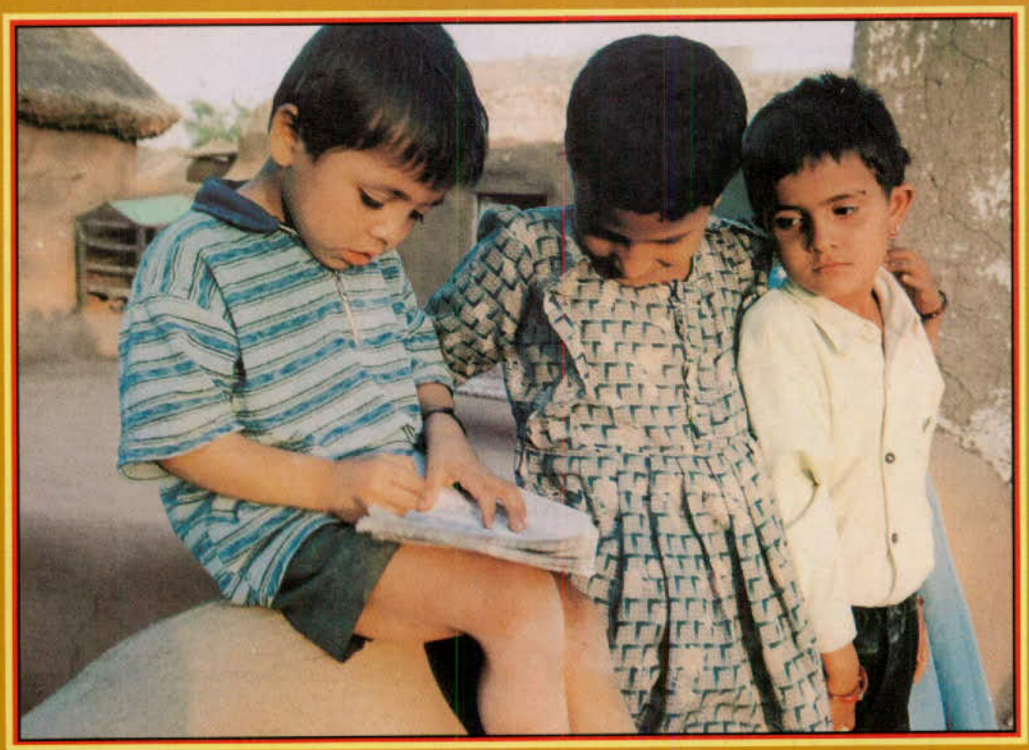

प्रकाशक और मुद्रक : वीना जैन, निदेशक, प्रकाशन विभाग, सूचना भवन, सीजीओ कॉम्पलेक्स, लोदी रोड, नई दिल्ली-110003.
मुद्रक : अरावली प्रिंटर्स एण्ड पब्लिशर्स प्रा. लि., डब्ल्यू-30 ओखला इंडस्ट्रियल एरिया-II, नई दिल्ली-110 020 : संपादक : स्नेह राय